# यूनियन सृजन

वर्ष – 5, अंक – 3 : जुलाई–सितंबर, 2020 मुंबई

## बचपन विशेषांक

यूनियन बैंक ऑफ इंडिया
Union Bank of India
भारत सरकार का उपक्रम
A Government of India Undertaking
कार्पोरेशन Corporation

# यूनियन सृजन

प्रकाशन तिथि: 12.11.2020

यूनियन बैंक ऑफ इंडिया की तिमाही हिंदी पत्रिका
वर्ष - 5, अंक - 3 जुलाई-सितंबर 2020



**संरक्षक**
**राजकिरण रै जी.**
प्रबंध निदेशक एवं सीईओ

**प्रधान संपादक**
**व्रजेश्वर शर्मा**
मुख्य महाप्रबंधक (मा.सं.)

**कार्यकारी संपादक**
**अम्बरीष कुमार**
उप महाप्रबंधक

**संपादक**
**डॉ. सुलभा कोरे**
मुख्य प्रबंधक (राजभाषा)

**संपादक मंडल**
**अशोक चंद्र**
मुख्य महाप्रबंधक

**वी. वी. टेम्भूर्णे**
महाप्रबंधक

**नवल किशोर दीक्षित**
सहायक महाप्रबंधक



**राजभाषा कार्यान्वयन प्रभाग**
यूनियन बैंक ऑफ इंडिया, केंद्रीय कार्यालय, मुंबई
द्वारा आंतरिक परिचालन हेतु प्रकाशित
ई-मेल: sulabhakore@unionbankofindia.com
9820468919, 022 - 22896595
यूनियन बैंक ऑफ इंडिया के लिए डॉ. सुलभा कोरे, मुख्य प्रबंधक (राजभाषा), राजभाषा कार्यान्वयन प्रभाग, केंद्रीय कार्यालय, 239, विधान भवन मार्ग, नरीमन पॉइंट, मुंबई - 400 021 द्वारा संपादित एवं प्रकाशित तथा जयंत प्रिन्टरी एलएलपी, मुंबई-2 द्वारा मुद्रित.
संपादक - डॉ. सुलभा कोरे



**इस पत्रिका में प्रकाशित विचार लेखकों के अपने हैं. प्रबंधन का इनसे सहमत होना आवश्यक नहीं है.**

यूनियन बैंक ऑफ इंडिया Union Bank of India


## अनुक्रमणिका


- परिदृश्य .......... 3
- संपादकीय .......... 4
- क्या है बचपन .......... 5-8
- बालसाहित्य और बचपन .......... 9
- साहित्य सृजन .......... 10-11
- काव्य सृजन .......... 12-13
- बचपन के खेल .......... 14
- कोई लौटा दे .......... 15
- संस्कार और बचपन .......... 16-18
- दादा-दादी/नाना-नानी के साथ बचपन .......... 19-20
- विशेष साक्षात्कार - बालेंदु शर्मा .......... 21-23
- बचपन कल से आज तक .......... 24
- बचपन आज का .......... 25
- शिक्षा और बचपन .......... 26-27
- बचपन, व्यक्तित्व का निर्माता .......... 28-29
- राजभाषा पुरस्कार .......... 30-31
- हिंदी दिवस आयोजन .......... 32-33
- सेंटर स्पेड-मुन्नार .......... 34-35
- यात्रा सृजन-चार धाम .......... 36-37
- क्यों अपराधी बन जाते हैं, बच्चे .......... 38-39
- आधुनिकता के साथ .......... 40-43
- स्क्रीन के साथ चिपका हुआ बचपन .......... 44-48
- संस्मरण .......... 49
- कहानियों के साथ बचपन .......... 50-51
- आज/कल के बच्चे .......... 52-53
- यादों में बचपन .......... 54-58
- आश्रमों का विभाजन .......... 59-61
- बचपन के सपनें .......... 62-63
- राजभाषा समाचार .......... 64-65
- आयुष्मान भव: .......... 66
- आपकी नजर में .......... 67



Designed & Printed at
Jayant Printery LLP, 352/54, Girgaum Road, Murlidhar Compound,
Near Thakurdwar Post Office, Mumbai-2. Tel.: 4366 71 71

# परिदृश्य

प्रिय यूनियनाइट्स

**इं**सान की ज़िंदगी में तीन महत्वपूर्ण अवस्थाएं होती हैं: बचपन, जवानी और बुढ़ापा. हमारे शास्त्र कहते हैं, मानव जीवन के आयु आधारित चार आश्रम होते हैं, ब्रम्हचर्य, गृहस्थ, वानप्रस्थ और संन्यास! वर्तमान परिप्रेक्ष्य में ये चारों आश्रम स्पष्ट रूप से दृष्टिगोचर नहीं होते हैं लेकिन कुछ हद तक स्थितियाँ उनके नजदीक पहुंचती हैं. हमारा बचपन, ब्रम्हचर्याश्रम में आता है. हमारा जन्म, समय के साथ हमारा बढ़ना, बोलना, खेलना, चलना फिर प्रारंभिक स्कूली जीवन, ये सब बातें हमारे बचपन के साथ जुड़ी हैं. यह बचपन बड़ी अनूठी चीज़ होती है. जब यह हमारे साथ होती है, हमें इसकी अहमियत का पता नहीं चलता. हालांकि उस उम्र में यह समझने की समझ भी नहीं होती है. लेकिन जैसे-जैसे यह बचपन हमारे हाथों से छूटने लगता है, हम उसे पकड़ने की कोशिश करते हैं. वैसे प्राकृतिक सत्य यही है कि बीता हुआ समय वापस नहीं आता और ना ही समय कभी थमता है. परिणाम यह होता है कि जीवन का बहुमूल्य और आनंदपूर्ण समय जिसे हम बचपन कहते हैं, उसका ज्ञान ही हमें उसके बीतने के बाद होता है. हाँ, उसकी स्मृतियाँ हमारे साथ बनी रहती हैं और उन्हीं स्मृतियों के संग अपनी कल्पनाओं के मेल से हम अपने बचपन को आभासी रूप से सृजित कर पाने में सक्षम होते हैं.

'यूनियन सृजन' का यह 'बचपन विशेषांक' बचपन की उन्हीं यादों को संजोकर लाया है. ये यादें आपको अपने बचपन की याद दिलाएंगी. इस अंक के जरिए आप अपने बचपन की वादियों में निश्चित रूप से घूमकर आएंगे. बैंकिंग की इस आपाधापी में 'यूनियन सृजन' का यह अंक आपके होठों पर मुस्कान लाने के साथ-साथ आपको नोस्टाल्जिक करेगा, इसका मुझे विश्वास है.

हाल ही में 'यूनियन सृजन' ने एक बेहतरीन उपलब्धि हासिल की है. इसे गृह मंत्रालय, भारत सरकार द्वारा उत्कृष्ट पत्रिका के सम्मान के रूप में 'कीर्ति पुरस्कार' प्रदान किया गया है. सालों बाद 'यूनियन सृजन' ने यह खुशी अपने पाठकों और बैंक को दी है. जिसके लिए आप सभी बधाई के पात्र हैं. आप सभी का हार्दिक अभिनंदन!

साथियो, उम्र के साथ हमारी परिपक्वता बढ़ती है लेकिन इस बढ़ती उम्र में भी अपने बचपने को हरदम साथ रखना, जोकि आपकी ज़िंदगी को और दिलचस्प बनाएगा.

शुभकामनाओं के साथ,

आपका

राजकिरण रै जी

**(राजकिरण रै जी.)**
प्रबंध निदेशक एवं सीईओ

# संपादकीय

साथियो,

बचपन, एक सुनहरा सपना. यह सपना हर कोई देखता है लेकिन जिस तरह नींद खुलते ही, सपना खत्म हो जाता है ठीक उसी तरह जिंदगी को मिला यह बचपन नामक सपना, बहुत जल्दी बीत जाता है. वह उन्मुक्त, बेखौफ-बेलौस हँसना, खिलखिलाना, छोटे खेल, खिलौनों के साथ खुश होना, कीचड़-पानी में खेलना, स्कूल जाना, रूठना, मनाना और रोना, कितनी ही यादें हैं जो बचपन के साथ जुड़ी हुई होती हैं लेकिन फिर हम बड़े हो जाते हैं. शिक्षा, कैरियर , परिवार और जिम्मेदारियों के बोझ से हमारे कंधे झुक जाते हैं और वक्त भी जवानी का लालच देकर हमसे हमारा बचपन छीनकर हमसे बहुत बड़ा घाटे का सौदा करता है.

*अजीब सौदागर है, यह वक्त भी*
*जवानी का लालच दे कर बचपन ले गया...*

हम बड़े हो जाते हैं. जिम्मेदारियाँ, संघर्ष, जद्दोजहद का नया सिलसिला शुरू हो जाता है और साथ ही तेजी से बचपन खोने लगता है. यह बात नई नहीं है, सदियों से यह होता आया है लेकिन अमूल्य धरोहर के खोने का दर्द भी तो होता है.

जैसे ही पढ़ाई पूरी हो जाती है, नौकरी-व्यवसाय, फिर शादी...परिवार की शुरुआत, परिवार की जिम्मेदारियाँ और हम बचपन के साथ बचपना भी खोते जाते हैं.

इस खोते जाने वाले बचपन को हमने आपके ही अनुभवों के आधार पर यूनियन सृजन के इस अंक में समेटने की कोशिश की है. यह अंक यानि आपका बचपन, बचपन की यादें और इसके प्रति आपका नजरिया इन सब बातों को समेटता हुआ आपको यह भी बताता है कि उम्र सिर्फ एक आंकड़ा है और उम्र के साथ आंकड़ा बढ़ता ही जाएगा जबकि बचपन मानसिकता है, जिसे बचाकर रखिए. इस मानसिकता को बढ़ती हुई उम्र के साथ जिंदा रखिए.

आपको यह अंक कैसा लगा, हम जानना चाहेंगे. आपकी राय/प्रतिक्रिया का हमें इंतजार रहेगा.

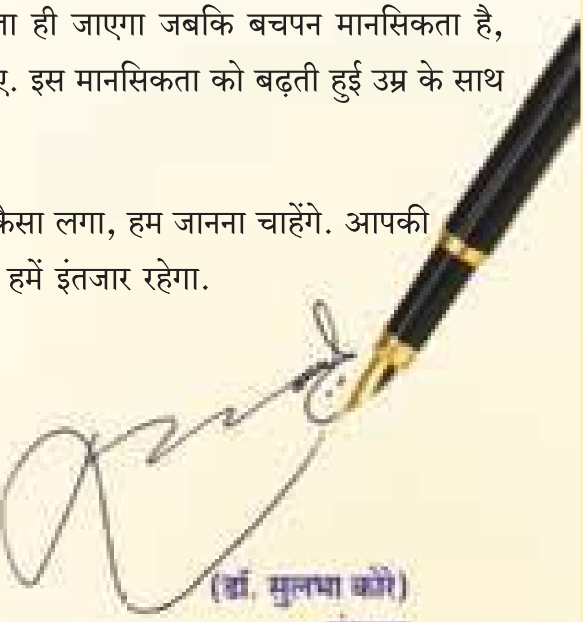

(डॉ. सुलभा कोरे)
संपादक

# क्या है बचपन ?

**चिं**ता रहित खेलना, खाना, वह फिरना निर्भय स्वच्छंद
कैसे भूला जा सकता है बचपन का अतुलित आनंद?
ऊँच नीच का ज्ञान नहीं था, छुआछूत किसने जानी ?
बनी हुई थी वहाँ झोपड़ी और चीथड़ों में रानी..

हिंदी की प्रसिद्ध कवियित्री सुभद्रा कुमारी चौहान द्वारा रचित 'मेरा नया बचपन' कविता से ली गई ये पंक्तियाँ, जीवन के इस अमूल्य पड़ाव 'बचपन के आनंद' का उल्लेख कर मन को छू जाती है. बचपन के स्मरण मात्र से ही हम अपने आप को एक अलग दुनिया में पाते हैं. एक ऐसा संसार जहाँ हर कोई अपने आप को स्वच्छंद, बेपरवाह महसूस करता है. इस समय सामाजिक नियमों का बंधन नहीं होता. मनुष्य की यही बेपरवाही उसे निडर बनाती है और वह अपनी निडर कल्पना के सहारे निराकार को साकार करने की क्षमता रखता है. वह कल्पना के सहारे चाँद को पाने की चाहत रखता है, तितलियों का रंगबिरंगापन देखकर वह अपने जीवन में खुशियों के रंग को महसूस करता है और जीवन का औत्सुक्य उसे परिपक्वता प्रदान करवाता है. बचपन के इसी आनंद के चलते हर इंसान बचपन गुज़र जाने के बाद जीवन के इस पड़ाव में वापस आना चाहता है.

अगर इंटरनेट पर उपलब्ध मुक्त ज्ञान कोश-विकीपीडिया की मानें तो बचपन, जन्म से लेकर किशोरावस्था तक के आयु काल को कहते हैं. परन्तु जितनी उत्सुकता बचपन में मनुष्य के मन में होती है, उतनी ही उत्सुकता की आवश्यकता है जीवन के इस पड़ाव को समझने के लिए! बचपन क्या है? इस प्रश्न का आदर्श उत्तर दे पाना संभव नहीं है, क्योंकि ऐसे देखा जाए तो बचपन स्वच्छन्द कल्पना की उड़ान है, उत्सुकता का महासागर है, कोमलता का पर्याय है, सच्चे मन का प्रतीक है. परंतु बचपन को परिभाषा की सीमा में बाँधना संभव नहीं है. अनुभव के आधार पर समझना चाहें तो कुछ यूं कहा जा सकता है-

**एहसासों से सीखने का नामः-** बचपन जीवन का वह पड़ाव होता है, जब मनुष्य किसी के कहे या पढ़े-लिखे से ज़्यादा स्वयं देखकर और महसूस कर अधिक सीखता है और बाद में उसके यही अनुभव, उसके जीवन का सिद्धांत बनते हैं और उस व्यक्ति की अलग पहचान बनाते हैं. जीवन के इस पड़ाव में अपने इर्द-गिर्द घटित हो रही घटनाओं से अनुभव लेकर संसार में घुलते जाना और उदाहरण देखकर जो सही लगे उसे अपने व्यवहार में अपना लेना, क्रमशः चलता रहता है. इस प्रक्रिया में सीखने के अवसर उपलब्ध कराने का दायित्व माता - पिता और परिवार के अन्य वरिष्ठ जनों का होता है. यही कारण है कि संयुक्त परिवार में पलना-बढ़ना बच्चों में संस्कार की दृष्टि से बहुत महत्वपूर्ण होता है.

घर का वातावरण एवं घर के लोगों के बर्ताव का बच्चों के विकास से बहुत गहरा संबंध होता है. वह बच्चों की जीवन की दिशा तय करता है. प्रेमपूर्ण वातावरण से बच्चे में सकारात्मक दृष्टिकोण का विकास होता है. परंतु इसके विपरीत वातावरण मिलने से बच्चे के मन में नकारात्मक विचार आने लगते हैं एवं बच्चे मानसिक रूप से कमज़ोर हो जाते हैं.

**पल-पल की पाठशाला है:-**

**तुम औत्सुक्य की अविराम यात्रा हो,**
**पहचानते हो, ढूढ़ते हो रंग-बिरंगापन**
**क्योंकि सब कुछ नया लगता है तुम्हें .**

हर पल नया सीखते रहना बचपन की विशेषता है. धूल में खेलते हुए किसी दिन मिट्टी में दबा दिए, किसी बीज में अंकुर फूटते देख और धीरे-धीरे उसे पौधा और वृक्ष बनते देख, बचपन में ही धरती के उर्वरक गुण की पहचान हो जाती है. हो सकता है, उस वक्त की समझ में वैज्ञानिक दृष्टिकोण का अभाव हो लेकिन मिट्टी के गुणों को स्वयं इस प्रकार पहचान लेने से प्रकृति से जो लगाव मन में उत्पन्न होता है वह जीवन पर्यंत कायम रहता है. बच्चा कभी छुई मुई को बार-बार छूकर कोमलता को समझता है तो कभी रेत के घरौंदे बनाकर तिनका-तिनका जोड़ उसे सीपियों से सजाता है और सलीके से अपनी कल्पना को आकार देता है, इस प्रकार वह अपनी मेहनत एवं कल्पनाशीलता से निर्माण का पाठ पढ़ता है. तड़के मुंडेर पर चिड़ियों के झुण्ड को देखने के लिए बिना किसी अलार्म के उठ जाना और चिड़ियों के आने की प्रतीक्षा करना; समय की पाबंदी एवं दृढ़ निश्चय का पाठ, बचपन की पाठशाला के अलावा और कहाँ मिलेगा भला?

बच्चे अब प्रकृति के बीच कम और कृत्रिम साधनों की बीच अधिक समय बिताते हैं. ऐसी स्थिति में बच्चे खुद से सीखने के बजाए इंटरनेट पर उपलब्ध ज्ञान सामग्री पर निर्भर होते जा रहे हैं. बच्चों में खुद से सीखने, समझने की क्षमता बनाए रखने और विचारशीलता को बनाए रखने के लिए माता-पिता का उत्तरदायित्व अब बढ़ गया है. विशेषकर एकल परिवार में

पल रहे बच्चों के लिए यह अति आवश्यक है कि माता-पिता अपने बच्चों को अधिक से अधिक समय दें, उनकी जिज्ञासा से उत्पन्न हर प्रश्न का समुचित उत्तर दें और सीखने के नए-नए अवसर उत्पन्न कराएं.

**कोमलता का पर्याय है:-** बचपन की कोमलता को अक्सर कच्ची मिट्टी का नाम दिया जाता है. बचपन में बुद्धि एवं विचारशीलता को जो आकार मिल जाए, वह जीवन भर बना रहता है. यह समय मासूमियत में की गई गलतियों का होता है और इन गलतियों से ली गई सीख अनुभव प्रदान करती है जो आगे के जीवन में हमें जोखिम उठाने की शक्ति प्रदान करती है. बच्चे के सम्पूर्ण विकास के लिये उसे बे रोक-टोक गलतियाँ करने देना भी आवश्यक है. ताकि बचपन की मासूमियत में की गई छोटी-मोटी गलतियाँ भविष्य की बड़ी गलतियों के जोखिम से उसे बचा सकें.

बाल्यकाल के ये सभी गुण देश, काल और परिस्थितियों से परे हैं, परंतु वर्तमान में बच्चों का प्रकृति से सम्पर्क कम है. बच्चे अब धूल मिट्टी, पेड़-पौधों, हवा पानी, पशु-पक्षी के बीच कम और घर की चार दीवारी में मशीनी साधनों के साथ अधिक समय व्यतीत कर रहे हैं. आजकल इंटरनेट पर ज्ञान सामग्री अथाह रूप में उपलब्ध है, खोज का बटन दबाते ही उत्तर के अनेकों विकल्प उपलब्ध हो जाते हैं, परंतु ज्ञान के ऐसे माध्यमों पर अधिक निर्भरता बच्चों की अपनी विचारशीलता एवं कल्पनाशीलता पर सीधा प्रहार कर सकती है. बाज़ार का भी प्रभाव बच्चों पर अधिक है, बच्चों को व्यस्त रखने में जो भूमिका माता-पिता और परिवार की होती थी, वही अब बाज़ार से जुटाए संसाधन निभा रहे हैं. माता-पिता को चाहिये कि वे अपने बच्चों के साथ पर्याप्त समय व्यतीत करें, बच्चों को खुद से सीखने के अवसर प्रदान करवाएं. जितना हो सके बच्चों के विकास में कृत्रिम संसाधनों एवं बाज़ार के हस्तक्षेप को कम करें. ताकि भविष्य में हर बच्चा बचपन के सुनहरे समय को याद रखे एवं दुनिया की किसी भी दौलत के बदले बचपन को वापस पाना चाहे. जैसा कि कवि पीयूष मिश्रा जी ने कहा है...

**"अभी कुछ गुज़रा है लापरवाह धूल में दौड़ता हुआ,**
**जरा पलट के देखूं तो बचपन था शायद"**

आरती शर्मा
क्षे.म.प्र.का., भोपाल

वहां किताबों के ढेर के नीचे मैंने किसी को कराहते सुना. मैंने पूछा कौन है वहां? कोई उत्तर तो नहीं आया, पर मैंने देखा - यह तो वही मेरा छोटा- सा प्यारा -सा दोस्त है : बचपन. कल तो वह धूप की तरह सुनहरा, खिलखिलाता, फूलों की तरह मुस्कराता हुआ लग रहा था, पर आज दुखी और उदास क्यों है? क्योंकि किताबों के बोझ के तले दबकर मेरा यह छोटा - सा बचपन कहीं खो गया है, मेरी जिंदगी से कहीं कोसों दूर चला गया है, पर मैं उसे बुलाना चाहती हूं और दोबारा उसके साथ समय बिताना चाहती हूं.

**आज भी जिंदगी के किसी कोने में,**
**ढूंढ़ता है उसे मेरा अंतर मन .**
**मैं उससे पूछती हूं कि,**
**वह क्यों नहीं करता मेरे जीवन में आगमन,**
**और फिर ये क्यों नहीं महकता मेरा चमन?**

बचपन हरेक की ज़िन्दगी का सबसे अनोखा चरण होता है. इसकी मीठी यादें ज़िन्दगी में हमेशा बनी रहती हैं. बचपन बहुत ही नाज़ुक, सुकुमार, भोला होता है. इस समय में कोई बैर भाव, गलत धारणा नहीं होती. सिर्फ प्यार होता है. बचपन में सभी अपने मां बाप के दुलारे और प्यारे होते हैं. मन में छल, कपट, ईर्ष्या की भावना नहीं होती. किसी छोटे बच्चे को देखकर हमारे मन में खुशी की लहर दौड़ उठती है. चेहरे पर मुस्कान आती है. बचपन निराला होता है. हम सभी अपने बचपन के पल याद करके मुस्कराया करते हैं. क्यों नहीं आते ये पल दुबारा? बचपन में दुनिया सीमित होती है - खाना, खेलना और सोना. दुख, बोझ से कहीं दूर बचपन में हमारे सतरंगी ख्वाब होते हैं. बड़े होने पर कई ज़्यादा काम, तनाव, चिड़चिड़ापन, ईर्ष्या, घमंड, दुख यह सब हमें हर पल घेरे रहते हैं. कभी - कभी लगता है कि छोटे रहना ही कितना अच्छा था ...... मम्मी - पापा का प्यार, दादाजी के साथ खेलना, कोई जिम्मेदारी नहीं और न कोई काम. काश हम छोटे ही रहते. इस दुनिया से दूर, अनजान, मां की गोद में, जहां सारे सुख हैं. बचपन की कुछ यादें ऐसी होती हैं जिन्हें भूलना नामुमकिन होता हैं. इन पलों को याद करके चेहरे पर एक मुस्कराहट आती है. सबका अपना-अपना बचपन होता है और अपनी अपनी यादें. यह वह लम्हें हैं जिनके बारे में बात करना सभी को पसंद हैं. बचपन के कई किस्से सुनकर ऐसा लगता है कि उस समय हमने क्या पागलों जैसी हरकत की. आज हमें बच्चों वाले काम करने में शर्म आती है. बचपन में कौन चाचा, कौन मामा - सभी के ऊपर अपना रोब जमाकर अपनी इच्छा पूरी करवाया करते थे, परंतु समय के साथ आज उनसे कुछ मांगना बचपना भरा लगता है. कैसा है यह बचपन? अपने में ही अनोखा, अतरंगी, प्यारा और भोला. ज़िन्दगी का सबसे सुखद अहसास है बचपन. कुछ नहीं परंतु फिर भी खास है बचपन.

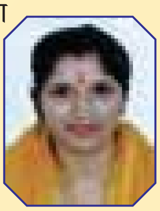

सिम्पल कंवर
आस्ति वसूली प्रबंधन शाखा,
क्षे.का., जयपुर

बचपन सिर्फ एक शब्द नहीं, बल्कि कोरे पन्नों को रंग-बिरंगी यादों के साथ एक बस्ते में सजाये रखने का नाम है. हमारा बचपन जब हमसे बहुत दूर चला जाता है, तब हमें इसका एहसास होता है. परंतु यह भी सच है कि हमने अपने बचपन को बड़ी शिद्दत से जिया है. शायद ही कोई होगा, जिसे अपना बचपन याद न आता हो. बचपन की मधुर यादों में माता-पिता, भाई-बहन, यार-दोस्त, स्कूल के दिन, आम के पेड़ पर चढ़कर चोरी से आम खाना, खेत से गन्ना तोड़कर चूसना और खेत के मालिक के आने पर सिर पर पैर रख नौ दो ग्यारह हो जाना, हर किसी को याद रहता है. चोरी और चिरौरी तथा पकड़े जाने पर झूठ बोलना बचपन की यादों में शुमार होता है. बचपन से आज तक यादों का अनोखा संसार हमारे मन में बसता है. बचपन में एक गीत सुना करते थे ''सपने सुहाने लड़कपन के...'' पर अब समझ में आता है कि बचपन क्या था! बचपन कहता है:

**मुझे हक है खुल कर जीने का, क्योंकि मैं बचपन हूँ,**
**मुझे हक है दिल से रोने-हंसने का, क्योंकि मैं बचपन हूँ,**
**मुझे हक है तुझे सताने-मुस्कराने का, क्योंकि मैं बचपन हूँ,**
**मुझे हक है अपने धुन गुनगुनाने का, क्योंकि मैं बचपन हूँ,**
**मैं अबोध, निर्दोष, निश्छल हूँ, क्योंकि मैं बचपन हूँ,**

बचपन वह अभिलाषा है, जिसे सुनते ही एक अजीब सी हलचल हमारे भीतर महसूस होने लगती है. न चाहते हुए भी हम ऐसी यादों से भीग जाते हैं जो बेहद खूबसूरत होती हैं. जाने-अनजाने हमारा बचपन हमसे बहुत दूर चला गया. दूर भी क्यों ना होता, ज़रा सोचकर देखें गलती किसकी थी? शायद हमें ही बड़े होने की जल्दी पड़ी थी. बड़ा बनना था... बाहर जाना था... ढेर सारे पैसे कमाना था...! बचपन बहुत भोला था, लेकिन हमें इससे पीछा छुड़ाना था. जो चला गया, वह कभी लौटकर नहीं आता, फिर चाहे इंसान हो या उम्र. यदि इस खूबसूरत बचपन की कीमत पहले ही पता चल जाये, तो इंसान उसे अपने पास से जाने ही न दे और इसे संभालकर रखने के लिए इसमें अपनी सारी कमाई लगा दे.

वैसे तो जन्म से लेकर किशोरावस्था तक की आयु को बचपन कहा जाता है. बचपन को शैशवावस्था, प्रारंभिक बचपन, मध्य बचपन तथा किशोरावस्था के विकासात्मक चरण में विभाजित किया जा सकता है. परंतु, बचपन शब्द अविशिष्ट है. इसे मानव विकास में उम्र के विभिन्न चरणों के लिए प्रयुक्त किया जाता है. विकासात्मक रूप से यह बचपन और वयस्क होने के बीच की अवधि को दर्शाता है. सामान्य शब्दों में बचपन का आरंभ जन्म से माना जाता है, जो किशोरावस्था में समाप्त हो जाता है. अमूमन 18 वर्ष तक की उम्र को विश्व के अधिकतर देश बचपन की श्रेणी में रखते हैं.

बचपन की अवधारणा जीवन शैलियों में परिवर्तन और वयस्क अपेक्षाओं के परिवर्तनों के अनुसार विकसित होती और आकार बदलती रहती है. कुछ लोगों का मानना है कि बच्चों को कोई चिन्ता नहीं होनी चाहिए और उन्हें काम करने की ज़रूरत नहीं होनी चाहिए. जीवन ख़ुशहाल और परेशानियों से मुक्त रहना चाहिए. आम तौर पर बचपन ख़ुशी, आश्चर्य, चिंता और लचीलेपन का मिश्रण होता है. साधारणतः इस संसार में वयस्कों के हस्तक्षेप के बिना, अभिभावकों के साथ रहकर खेलने, सीखने, मेल-मिलाप, खोज करने का समय होता है. यह वयस्क के जिम्मेदारियों से अलग रहते हुए उत्तरदायित्वों के बारे में सीखने का भी समय होता है.

बचपन को अक्सर मासूमियत के काल के रूप में देखा जाता है, जो विश्व के सकारात्मक दृष्टिकोण की ओर संकेत करता है. बचपन में ज्ञान का अभाव ग़लतियों से प्रस्फुटित होता है, जबकि महानतम ज्ञान गलतियां करके ही प्राप्त हुए हैं. 'मासूमियत का ह्रास' एक सामान्य संकल्पना है, जिसे आमतौर पर एक अनुभव या बच्चे के जीवन के एक ऐसे काल के रूप में माना जाता है, जब बुराई, पीड़ा या अपने चारो ओर की दुनिया के बारे में उनकी जागरूकता विस्तृत हो रही होती है.

शायद यह मानव स्वभाव ही है कि उन्हें अपने बीते बचपन के दिन बेहद खूबसूरत प्रतीत होते हैं. सपनों की दुनिया में विचरते बचपन का हर लम्हा दर्द और तनाव से दूर व ऊर्जा से भरपूर होता है. लड़ना, रूठना और तुरंत मान जाना उस समय की विशेषता होती है. याद कीजिए बचपन में आप कोई बात दिल में दबा कर नहीं रखते थे. अपना हक मांगते थे. लड़झगड़कर सामने वाले से रूठ भी जाते थे. थोड़ी देर में उसी के साथ खेलने भी लग जाते थे. मन में कोई शिकायत नहीं थी. परंतु अब हजारों शिकायतें हैं, जिन्हें आप मन में रखते हैं और सामने वाले से कहते भी नहीं. छोटी-छोटी बातों पर क्रोधित होकर क्रोध की ज्वाला से सालों तक खुद को ही झुलसाते रहते हैं.

परंतु, बचपन वह है जहां एक उद्यमी बच्चे का उदय होता है, जो हर चीज़ छूना, उलटना-पलटना और उसे समझना चाहता है. उसके बारे में बोलना चाहता है, सुनना चाहता है. वह तरह-तरह का विस्तार करते हुए अपनी गति बढ़ाना चाहता है. इसी स्वभाव के कारण बच्चे न तो बोर होते हैं और न ही सुस्त बैठते हैं. उनके शरीर में उर्जा और जीवन के प्रति आकर्षण बना रहता है. बड़े होते-होते हम ठीक इसके विपरीत हो जाते हैं. नतीजा यह होता है कि शरीर और दिमाग में जंग लगने लगता है. मानसिक निष्क्रियता की वजह से सैकड़ों बीमारियां घर कर लेती हैं. बचपन का एक नाम नटखट भी होता है. शोर मचाना, धूल में खेलना,

मिट्टी मुंह पर लगाना, पानी में कपड़े गीले कर लेना किसे नहीं याद है? और किसे यह याद नहीं है कि इसके बाद मां की प्यार भरी फटकार व रुंआसे होने पर मां का प्यार भरा स्पर्श! इन्हीं विलक्षण बातों से लबरेज होता है सारा बचपन. बचपन की एक और खासियत उसका भोलापन और मासूमियत होती है. बच्चे रिश्तों को नफा नुकसान के तराजू पर नहीं तौलते. प्यार और मासूमियत से हर किसी को अपना बना लेते हैं. बिना किसी भेदभाव के सबको गले लगाते हैं. सबको अंकल, आंटी बना लेते हैं. बदले में उन्हें सबका प्यार मिलता है. मगर, बड़े होते ही ईर्ष्या, क्रोध, द्वेष, वैमनस्यता की काली छाया में वह सरलता कहीं खो जाती है.

बेफिक्री, बचपन की खास नियामत होती है. बचपन में न पैसे कमाने की फिक्र और न ही दूसरों से आगे बढ़ने की ललक. जो मिल गया उसी का जश्न मना लेते हैं. जो सोचते हैं, वही बोलते हैं. जो मन में होता है, वही जुबां पर होता है. रिश्तों के समीकरणों या दूसरे को पीछे कर आगे निकलने के दांवपेंचों में नहीं उलझते. नकली मुखौटा नहीं पहनते. मगर बड़े होते ही भविष्य की चिंता दिलों पर हावी हो जाती है और सुख चैन सदैव के लिए अलविदा हो जाते हैं.

बचपन वह है जो गलतियां करके नई चीजें सीखता है. कितनी भी बड़ी गलती हो जाए हंसकर आगे बढ़ जाता है बचपन. परंतु उम्र बढ़ने के साथ नजरिया बदल जाता है. प्रतियोगिता में सबको पछाड़कर आगे आना चाहते हैं. जीवन में गलतियां करना गलत नहीं, परंतु गलती के डर से जोखिम न उठाना गलत है. बचपन की तरह गलतियां करें और उससे सीखें भी, तभी तो जिंदगी आपको खुशियों से नवाजेगी.

बचपन खुलकर हंसने का वादा होता है. बच्चे छोटी-छोटी बातों पर ठहाका लगाकर हंसते हैं. अजनबियों को देखकर भी मुस्करा देते हैं. मगर बड़े होने के बाद हमारी यह हंसी कहीं खो जाती है. जीने के लिए असली मुस्कान जरुरी है, जो होठों से बढ़कर आँखों तक पहुंचे. ऐसी मुस्कान हर दर्द, हर तनाव से राहत देती है. बचपन जीवन का वह सफर है, जिसमें उल्लास और उत्साह की रश्मियां बरसती रहती हैं. कितने शब्द कितने विशेषण और कितनी उपमाएं मन में उमड़ रही होती हैं. बीता हुआ बचपन, उन यादों से जुड़ा होता है जो प्रतिपल हमारे अस्तित्व का मार्गदर्शक होता है. बचपन वह लम्हा है, जब खुशियां छोटी और आसान होती हैं. बचपन वह समय है जब मां के दुलार, पिता के प्यार और दादा-दादी की कहानियों से संबद्ध संस्कार जागृत होते हैं.

बचपन एक प्रेरणा भी होता है. बचपन में की गई नादानियां बड़े होने पर जब याद आती हैं, तो सोचते हैं कि बचपन में की गयी गलतियां अब नहीं दोहराएंगे? लेकिन अब कब? अब वह जो बचपन बीत चुका है, वह अगले जन्म के पहले नहीं आने वाला! हां, उसकी सुखद-दुखद यादें आपके दिलो दिमाग पर मृत्युपर्यंत अवश्य बनी रहेंगी. फिर भी, हम बचपन का इंतजार कुछ इस तरह करते हैं :

**हां, फिर आना तुम मेरे प्रिय बचपन,**
**मुझे, तुम्हारा इंतजार रहेगा ताउम्र,**
**राह ताक रहा हूं मैं,**
**वे मिट्टी से बने चकले बेलन,**
**वे इमली के बीज के चिंगा पो,**
**वह पुराने कपड़े से बनी गुड़िया,**
**वे गूंजों में पोषमपो पोषमपो,**
**दाम तो कुछ भी लगते न थे,**
**फिर भी कितने अनमोल थे.**

दुर्भाग्यवश, कुछ बच्चों के बचपन इससे उलट होते हैं. उन्हें खुलकर बचपन जीने की आजादी ही नहीं मिली. समय से पहले ही उन पर बस्ते का बोझ डाल दिया जाता है. बच्चों का बचपन अर्थात भोलापन, पचपन अर्थात जल्दी बड़े होने या हो जाने के चक्कर में कहीं खो जाता है. कुछ माता-पिता चाहते हैं कि बच्चा जल्दी-जल्दी सब कुछ सीख ले. कुछ बच्चों के नसीब में तो बस्ते भी नहीं आते. खेलने की उम्र में ही उन्हें खिलौनों की जगह कूड़ा के ढ़ेर से कचरा चुनकर कमाने की मजबूरी होती है. कुछ को भीख मांगने जैसा घृणित कार्य करना पड़ता है. क्या! ऐसे बच्चों में वह मुस्कराहट जो दिल से निकलती है, जीवित रहती होगी. इस बचपन को बड़प्पन का ककहरा किसने पढ़ाया? क्या वक्त ने बचपन छीन लिया है? आज जिस गति से बच्चों की दुनिया में बदलाव हो रहे हैं इससे तो यही प्रतीत हो रहा है कि बचपन भाव रहित होता जा रहा है. इन निर्विकार होते चेहरों पर अपने विचारों की समिधा डालने की जिम्मेदारी हमारी है. ऐसा अगर कर सकें तो विस्मृत और उदासीन बच्चों की दुनिया को फिर से सँवारने में हम सफल होते नजर आएंगे.

स्थिति परिस्थिति चाहे जो भी हो, इस भीड़ भरी जिंदगी में सभी रात दिन जी तोड़ मेहनत करने में लगे हैं, क्यों? क्योंकि, सबको एक ही चीज चाहिए ''खुशी''. कभी फुर्सत मिले तो किसी छोटे बच्चे के साथ कुछ पल जी कर देखें. यकीनन, वो खुशी जिसके लिए आप दिन रात परिश्रम कर रहे हैं, उस बचपन की मुस्कराहट में अवश्य मिल जायेगी.

कृष्ण कुमार यादव
क्षे.म.प्र.का., बेंगलूरु

# बाल साहित्य और बचपन

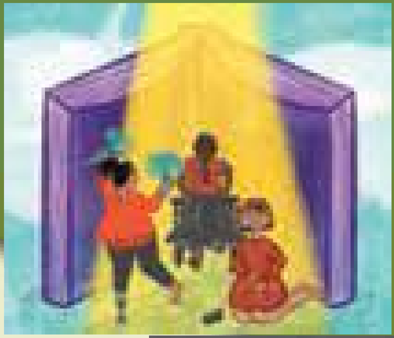

बच्चों को ध्यान में रखकर रची गयी कहानियाँ, कविताएं, पुस्तकें एवं पत्रिकाएँ बाल साहित्य हैं. मनुष्य की नैसर्गिक प्रवृत्ति है कि संचार व्यवस्था में आवश्यकता या अपने ज्ञान के अनुसार व्यक्ति को कोई उदाहरण से अथवा कहानी से समझने और समझाने का प्रयास करता है. कुछ परिस्थितियों में तो नयी कहानी गढ़ लेना भी सामान्य बात है. बाल साहित्य की शुरुआत या जरूरत यहीं से हुयी होगी. बच्चों को छोटी-छोटी चीजें समझाने के लिए भी दादी-नानी कहानियाँ सुनाती हैं. कई दशकों की परंपरा का ही परिणाम है, जब दुनिया में प्रकाशन की शुरुआत हुई तो दादी-नानी की कहानियों को प्रकाशित किया जाने लगा. कई लेखक आए, जिन्होंने बच्चों को अपना पाठक बनाने पर ध्यान दिया.

कई प्रसिद्ध लेखकों ने बाल साहित्य रचनाओं में बहुमूल्य योगदान दिया है और उसका फल भी बाल पाठकों ने उन्हें दिया. भारत में विष्णु शर्मा की ''पंचतंत्र'', सत्यजीत रे की फेलूदा, अनंत पाई की जातक कथाएँ एवं अमरचित्र कथाएँ, योगेश जोशी की तेनालीराम, आर के नारायणन की मालगुडी डेज़ - स्वामी एंड फ्रेंड्स, रस्किन बॉन्ड की द ब्लू अम्ब्रेला इत्यादि मुख्यतः बच्चों के कारण ही सर्वश्रेष्ठ विक्रेता किताबें साबित हुयी हैं. हमने देखा कि पिछले दो दशकों में जे. के. रौलिंग की हैरी पॉटर ने उन्हें एक वक़्त में दुनिया का सबसे अमीर लेखक बनाया.

यदि आप सोचते हैं कि बाल साहित्य को रचना आसान होगा, तो ऐसा कतई नहीं है. एक बाल साहित्यकार को हमेशा बच्चों के जीवन, बढ़ती उम्र और तेजी से बदलती हुयी उनकी दुनिया का विशेष ध्यान रखना होता है. कहानियाँ या कवितायें अगर मनोरंजक न हों तो बच्चों के लिए व्यर्थ हैं. ऐसा नहीं है कि बाल साहित्य है तो केवल बच्चे ही पढ़ेंगे, कई बार वयस्क भी अपनी रुचि से इन्हें पढ़ते हैं. कभी ज्यादातर छोटे बच्चों को माता-पिता या अन्य बड़े लोग कहानियाँ पढ़कर सुनाते हैं.

अगर हम अपने बचपन में जाएँ तो हम अक्सर किसी किताब के मिलते ही उसमें चित्रों और कहानियों की खोज करने, अगर कुछ आकर्षित करने वाला रहे तो उसे पढ़ना शुरू कर देते थे. कॉमिक्स, बाल उपन्यास, बाल कहानियाँ और सबसे मनोरंजक बाल पत्रिकाएँ जैसे- नंदन, चम्पक, नन्हें सम्राट, चंदामामा, टिंकल इत्यादि होती थीं. हो सकता है बच्चे इनको हिन्दी में, अपनी मातृभाषा में या अँग्रेजी में पढ़ते या सुनते हों, परंतु कहानियाँ एक जैसी ही होती थीं; जिसमें जानवर बोल रहे हों या कोई परियों का देश हो. गर्मी की छुट्टियों में कॉमिक्स भी खरीद कर या किराए से ले आते थे, तब राज कॉमिक्स के सुपर हीरो हों या प्राण के चाचा चौधरी, बिल्लू, पिंकी या रमन सब बहुत ही मनोरंजक और दिलचस्प. लंबी रेल यात्राओं और घर की दोपहर में यही पुस्तकें हमारी दोस्त हुआ करती थीं.

बचपन में हम सबने अतिथियों के समक्ष हिन्दी या अँग्रेजी में कवितायें सुनाई हैं, जो हमने अपनी किताबों में पढ़ी थीं. हमारे पाठशाला के पाठ्यक्रम की किताबों में बहुत सी कहानियाँ, निबंध, कवितायें होती हैं, जो मनोरंजन के साथ नैतिक शिक्षा और सामान्य ज्ञान भी समेटे हुये हैं. कभी आप हँसे, कभी आपको दुख हुआ और कभी आप सोचने लगे जैसे अभी बड़े होने के बाद भी कुछ पढ़ने या सुनने पर होता है. किन्तु बाल पाठकों के अलावा शिक्षक और पालक यह भी समझें कि बाल साहित्य बच्चों के लिए केवल उनकी पाठशाला तक ही सीमित न रहे, क्योंकि आप बच्चों को अधिक अनावश्यक ज्ञान नहीं दे सकते या उन पर कुछ थोप नहीं सकते. बाल साहित्य का सबसे प्रथम उद्देश्य है, बच्चों का मनोरंजन, शेष सब बाद में!

एक पहलू यह भी है कि दुनिया के कई हिस्सों में बच्चे, बाल साहित्य से वंचित रह जाते हैं. कई परिवार अपनी आर्थिक स्थिति के कारण और कहीं बाल साहित्य का अभाव बच्चों को उनके बचपन के एक महत्वपूर्ण हिस्से से दूर रखना है. कल्पना कीजिये, अगर दुनिया के सभी बच्चों को अच्छे बाल साहित्य का आनंद मिले तो ये दुनिया कैसी हो जाएगी. निश्चित रूप से दुनिया में नैतिकता और शिष्टाचार का विस्तार होगा, बच्चों की कल्पनाशीलता बढ़ेगी. बढ़िया रचनाएँ पढ़ने से आज की पीढ़ी जिनकी ध्यान अवधि बहुत मामूली सी रह गयी है, उसमें भी विस्तार की गुंजाइश बढ़ जाएगी.

हमेशा ये जरूरी नहीं कि बाल साहित्य है तो वह सही ही होगा. कई लोगों ने व्यापार की दृष्टि से चुटकुले, कहानियों, कॉमिक्सों एवं पत्रिकाओं की बस अंधाधुंध छपाई की, उसमें जाने वाले सामग्री पर कोई विशेष ध्यान नहीं दिया. ऐसे ही कुछ कारणों से बाजार में बहुत मात्रा में बाल साहित्य के नाम पर विवादास्पद किताबें बिक रही हैं, जिनका मकसद सिर्फ कमाई है. बच्चों और पालकों को ये बात समझाने की जरूरत है कि कवरपृष्ठ से ज्यादा लेखक और उनकी रचनाओं पर ध्यान देने की जरूरत होती है.

अक्सर बाल कहानी या किताब में हमें ऐसी रचनाएँ मिलती हैं जो अच्छे और बुरे की पहचान, उनके कर्म और फल, झूठ-सच, आज्ञापालन, शरारतें और उससे उत्पन्न परेशानियों से अवगत कराती हैं. बढ़ती हुई उम्र में बाल साहित्य, बच्चों को समाज में रहने के लिए, आगे बढ़ने के लिए और कठिनाइयों का सामना करने के लिये तैयार करती है. बड़ों का आदर और सम्मान, दोस्ती और भाईचारा, शिष्टाचार जैसे कई भाव बच्चों के मन में जीवन के शुरुआती दौर में आ जाने से उनका भविष्य उज्जवल रहता है और साथ ही साथ हमारा समाज भी बेहतर होता है.

**नितेश पाठक**
सुकुलदेहान शाखा,
क्षे.का., रायपुर

# हिन्दी के सुविख्यात साहित्यकारः

# जानकीवल्लभ शास्त्री

*छायावादोत्तर काल के हिन्दी साहित्य के विख्यात सितारा, जिसने पूरी जिंदगी हिन्दी साहित्य के लिए समर्पित कर दी थी. न कोई इच्छा न कोई अपेक्षा बस केवल साहित्य के लिए ही अपना सर्वस्व न्यौछावर कर देने वाला यह व्यक्तित्व सदैव अपने विचारों के साथ आगे बढ़ता रहा. अपने समस्त जीवन काल में इस महान साहित्यकार ने हिन्दी के परचम को ऊंचाइयों तक ले जाने के लिए हर प्रयास किया. कभी किसी के सामने झुके नहीं और न ही हिन्दी साहित्य से कोई समझौता किया. बस केवल आगे बढ़ते रहे, अनवरत एक मिशन को लेकर कि कैसे हिन्दी साहित्य को बेहतर स्थिति में स्थापित कर आगे बढ़ाया जाए.*

**जीवनी एवं परिचयः**

**जा**नकीवल्लभ शास्त्री का जन्म 05 फरवरी, 1916 को बिहार के गया जिला अंतर्गत मैगरा गांव में हुआ था. वह हिन्दी एवं संस्कृत के कवि, लेखक एवं आलोचक थे. आचार्य जानकी वल्लभ शास्त्री जी ने 11 वर्ष की उम्र में ही वर्ष 1927 में प्रथमा परीक्षा प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण की. शास्त्री की उपाधि 16 वर्ष में प्राप्त कर वे काशी हिन्दू विश्वविद्यालय चले गए. वहां वर्ष 1932 से 1938 तक रहे. वर्ष 1934-35 में इन्होंने साहित्याचार्य की उपाधि स्वर्णपदक के साथ अर्जित की. पूर्वबंग सारस्वत समाज ढाका द्वारा साहित्यरत्न घोषित किए गए. वर्ष 1937-38 में रायगढ़ (मध्यप्रदेश) में वे राजकवि रहे. वर्ष 1940-41 में रायगढ़ छोड़कर मुजफ्फरपुर आने पर इन्होंने वेदांतशास्त्री और वेदांताचार्य की परीक्षाएं बिहार में प्रथम स्थान के साथ उत्तीर्ण की. वर्ष 1944 से 1952 तक गवर्मेंट संस्कृत महाविद्यालय में साहित्य विभाग में प्राध्यापक तत्पश्चात विभागाध्यक्ष नियुक्त हुए. वर्ष 1953 से 1978 तक बिहार विश्वविद्यालय के रामदयालु सिंह महाविद्यालय, मुजफ्फरपुर में हिन्दी के प्राध्यापक रहकर वर्ष 1979-80 में अवकाश ग्रहण किया.

आचार्य जी का काव्य संसार बहुत ही विविध और व्यापक है. वह उन कवियों में से रहे हैं, जिन्हें हिन्दी कविता के पाठक से बहुत मान-सम्मान मिला है. प्रारंभ में उन्होंने संस्कृत में कविताएं लिखीं. फिर महाकवि निराला की प्रेरणा से हिन्दी साहित्य के क्षेत्र में आए. कविता के क्षेत्र में उन्होंने कुछ सीमित प्रयोग भी किए और 40 के दशक में कई छंदबद्ध काव्य कथाएं लिखीं जो 'गाथा' नामक संग्रह में संकलित हैं. इसके अलावा उन्होंने कई काव्य नाटकों की रचना की और 'राधा' जैसे सर्वश्रेष्ठ महाकाव्य की रचना की. परंतु शास्त्री जी की सृजनात्मक प्रतिभा अपने सर्वोत्तम रुप में उनके गीत और गज़लों में प्रकट होती है. उनकी संस्कृति कविताओं का संकलन मकाकलीफ के नाम से लगभग वर्ष 1930 के आस-पास प्रकाशित हुआ. इस काव्य संकलन को पढ़कर हिन्दी के महान कवि सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला' काफी प्रभावित हुए थे. ये निराला ही थे जिन्होंने शास्त्री जी को हिन्दी में लिखने के लिए प्रेरित किया था. छायावाद के स्तंभों में शास्त्री जी को पांचवां स्तम्भ माना जाता है. उनका पहला गीत 'किसने बांसुरी बजाई' बहुत ही लोकप्रिय हुआ था.

*किसने बांसुरी बजाई.*
*जनम-जनम की पहचानी वह तान कहां से आई.*
*किसने बांसुरी बजाई.*

*अंग-अंग फूले कदंब सांस झकोरे झूले.*
*सूखी आंखों में यमुना की लोल लहर लहराई.*
*किसने बांसुरी बजाई.*

यह गीत इतना लोकप्रिय हुआ कि प्रसिद्ध साहित्यकार डॉ. नलिन विलोचन शर्मा नें उन्हें छायावाद के चार स्तंभ प्रसाद, निराला, पंत एवं महादेवी के बाद पांचवा स्तंभ स्थापित कर दिया. यह सच्चाई भी है कि शास्त्री जी, भारतेंदु और श्रीधर पाठक द्वारा प्रवर्तित और विकसित उस स्वच्छंद धारा के अंतिम कवि थे, जो छायावादी अतिशय लाक्षणिकता और भावात्मक रहस्यात्मकता से मुक्त थे. उनके साहित्य में हिन्दी की

सभी धाराएं समाहित हुई हैं. उनके गीतों में रस एवं आनंद की प्राथमिकता देखने को मिलती है. दार्शनिकता एवं संगीत उनके गीतों को लोकप्रिय बनाते हैं. उनके गीतों में जीवन का वह पहलू है जो शांति और स्थिरता का कायल है. वे कहते हैं कि इसमें गोल-गोल घूमना नहीं है. बाहर से कुछ छीना-झपटना नहीं आने की खुशी नहीं बल्कि स्वयं अर्जित करने में आनंद है. उन्होंने अपने जीवन में स्वयं ही अपने मानक गढ़े हैं.

*सब अपनी-अपनी कहते हैं.*
*कोई न किसी की सुनता है.*
*नाहक कोई सिर धुनता है.*
*दिल बहलाने को चल-फिर कर,*
*फिर सब अपने में रहते हैं.*

इस क्षेत्र में उन्होंने नए-नए प्रयोग किए, जिससे हिन्दी गीतों का दायरा काफी व्यापक हुआ. वैसे वे न तो नवगीत जैसे किसी आंदोलन से जुड़े न ही प्रयोग के नाम पर ताल, तुक आदि से खिलवाड़ किया. छंदों पर उनकी जबरदस्त पकड़ है और तुक इतने सहज ढंग से उनकी कविता में आती है कि इस दृष्टि से पूरी सदी में केवल वे ही निराला की ऊंचाई को छू पाते हैं. छायावाद के अंतिम स्तंभ माने जाने वाले आचार्य जानकी वल्लभ शास्त्री की छंदबद्ध कविता लिखने में भी महारत हासिल थी. कहा जाता है कि छंदबद्ध कविता लेखन में यदि कोई निराला की बराबरी कर पाया तो वह थे, आचार्य जानकी वल्लभ शास्त्री ! शास्त्री जी ने हमेशा अपना आदर्श निराला को ही माना. महाकवि निराला ने जब शास्त्री जी का संस्कृत काव्य मकाकलीफ पढ़ा तो वह स्वयं उनसे मिलने ढूंढ़ते- ढूंढ़ते काशी पहुंच गए. महाकवि निराला का यह प्रेम देखकर शास्त्री जी इतने भाव विभोर हो गए कि उन्होंने अपने मुजफ्फरपुर आवास का नाम ही 'निराला निकेतन' रख दिया. उनके इस 'निराला निकेतन' में 'पृथ्वीराज' नाम का एक कमरा भी स्थापित किया. यह कमरा प्रसिद्ध थियेटरकर्मी स्व. पृथ्वीराज कपूर के नाम पर था. जब इनका गीत 'बांसुरी किसने बजाई' मशहूर हुआ तो पृथ्वीराज कपूर स्वयं उनसे मिलने यहां आए थे और इसी कमरे में बैठककर उन्होंने शास्त्री जी से ढेर सारी बातें की थीं. इसके बाद ही उस कमरे का 'पृथ्वीराज' नाम रख दिया गया था.

आर्चाय शास्त्री जी लेखन के साथ-साथ पशुपालन के भी शौकीन थे. वह हमेशा कुत्ता, बिल्ली, गाय, बछड़े रखा करते थे तथा उनसे काफी स्नेह जताते रहते थे. वे सभी जीवों के प्रति अत्यधिक संवेदनशील रहते थे.

शास्त्री जी की कविताएं अनुभूति प्रधान हैं. उनके काव्य में पीड़ा मूल धारा है. मां मात्र 05 वर्ष की आयु में गुजर गई उससे जो वेदना स्वरुपित हुई वह गीतों में व्यक्त हुई. मूलतः गीतकार होने के कारण इनके गीतों में छायावादी गीतों के ही संस्कार शेष हैं. शास्त्री जी ने मात्र 16 वर्ष की उम्र में ही लिखना शुरु कर दिया था और शास्त्री जी ने हिन्दी साहित्य की सभी विधाओं में अपनी रचनाएं लिखी हैं. चाहे वह कविता हो या फिर नाटक या उपन्यास हो या कहानी संग्रह या फिर ललित निबंध हो या संस्मरण. हिन्दी साहित्य के प्रत्येक क्षेत्र में उनकी प्रभावी उपस्थिति देखने को मिलती है. उनकी कुछ महत्वपूर्ण रचनाएं निम्नलिखित हैः

**काव्य संग्रहः** बाललता, अंकुर, उन्मेष, रुप-अरुप, तीर-तरंग, शिप्रा, अवन्तिका, मेघगीत, गाथा, प्यासी-पृथ्वी, संगम, उत्पल दल, चंदन वन, शिशिर किरण, हंस किंकिणी, सुरसुरी, गीत, वितान, धूपतरी एवं बंदी मंदिरम्.

**महाकाव्यः** राधा

**संगीतिकाः** पाषाणी, तमसा, इरावती

**नाटकः** देवी, जिन्दगी, आदमी, नील-झील

**उपन्यासः** एक किरणः सौ झाइंयां, दो तिनकों का घोंसला, अश्वबुद्ध, कालिदास,

**कहानी संग्रहः** कानन, अपर्णा, लीला कमल, सत्यकाम, बांसों का झुरमुट

**ललित निबंधः** मन की बात, जो न बिक सकी,

**संस्मरणः** अजंता की ओर, निराला के पत्र, स्मृति के वातायन, नाट्य सम्राट पृथ्वीराज कपूर, हंस-बलाका, कर्म क्षेत्रे मरु क्षेत्रे, अनकहा निराला.

**समीक्षाः** साहित्य दर्शन, त्रयी, प्राच्य साहित्य, स्थायी भाव और सामयिक साहित्य, चिन्ताधारा.

**संस्कृत काव्यः** काकली

**गजल संग्रहः** सुने कौन नगमा.

आचार्य शास्त्री जी के लेखन से साहित्यवर्ग ही नहीं पूरा समाज प्रभावित रहता था. जब उन्हें साहित्य के क्षेत्र में योगदान के लिए राजेन्द्र शिखर सम्मान से पुरस्कृत किया गया तो उस अवसर पर उन्होंने बेबाकी से कहा थाः-

*"मैं आया नहीं हूं, लाया गया हूं.*
*खिलौना देकर बहलाया गया हूं."*

वह एक स्वाभिमानी तथा हिन्दी के प्रति समर्पित कवि/लेखक थे. 07 अप्रैल, 2011 को शास्त्री जी निराला निकेतन, मुजफ्फरपुर में चिरनिद्रा में सो गए. जानकी वल्लभ शास्त्री के साथ ही छंदोबद्ध हिन्दी कविता के युग का अंत हो गया और बस बाकी रह गयी है तो वह उनकी विरासत, जिसका कोई सानी नहीं है.

डॉ. विजय कुमार पाण्डेय
क्षे.का., पटना

# खोया बचपन

कभी उन मासूम आँखों ने केवल मोहब्बत देखी थी,
आज नफरत और गुनाहों की गवाह है।
कभी चेहरे पे कमसिन मुस्कराहट थी,
जो आज समाज की इस कश्मकश में कहीं खो
सी गयी है।
खो गयी वो बचपन की ख़ुशी,
आधुनिकता की इस अंधी दौड़ में।

इस मतलबी दुनिया में ढूंढे हर इंसान
अपने बचपन की सुनहरी यादों को
ढूंढे वे खामोश पड़ी हंसी की किलकारियों को।
जी सके वह बेफिक्री वाले लम्हें,
देख सके खुली आँखों से वह महत्वाकांक्षी सपने।
प्रतिस्पर्धा के इस दौर में खो चुका हर इंसान
अपना मासूम ’ बचपन’
आज ढूंढ रहा है अपने हृदय के कोने में दबी
सी उस आवाज़ को
जो कहती है उसके दिल से कि वह अब भी
बच्चा है।

आशुतोष पाण्डे
स्टा.प्र.कें., भुवनेश्वर

# बचपन

अक्सर याद आती है मुझको,
वे बचपन की प्यारी बातें !
आटा बाटा दही चटाका,
वो टिम टिम तारों की रातें !!

चाह नहीं सुंदर वस्त्रों की,
बस हो सब चेहरे मुस्कराते !
कागज की नावें हों पानी में,
सौंधी मिट्टी और वे बरसातें !!

मेरा बचपन लौटे फिर से अब,
जैसे मौसम आते जाते !
कोमल सी मुस्कान अधर पर,
जीवन मधुर संगीत सुनाते !!

पुस्तक का यहां ज्ञान नहीं है,
सब मिलकर हम यह बतियाते!
चाहे जाति-धर्म अलग है,
पर पहले भारतवासी हम कहलाते !!

हेमन्त कुमार लखेरा
जयपुर

# खेलता बचपन

चंद सिक्के पड़े हैं जेब में
वज़न कुछ बड़ा सा है..
उम्मीद में नोटों की
यहाँ हर शख्स खड़ा सा है..
सोचता है कि यह सिक्के भी ख़र्च न हों
ज़िद पर अपनी वह जाने क्यों अड़ा सा है..
खेलते बच्चों को बाँट दे कुछ
खेलता बचपन सड़कों पर
ज़िन्दगी की आस में खड़ा सा है....

आलोक चौहान
राजेंद्र नगर शाखा, इंदौर

# बचपन की यादें

आओ दोस्तो, ख्वाहिशों के पुल बांधते हैं
गुजरे हुए बचपन को फिर से बुलाते हैं।
सरपट दौड़ती जिंदगी से कुछ लम्हे चुराते हैं,
आओ दोस्तो, बचपन के गलियारे में दौड़ लगाते हैं।
गिल्ली डंडे, काँच के कंचे
धूल पड़ी साइकिल को निकालते हैं।
चलो आज कागज की कश्ती फिर से बनाते हैं,
आओ दोस्तो, गुजरे हुए बचपन को बुलाते हैं।
अमरूद की कच्ची फलियां, पेड़ की कच्ची अमिया,
देखो बाग बगीचे भी हमें बुलाते हैं,
आओ दोस्तो, गुजरे हुए बचपन को आवाज लगाते हैं।
कच्चे मकान की मुंडेर, पतंग की वह डोरी,
लकड़ी का वह बैट और गांव की वह अल्हड़ टोली।
सब बेहद याद आते हैं,
आओ दोस्तो, बचपन के गलियारे में
फिर से दौड़ लगाते हैं।

राकेश कुमार सिंह
एमएसएमई, के.का., मुंबई

## बचपन

स्कूल गेट के जंगले से बाहर आते
हाथों में अठन्नी-चवन्नी के साथ टाटरी, चूरन,
इमली की चटनी, खट्टी मीठी
टॉफियां, कुल्फी, मूली और जलजीरे
की आवाज सुनाई दी..

स्कूल के बाद पास की वीडियो गेम
की दुकान में टीचर के आने के डर के साथ कुंग्फू,
कॉन्ट्रा, मारियो और पैकमैन
की आवाजें भी सुनाई दीं

वीडियो गेम में ही स्ट्रीट फाइटर और मुस्तफा
पर लगी शर्तों के साथ में मुंह में
बिना रस के फिरती बिग फन, बिग बबूल
और बूमर के गुब्बारे दिखाई दिए।
रिजल्ट के डर से भरी
प्रार्थनाओं के साथ छुट्टियों की प्लानिंग भी जारी है।
पैसे जोड़कर साइकिल में
क्या-क्या काम करवाने हैं, लूडो और सांप-सीढ़ी
के साथ व्यापार के खेल में कैसे जीतना है।
ट्रम्प कार्ड में किसे कितनी
बार हराना है, हुल्क होगन, हिटमैन,
माचोमैन, योकोजूना, पापा शैंगो और श्वॉन
माइकल भी याद आ रहे हैं।
जिंदगी में काश रिवाइंड का बटन होता...

शिवम कुमार
जामनेर शाखा, नासिक

## बचपन के दिन

काश होता यूँ कि बचपन को फिर से जी पाते,
माँ की लोरियां सुन एक सुकून की नींद सो पाते,
पापा के संग हम बाजार को जाते,
नए खिलौने ढूंढ़ कर बाजार से लाते,
अपने खिलौनों में ही सारा संसार बसाते,
दोस्तों को नया खिलौना दिखा कर खूब चिढ़ाते,
खेल-खेल में दोस्त को पीटकर घर को आते,
पापा की खूब डांट फटकार खाते,
मार के डर से माँ के आंचल में छुप जाते,
फिर अगली सुबह उसी दोस्त के घर खेलने को जाते,
काश होता यूँ कि वे बचपन वाले दिन फिर लौट
के आते।
बीते मौसम बार-बार नहीं आते,
वे बचपन वाले त्योहार नहीं आते,
रविवार तो आते हैं हर बार,
पर वे बचपन वाले इतवार नहीं आते,
अब तो छुट्टी के दिन भी हम काम पर चले जाते,
एक वक्त था जब हम छुट्टियां अठखेलियों में बिताते,
खाना पीना छोड़ के यारों संग इतवार मनाते,
अब तो ये वक़्त है कि,
हम काम के बोझ तले ही मरे जाते,
रविवार तो आते हैं हर बार,
पर बचपन वाले इतवार नहीं आते।
बचपन की यादें जैसे अधूरी रातें,
होने को है एक नया सवेरा,
जैसे खोता हो बचपन पूरा,
होते अगर बच्चे तो जीते पूरा दिन,
अब तो दफ़्तर में ही बीत जाता है दिन।

विकास दीप
झाबुआ शाखा
इंदौर

# बचपन के खेल – बदलते हुए परिमाण

**ब**चपन शब्द सुनते ही चित्त पुराने अतीत के झरोखों से उन मधुर सपनों में खो जाता है, जहां न कोई भेद-भाव था और न ही इसकी समझ, जाति-वर्ण, ऊंच-नीच, अमीर-गरीब, बड़े-छोटे की परिभाषा अज्ञात थी. किसी तरह के भेद-भाव जैसे सॉफ्टवेयर का विकास मन में नहीं हुआ था. कितने अच्छे थे वे दिन, उसे बस स्मरण व महसूस किया जा सकता है. विज्ञान और तकनीक आज की जैसी विकसित नहीं थी, स्वाभाविक है कि जीवन के हर रंग हर पहलू आज से काफी भिन्न थे.

खेल भी इससे अलग नहीं था. उन दिनों के खेलों को भी हम घर के अंदर (इंडोर) और घर के बाहर (आउटडोर) दो भागों में बाँट सकते हैं.

**आउटडोर खेल:**

1. **गिल्ली डंडा:** जब हम बचपन के आउटडोर गेम्स की बात करते हैं तो गिल्ली डंडा से ही आरंभ करना होगा. इसमें लकड़ी की एक छोटी गिल्ली होती है और एक 500 से 700 सें. मी. का डंडा होता है, हम कह सकते हैं कि इस खेल का एक सुधरा हुआ आधुनिक रूप क्रिकेट है.
2. **कबड्डी:** कबड्डी एक टीम गेम है जो काफी प्राचीन काल से बिना किसी मानक व निर्धारित नियमानुसार खेला जाता था. आज यह खेल एक स्थापित नियमों के आधार पर खेला जाता है, जिसमें एक पक्ष में 07 खिलाड़ी होते हैं. भारत के कई राज्यों ने इसे ''गेम ऑफ दी स्टेट'' की मान्यता दी है, जैसे- बिहार, आंध्र-प्रदेश, हरियाणा, कर्नाटक एवं केरल आदि.
3. **कंचे का खेल:** यह खेल शीशे के छोटे-छोटे गोल कंचों से खेला जाता है. यह एक कंचे से दूसरे कंचे पर निशाना लगाने या फिर एक होल में डालने का खेल है. इस खेल का आधुनिक रूप हम स्नूकर्, बिलियड्‌र्स एवं गोल्फ को भी कह सकते हैं.
4. **लुका-छिपी:** यह बचपन में खेला जाने वाला सबसे आसान और मजेदार खेल था. इसमें एक साथी नाम देता था और अन्य सब छुप जाते थे, फिर कुछ देर रुककर वह अपने अन्य साथियों को ढूँढ़ता, जो सबसे पहले आउट होता वही अगला नाम देता था. बचपन के इस खेल में कब अंधेरा हो जाता, पता ही नहीं चलता था. यह खेल काफी मनोरंजक था.
5. **पिट्ठू:** यह दो टीम के बीच खेला जाता है. इसमें कुछ पत्थर के टुकड़ों को एक के ऊपर एक रखा जाता है और जहां एक टीम का खिलाड़ी इन पत्थर के टुकड़ों को गेंद की मदद से कुछ दूरी पर खड़े होकर गिराता है. और फिर उसकी टीम उन पत्थर के टुकड़ों को पुनः सामने वाली टीम की गेंद से आउट होने से बचते हुये जमाती है. यदि टीम यह पत्थर पुनः जमाने में कामयाब होती है तो उसे एक पॉइंट मिल जाता है, अन्यथा यह पॉइंट दूसरी टीम को मिलता है.

**इंडोर खेल:**

राजा-मंत्री-चोर-सिपाही, साँप-सीढ़ी, कैरम-बोर्ड, लूडो, चिड़ियाँ-उड़ आदि ऐसे खेल हैं, जिनका नाम सुनते ही बचपन की यादें तरोताजा हो जाती हैं. आज भी ये खेल किसी न किसी रूप में हमारे मोबाइल गेम एप में उपलब्ध हैं.

वर्तमान में इन सभी खेलों के रूप या परिमाण में महत्वपूर्ण बदलाव आ गया है. वीडियो गेम, मोबाइल गेम, प्ले स्टेशन हमारे पारंपरिक खेलों का स्थान लेते जा रहे हैं. इंटरनेट ने दुनिया की सीमाओं को सीमित कर दिया है.

खेल बचपन के जीवन की सर्वाधिक सुखद अनुभूति है. शारीरिक अंगों में स्फूर्ति और चंचलता, ह्रदय में आनंद और प्रसन्नता, मन में उत्साह के बाद हमारी जीवन शक्ति को बढ़ा देते हैं. खेलों से न केवल बच्चों में नेतृत्व गुणों का विकास होता है अपितु ये मनोरंजक और आनंददायक भी होते हैं. यह एक ऐसा माध्यम है, जिससे बच्चों में संघर्ष प्रवृत्ति को बहुत अच्छी तरह से प्रेरित किया जा सकता है. खेलों में भाग लेने वाले बच्चों में निष्ठा, दृढ़ विश्वास, सहयोगी भावना, आत्मविश्वास एवं नेतृत्व जैसे अच्छे गुणों का विकास होता है. पुराने खेल भी आज हमारे जीवन में किसी न किसी रूप में शामिल हैं. कुछ तो काफी विशिष्ट और स्थापित रूप में खेला जा रहा है. अंत में कुछ काव्य पंक्तियों से लेखनी को विराम दूँगा...

*''वह बचपन गुजरा था जो*
*घर के आँगन में लुढ़कता सा*
*मैं भीगा करता था जिसमें*
*वह सावन बरसता सा*
*आज तन्हाई में जब*
*वह मासूम बचपन नजर आया है*
*ऐसा लगता है जैसे*
*खुशियों ने कोई गीत गुनगुनाया है''*

निरंजन कुमार
क्षे.का., सिलीगुड़ी

# कोई लौटा दे, मुझे मेरा बचपन

**य**ह वह शब्द है, जिसे सुनते ही चेहरे पर कुदरती मुस्कान आ जाती है, यही तो खास बात है बचपन की. बेवजह मुस्कराने का अपना ही मजा था. किसी की परवाह नहीं थी, बस बेफिक्र होकर जीना था. सच कहें तो वही थी जिंदगी.

समय के साथ सबको अपना बचपन खोना पड़ता है, परंतु हम इसे नहीं खोते तो हमें इसका महत्व नहीं समझ आता, इसका एहसास नहीं होता, इतना रोचक नहीं लगता. अब हर कोई अपने बचपन में लौट जाना चाहता है, बेफिक्र होकर घूमना चाहता है, सबका प्यार पाना चाहता है, खेलना चाहता है, अगर साफ लफ्जों में कहूं तो जिंदगी जीना चाहता है.

भाग दौड़ भरी जिंदगी में रीवाइटल (revital capsule) से ज्यादा कारगर है बचपन की यादें, वे आपको मानसिक रूप से तरोताजा कर देती हैं परंतु ये उम्र हमारा बचपन छीन ले गयी.

*छोटा बनके रहोगे तो मिलेगी हर बड़ी रहमत*
*बड़ा होने पर तो माँ भी गोद से उतार देती है*

कोई लौटा दे अगर मेरा बचपन तो इसका सौदा करने के तैयार हूँ मैं, परंतु ये संभव नहीं है. आज भी वह बचपन जब भी मेरे जहन में आता है, दिल बहुत ही हल्का और अच्छा महसूस करता है, मन को खुशी मिलती है, ये चंद पलों की खुशी, बाकी की हजारों खुशियों से बेहतर होती है. हमको अब तक अपना ज़माना याद है, जब हम बच्चे हुआ करते थे, दिल के सच्चे हुआ करते थे.

हम सभी के लिए बचपन का जीवन एक यादगार समय होता है, जिसे हम सभी लोग पसंद करते हैं. ये वही समय है, जो हमारे आने वाले जीवन को बेहतर आकार देता है.

*मैं तो चाहता हूं हमेशा मासूम बने रहना पर*
*ये जो जिंदगी है समझदार किए जाती है*

हमें इसी उम्र में बहुत कुछ सीखने को मिलता है, जिसकी वजह से हम लोग बड़े होकर एक सफल व्यक्ति बनते हैं. बचपन बहुत ही आनंददायक और जोशीला होता है .बचपन की मीठी यादों में खेलना, रोज़ मार खाकर स्कूल जाना और आते ही खेलने के लिए भाग जाना, सब बहुत याद आता है. सुबह से लेकर शाम तक पतंग उड़ाना, गली में खेलना, बारिश के पानी में कागज़ की नाव चलाना, भला इन चीज़ों को कौन भूल सकता है?

**वह बचपन की अमीरी न जाने कहाँ चली गयी?**
**जब पानी में हमारे भी जहाज़ चला करते थे**

उस वक़्त यह चिंता नहीं रहती थी कि पैसे कैसे कमाए जाते हैं, नौकरी में तरक्की कैसे मिलती है और न ही भविष्य की चिंता थी. बचपन में बहुत सारे दोस्त हुआ करते थे, उनके साथ घंटों कब बीत जाते थे पता ही नहीं चलता था. सारे दिन धूप में खेलना कूदना तो आम बात हुआ करती थी.

**किसी ने क्या खूब कहा है :–**

*बचपन में भरी दोपहर में नाप आते थे पूरा मोहल्ला*
*जब से डिग्रियाँ समझ में आईं, पाँव जलने लगे*

सुबह उठकर तैयार होने और स्कूल जाने का वक़्त सबसे कठिन महसूस हुआ करता था. परंतु स्कूल से मिली सीख ही अब काम आती है. बचपन में गर्मी की छुट्टियों का इंतज़ार तो सभी को होता ही था. पूरे परिवार के साथ दादी-दादा या नाना-नानी के गाँव जाना, खेतों में घूमना, जीवन बिल्कुल चिंता मुक्त था. सचमुच बचपन के दिन बड़े प्यारे और मनोरंजक हुआ करते थे.

माँ की डांट में भी कितना प्यार था, ये उस वक़्त समझ में नहीं आता था. माँ बड़े प्यार दुलार से तो कभी डांट-डांट के स्कूल के लिए उठाती थी.

आज जब कभी कुछ बचपन के दोस्त मिलते हैं तो कोशिश होती है कि बचपन की भूली बिसरी बातें, खट्टी-मीठी बातें याद की जाएं.

आज के बचपन और पहले के बचपन में अब अंतर नज़र आने लगा है, अब बच्चे खेल के मैदान की जगह मोबाइल में खेल खेलना ज्यादा पसंद करते हैं, परंतु ये उनके माता-पिता की ज़िम्मेदारी है कि वह बच्चों का पूरा ध्यान रखे.

*खाली पड़ा है मेरे पड़ोस का मैदान*
*एक मोबाइल बच्चों की गेंद चुरा ले गया*

बच्चे के कंधे पर न कोई ज़िम्मेदारी होती है और न ही उसके कर्तव्य की परवाह होती है. उसे रोटी खाते वक़्त या दूध पीते वक़्त यह ख्याल ही नहीं आता था कि ये रोटी कैसे आई है या उसे लाने में कितनी मेहनत लगी है. आज भी अपने बच्चों को शरारत करते देखते हैं तो खुद का बचपन अपनी आँखों के सामने घूमने लगता है. ये जीवन का पहला चरण होता है, जिसे हम सभी पसंद करते हैं.

**बालकृष्ण गोयल**
केएसकेवी भुज शाखा, राजकोट

# संस्कार और बचपन

**ह**मारे जैसे लड़के जो गांव-देहात में पले-बढ़े होते हैं वे अपने माँ-पिता को अपना प्यार दिखा नहीं पाते हैं, उनके सामने हो नहीं पाते. आज के बच्चे 'लव यू मॉम, ummah' ये सब आसानी से बोल लेते हैं, पर हम सभी से ये सब नहीं हो पाता. इसे शर्म-झिझक कह लें या फिर हमें वैसा माहौल ही न मिला, ये कह लें.

माँ ने भी कभी हमसे 'बाबू शोना' कहके बात नहीं की, इसके विपरीत हमने बहुत मार खाई है. ऐसा कुछ नहीं था घर में जो उठाने लायक हो और उसने मुझ पर फेंककर ना मारा हो. चप्पल, झाड़ू, करछुल, छोलनी, किचन का हर सामान फेंक कर मारा है मुझे, बस चाकू को छोड़कर! ऐसा नहीं है सिर्फ मैंने ही मार खायी है, हमारे आस-पड़ोस के ज्यादातर बच्चों की हालत यही थी. पर आज लिख रहा हूँ, दुनिया को समझ रहा हूँ, दो रुपये कमा रहा हूँ, सब उसी का परिणाम है. कभी पढ़ा नहीं तो मारा, याद नहीं किया टास्क तो मारा, रट कर टास्क याद किया तो और मारा, किसी को गलती से भी गाली दे दी तो दोगुना मारा, साप्ताहिक टेस्ट में 80% से कम लाया तो तिगुना मारा परंतु कभी मुझे हारने ना दिया. टॉप 3 से नीचे वर्ग में कभी आने ना दिया मुझे! चाहे कृष्ण का उपदेश हो या श्री राम की कथा, सब समझाया मुझे. घर में ही सब पढ़ाया, सब कुछ सिखाया.

बच्चे के कम नम्बर आ जाएं तो आजकल मां कुछ बोलती ही नहीं, उल्टा यह कहती है कि कोई बात नहीं, अगली बार और मेहनत करना. सब ठीक है. बस इस डर से कि कहीं बच्चे डिप्रेशन में ना चले जाएं. परंतु हम लोगों का अलग सीन था. नम्बर कम आया तो 'दे झाड़ू, दे झाड़ू' और डिप्रेशन तो मम्मी की झाड़ू देखकर दो कोस दूर से ही भाग जाया करता था.

पांच साल घर से बाहर रहा, परंतु कभी कुछ माँगा नहीं. खुद पार्ट टाइम बीमा एजेंट का काम करके अपना खर्च निकाला. इकलौता था, चाहता तो अपनी ज़िद से सब कुछ मनवा सकता था, परंतु उचित-अनुचित का बोध तो मां ने किशोरावस्था में ही आत्मा में डाल दिया था. दूर रहकर बस एक ही चीज़ चाहिए होती है...कि दिन में एक बार 'हाँ खाना खा लिया, अब सोने जा रहा हूँ' बस इतनी सी ही बात हो जाये.

बहुत बार गलती की है मैंने, हर्ट भी किया है मम्मी को. किसी का गुस्सा किसी पर, आज तक कभी माफी नही मांगी, जानता हूँ आवश्यकता नहीं, हमेशा वो पहले ही माफ कर देती है.

लोग कहते हैं सिर्फ लड़कियां ही विदा होती हैं, ऐसी बात नहीं है. लड़के भी विदा होते हैं. मैं भी विदा हुआ था. लड़कियों को कम से कम एक परिवार तो मिलता है, हम लड़कों को अकेले ही दर-ब-दर भटकना पड़ता है और पूरा जीवन भटकना पड़ता है. अनेक लड़के जो 15-16 वर्ष की आयु में घर से निकल जाते हैं पढ़ाई करने, फिर पढ़ाई पूरी करके किसी कम्पनी में कार्यरत हो जाते हैं. फिर वो दुनिया के रेस में खुद को धकेल देते हैं और वो चाहकर भी फिर माँ के साथ पूरे साल में दस दिन भी ढंग से नहीं बिता पाते. जब 15 वर्ष की आयु में वे लड़के घर छोड़ते हैं, तब उन लड़कों को यह कहां मालूम होता है कि अब साल भर में बस 2-4 बार ही माँ से छोटी-छोटी मुलाकातें हो पाएंगी.

लड़कियों की विदाई के बाद, जब मन हो वो मायके आकर 2-4 महीने रह लेती हैं. परंतु लड़के ना ही 2-4 महीने गुजार सकते हैं और ना ही वे विदाई पर रो सकते हैं, वह क्या है न हमारी विदाई ऑफिशियल नहीं है न!

जब एक बेटा अपनी माँ से कोसों दूर रहता है और इस तेज़ रफ्तार वाली दुनिया के रेस में अपनी ज़िन्दगी को झोंक चुका होता है, तब उसे अपना बचपन याद आता है और वह सोचता है कि क्या कभी वे दिन लौटेंगे जब हम और हमारी माँ साथ होंगे, आलू के पराठे उनके हाथ से, कुछ प्यार भरी बातें, 4 पराठे अपनी भूख के और एक जबरदस्ती उनकी ज़िद का!

मानव जीवन में जब भी जन्म मिले बस आपका ही बेटा बनूँ.

गिरिजेश कुमार मिश्र
खार शाखा, अंधेरी

किसी भी बच्चे के लिए उसका परिवार ही उसकी प्रथम पाठशाला होती है. कोई भी बच्चा माँ के गर्भ से कुछ सीख कर नहीं आता वरन वह वही सीखता है जो अपने आस-पास देखता है. संस्कार कोई एक दिन में सिखाने वाली बात नहीं होती बल्कि यह तो निरंतर जब तक साँस चलती है, लोग कुछ न कुछ सीखते ही रहते हैं. परन्तु इसकी नींव बचपन में ही पड़ती है और वह जिंदगी को बेहतर बनाने में स्तंभ का काम करती है.

बचपन जीवन का वह अमूल्य समय है, जिसमें वे अपने मन का काम करते हैं बिना किसी शर्म अथवा संकोच के. बच्चे का मन कोरे कागज की तरह होता है, आप उसे जिस माहौल में रखेंगे उसी तरह की लिखावट उसके कोरे कागज रूपी बचपन में मस्तिष्क में छपेगी. जिस प्रकार कुम्हार की गीली मिट्टी को कुम्हार कोई भी मनचाहा आकार देकर एक निश्चित ताप पर पकाकर खूबसूरत बना सकता है और इस प्रक्रिया में प्रत्येक क्षण यह सतर्कता रखनी पड़ती है कि कोई भी पात्र ख़राब न हो. जैसे कुम्हार कच्चे पात्र को भट्ठी में पकाता है, ठीक उसी प्रकार बच्चे को भी समय-समय पर व्यावहारिकता की भट्ठी में तपना होता है. तभी वे मजबूत एवं टिकाऊ पात्र की तरह विपरीत परिस्थितियों में भी डटकर सामना करने के लिए तैयार हो सके. कुम्हार की एक गलती पात्र को ख़राब कर सकती है ठीक उसी प्रकार बचपन में माता-पिता को अपने बच्चे को बहुत ही सावधानीपूर्वक ज्ञान-संस्कार देकर, जरुरत पड़ने पर डांट-फटकार कर उसके भविष्य की नींव डालने की कोशिश करनी चाहिए. परन्तु इसमें सभी सफल नहीं हो पाते. बच्चे को संस्कार देना आज-कल के माता-पिता के लिए उतना आसान नहीं है, जितना पहले हुआ करता था. इस भाग-दौड़ के समय में न ही माता-पिता के पास समय है, बच्चे को ज्ञानवर्धक बातें बताने का, न ही बच्चों को इसमें रूचि होती है. सब अपने-अपने इलेक्ट्रॉनिक गैजेट्स में इस तरह खोए रहते हैं, जैसे वही एक मार्ग है, जिससे जीवन का मोक्ष प्राप्त हो सकता है. आज-कल के माता-पिता को बच्चे के संस्कार से कुछ लेना-देना नहीं होता है, बस उनका बच्चा पढ़-लिखकर अच्छी नौकरी या व्यवसाय कर ले और खूब धन कमाएँ और वही बच्चे जब माँ-बाप को बुढ़ापे में, वृद्धाश्रम में छोड़ आते हैं, तब उनको पछतावा होता है कि काश इन बच्चों पर कुछ समय लगाकर उन्हें संस्कार की बातें सिखाई होती. परन्तु तब तक बहुत देर हो जाती है उस वक़्त का पहिया कभी पीछे नहीं मुड़ता.

संस्कार कोई घुट्टी नहीं है जो एक बार में पिला दी जाए. इसकी शुरुआत बचपन से ही होती है जो हमें करनी चाहिए.

बच्चों को रुपये-पैसे से ज्यादा आपका समय चाहिए. हमारे प्यार और अपनेपन के साथ-साथ हमारी समझाइश चाहिए. बच्चों का मन एक कोमल पुष्प की भांति होता है. इस कोमल मन को हमें क्रूरता, द्वेष, मतलबी दुनिया के थपेड़ों से बचाना है. इसके लिए उन्हें बचपन से ही संस्कारों की प्रतिरोधक क्षमता प्रदान करनी होगी. वास्तव में यही उन्हें इस दुनिया में शांति और प्रेम के साथ जीवन जीने में मदद करेगी. बचपन से यदि हम अपने बच्चों को दूसरों के प्रति प्रेम, आदर, दया का संस्कार सिखाएँगे तो वे निश्चित ही हम उनके बेहतर व्यक्तित्व के विकास में मदद कर पाएंगे. उनका सहानुभूतिपूर्ण व्यवहार, उन्हें, न केवल शांत एवं प्रेम से भरपूर रखेगा बल्कि लोगों की दुआएं भी दिलाएगा. अत: लोगों की दुआएँ उन बच्चों को एक बेहतर भाग्य प्रदान करेगी. साथ ही यहीं बच्चे बड़े होकर अपने माता-पिता के लिए भी उनके सिखाएँ आदर्शों का पालन कर उनका मान बढ़ाएँगे. अत: संस्कार बच्चों को बचपन में दिया गया वह वरदान है, जो उनके भविष्य में फलीभूत होता है.

विजय कुमार
क्षे.का., इंदौर

---

संस्कार- हमारी सनातन संस्कृति और पुरखों की विरासत वेदों की देन है. सनातन धर्म के अनुसार मनुष्य जीवन सोलह प्रकार के संस्कारों से पोषित है. ये सोलह संस्कार मानव शरीर के गर्भाधान से लेकर उसकी मृत्यु यात्रा तक समय-समय पर सम्पन्न कराने का विधान है.

1) गर्भाधान संस्कार - जीवन यात्रा का प्रारंभ होती है 2) पुंसवन संस्कार 3) सीमंतोन्नयन संस्कार 4) जातकर्म संस्कार 5) नामकरण संस्कार 6) निष्क्रमण संस्कार 7) अन्नप्राशन संस्कार 8) मुंडन / चूड़ाकर्म संस्कार 9) कर्णवेधन संस्कार 10) उपनयन संस्कार 11) विध्यारंभ संस्कार 12) केशान्तक संस्कार 13) समवर्तन संस्कार 14) विवाह / पाणिग्रहण संस्कार 15) वानप्रस्थ / सन्यास संस्कार 16) अंत्येष्टि / अन्तिम यज्ञ संस्कार पर जाकर जीवन यात्रा समाप्त हो जाती है. गर्भाधान, पुंसवन एवं सीमंतोन्नयन संस्कार तक बच्चे को जन्म देने वाली माता को अपने खान-पान, आचार-विचार एवं वाणी की शुद्धता रखना आवश्यक है. इन दिनों धार्मिक पुस्तकों का अध्ययन विशेष लाभदायक होता है. इसे वैज्ञानिकों ने भी माना है. इसके श्रेष्ठ उदाहरण भक्त प्रहलाद, वीर अभिमन्यु के जीवन में देखा जा चुका है. ऐसा कहा जाता है कि- ''जैसा खाया अन्न वैसा हुआ मन, जैसा पिया पानी वैसी हुई वाणी''. इन सबका असर गर्भस्थ शिशु पर होता है.

आजकल के बच्चों को माताएँ आँचल में लेकर लोरियाँ सुनाकर नहीं सुलाती हैं, उन्हें टी. वी. के सामने बैठाकर, कार्टून लगाकर छोड़ देती हैं. इससे बच्चा क्या सीखेगा? बच्चों के सामने ही माता-पिता छोटी-छोटी बातों पर बहस और झगड़ा करते हैं, इस तनावपूर्ण माहौल में बच्चे के मन पर क्या असर होता है? इसका अहसास माता-पिता को नहीं है. घर में जैसा वातावरण,

बोलचाल, व्यवहार देखेगा वही बच्चा सीखेगा, बच्चों पर कोई उपदेश काम नहीं आयेगा. बच्चों को संस्कारित बनाना है तो पहले घर का वातावरण ठीक करना होगा और इसका ध्यान माता-पिता को रखना होगा.

बच्चे को **पहला संस्कार** माता-पिता को प्रतिदिन सवेरे प्रणाम करने का सिखाओ, बड़ों का आदर करना और उनका सम्मान करना सिखाओ, साथ ही सही-गलत का ज्ञान कराओ. बच्चा अपने माता-पिता की छाया प्रति होता है. बच्चे को उपहार नहीं देंगे तो वह कुछ देर रोयेगा परन्तु अच्छे संस्कार नहीं दिये तो वह जिंदगी भर रोयेगा. बच्चे को ''कार'' नहीं ''संस्कार'' पहले दिलाओ.

**दूसरा संस्कार-** शालीनता और सहनशीलता का सिखाओ. लोहा नर्म होकर औज़ार बनता है, सोना नर्म होकर आभूषण बनता है और मनुष्य नर्म होकर महान बनता है. जैसे हमारे मुँह में जीभ जीवन के प्रारभ से है, दाँत बाद में आते हैं और जल्दी टूट जाते हैं परन्तु जीभ जीवन के साथ हमेशा रहती है क्योंकि वह नर्म है और दाँत कठोर होने के कारण टूट जाते हैं. इसीलिए कहा गया है कि ''शालीनता, सज्जनों का गहना है''.

**तीसरा संस्कार-** भाषा का संस्कार सिखाओ. माता-पिता अपने बच्चों को सिखाएँ कि वे अपने से बड़ों को आप कहें, हम उम्र एवं छोटों को तुम कहकर सम्बोधित करें, और किसी को भी तू न कहें. संत तुलसीदास जी ने कहा है-

*''तुलसी मीठे वचन ते सुख उपजत चहुँ ओर।*
*बशीकरन एक मंत्र है परिहरु बचन कठोर।''*

मीठे वचन बोलने से चारो ओर खुशियाँ फैल जाती हैं और सब कुछ खुशहाल रहता है. मीठे वचन बोलकर कोई भी मनुष्य किसी को भी अपने वश में कर सकता है. इसलिए मनुष्य को सदैव मीठी वाणी ही बोलनी चाहिये.

संत कबीरदास जी ने कहा है-

*''ऐसी वाणी बोलिये मनका आपा खोय।*
*औरन को शीतल करे आपहुं शीतल होय।।''*

**चौथा संस्कार-** नैतिकता का सिखाओ- अपने व्यवहार में विनम्रता होनी चाहिये. सदा सच बोलो झूठ मत बोलो. हाथ जोड़कर लोगों के दिलों में राज कर सकते हो उन पर हाथ उठा कर नहीं. पंडित विष्णु गुप्त ने जानवरों की कहानियाँ सुनाकर मूर्ख व्यक्तियों को भी शिक्षित किया. उनकी ''हितोपदेश'' एवं ''पंचतंत्र'' की कहानियाँ बच्चों को पढ़ने के लिए माता-पिता को देनी चाहिये.

एक बार की बात है, कुछ महिलाएँ गाँव के कुएँ से पानी भरकर अपने घर जा रही थीं, सिर पर पानी से भरे मटके थे. एक महिला बोली देखो मेरा बेटा कॉलेज पढ़ने जा रहा है, बड़ा अफसर बनेगा. दूसरी बोली देखो मेरा बेटा अखाड़े से कसरत करके आ रहा है, उसके बराबरी का आसपास कोई पहलवान नहीं है. तीसरी बोली देखो यह मेरा बेटा है- महिला उसके गुण बताती इससे पहले बेटे ने माँ के सिर से पानी से भरा मटका अपने कंधे पर ले लिया. महिला ने कहा कि मेरा बेटा न तो कॉलेज में पढ़ता है और ना ही किसी अखाड़े का पहलवान है. मेरा बेटा तो श्रवण कुमार है. मैंने उसे अच्छे संस्कार दिये हैं.

आज जरूरत है, अच्छी शिक्षा एवं अच्छे संस्कारों की, अपने बच्चे की तुलना दूसरे बच्चे से मत करिए. सभी बच्चों की मानसिक एवं शारीरिक स्थिति एक जैसी नहीं होती है. आपस में तुलना करना ठीक नहीं है. हर बच्चे का पालन पोषण अलग-अलग होता है. सभी घरों का माहौल, खान-पान और आचार-विचार समान नहीं हो सकते हैं, इसलिये आपस में तुलना करना ठीक नहीं है. बच्चे की सहनशक्ति बढ़ाएँ, छोटी-छोटी बात पर गुस्सा करना, रूठ जाना सही नहीं होता है, यह उसे समझाएँ और सही-गलत का अन्तर बतायें, साथ ही उसे गलत के दुष्प्रभाव को भी बतायें. अपने बच्चे को दूसरे से प्रेम करना, उनका सहयोग एवं मदद करना, दूसरों के प्रति सम्मान एवं विश्वास की भावना रखना सिखायें. अपने बच्चे की नादानी और गलतियों पर पर्दा ना डालें, उन्हें इन सब के बारे में विस्तार से बतायें. बच्चों को बचपन से ही संस्कारित बनाएँ अन्यथा बड़े होने पर सुधार नहीं पाएंगे; कच्चा घड़ा सुधारा जा सकता है, पकने के बाद नहीं. कुम्हार कच्चे घड़े को सही आकार देने के लिए एक हाथ घड़े के अंदर रखता है तथा दूसरे हाथ से ऊपर की ओर चोट पहुंचाता है, इसी प्रकार माता-पिता को भी अपने बच्चे को सही संस्कार देने के लिए थोड़ा कठोर होना चाहिए.

शिक्षा और संस्कार शरीर के दो हाथों की तरह हैं. शिक्षा को ऊँचा उठाना है तो संस्कारों की दौलत को भी ऊँचा उठाना होगा. वर्तमान पीढ़ी उच्च शिक्षित है, किन्तु उनमें संस्कारों की कमी है. बच्चों की गलत माँग और हठ पर समय रहते अंकुश नहीं लगाया तो अंत में आप असहाय हो जाएँगे. बच्चों को इतना महत्वाकांक्षी मत बनने दो कि विद्या का दुरुपयोग कर स्वयं के विनाश को आमंत्रित करें. हर कार्य में छल-कपट व प्रपंच रच कर आप सफल नहीं हो सकते, बच्चों को बतायें कि आप नीति, धर्म व कर्म का सफलतापूर्वक पालन करोगे तो विश्व की कोई भी शक्ति आपको पराजित नहीं कर सकती है.

अत: हम सभी का कर्तव्य है कि हम अपनी नई पीढ़ी को संस्कारवान बनाएँ. हमारे बच्चे, भारत देश के भविष्य हैं.

**नितिन भावसार**
स्टा.प्र.म., बेंगलूरु

# दादा-दादी/नाना-नानी के साथ का बचपन

बचपन, उम्र का सबसे खूबसूरत पड़ाव, जहाँ नासमझ होते हुए भी हम सबसे समझदार होते हैं. जिसमें न आने वाले कल की फिक्र होती है और न ही बीते हुए कल का संताप, जो है बस यहीं है इसी पल में. जो पास है बस उसकी खुशी, न ही किसी से कोई अपेक्षा, न कोई महत्वाकांक्षा, बस ढेर सारी मस्ती और मौज ही इस उम्र का सार होती है. जीवन का सबसे सुखद आनंद यदि कहीं है, तो वह हमारे बचपन में ही है. जितने जीवंत और स्वच्छंद हम बचपन में होते हैं, सारे जीवन का भी जोड़ लगाएँ तो उन पलों की बराबरी नहीं की जा सकती. और इस बचपन को यदि दादा-दादी/नाना-नानी का साथ मिल जाए तो जैसे सोने पर सुहागा हो जाए. दादा-दादी/नाना-नानी के साथ बीते बचपन की अनुभूति सर्वथा सुखद और मनोरम होती है.

कहते हैं घर में बुजुर्गों का साया रहने से तरक्की और खुशहाली आती है. उनका अनुभव और शुभाशीष बड़े से बड़े संकट से हमें बचाता है. उनकी सूझ-बूझ हमें उन मुश्किलों का हल भी सहज ही बता देती हैं, जिनके आगे हम असहाय महसूस करते हैं. जिस घर में बच्चे अपने दादा-दादी/नाना-नानी के साथ पलते हैं, उस घर के बच्चों के संस्कार विरले ही होते हैं. हमारे देश की प्राचीन सभ्यता की धरोहर हमारे बुजुर्ग संभाले हुए हैं. वे जब अपनी शिक्षा से बच्चों को सिंचित करते हैं तो उनकी सोच और समझ भी सकारात्मक तथा नीतिगत रूप से विकसित होती है. ये बच्चे जीवन पर्यंत उन सद्गुणों से बंधे रहते हैं जो इनके दादा-दादी/नाना-नानी बचपन में इन्हें सिखाते हैं.

घर में बच्चे अपने दादा-दादी/नाना-नानी के लाड़ले और चहेते होते हैं, बच्चों की सारी माँगें उनके पास आने पर पूरी हो जाती हैं. नन्हें-मुन्नों की हंसी, उनकी ठिठोली सुनकर बुजुर्गों का मन भी खुशी से भर जाता है. कभी-कभी तो वे स्वयं भी उनके साथ बच्चे बन जाते हैं और फिर उन लोगों की जुगलबंदी देखते ही बनती है. घर में रौनक कुछ और ही होती जब ये दो पीढ़ियाँ घर में एक साथ होती हैं. हंसी ठहाके की गूंज सारे घर को सराबोर कर देती है.

वास्तव में आज जो संस्कारविहीन और भटकी हुई युवा पीढ़ी हम देख रहे हैं. वह कहीं न कहीं एकल परिवार के प्रचलन का भी परिणाम है. आज परिवार का टुकड़ों में बंटना एक चलन सा हो गया है, लोगों को इसमें सुविधा दिखाई देती है. आज की पीढ़ी अपना जीवन अपने तरीके से अपनी शर्तों पर जीना चाहती है, इसलिए वे बड़े बुजुर्गों को साथ रखना या उनके साथ रहना पसंद नहीं करते. परंतु इसका दुष्प्रभाव यह है कि जिन बच्चों पर बुजुर्गों का साया नहीं होता, वे बचपन से ही धर्म-अधर्म, नीति-अनीति में अंतर नहीं जानते, गलत और सही में फर्क उन्हें पता नहीं होता. उन पर नजर रखने वाली, उन्हें चेताने वाली, उन्हें शिक्षा देने वाली पीढ़ी का अभाव उनके जीवन के हर पहलू को प्रभावित करता है. माता-पिता उनका शारीरिक विकास तो कर देते हैं. परंतु उनका मानसिक विकास पौराणिक रीति रिवाज और संस्कारों से फलीभूत नहीं हो पाता. और आगे जाकर इनमें से ही कुछ बच्चे आपराधिक और असामाजिक गतिविधियों में लीन हो जाते हैं. और यही बच्चे अपने साथ रह रहे अन्य बच्चों में भी इस प्रकार की विदूषिक प्रवृत्ति विकसित करते हैं. जो कि समाज में एक निम्न सोच और निकृष्ट क्रियाकलाप में लिप्त वर्ग का निर्माण कर समाज को भी प्रदूषित करते हैं.

शोधों द्वारा यह भी प्रमाणित है कि संयुक्त परिवार में परवरिश होने से बच्चों में धार्मिकता, समाजिकता, सद्बुद्धि, सामंजस्य, संस्कार, सद्भावना इत्यादि एकल परिवार में परवरिश पाने वाले बच्चों से बेहतर होते हैं. इसकी एक वजह यह भी है कि दादा-दादी/नाना-नानी उन्हें एक पीढ़ी पहले का भी ज्ञान देते हैं. साथ ही वे उनके माता-पिता के बचपन से भी भली-भांति परिचित होते हैं, जिससे वे बच्चों को अधिक कुशलता से संभाल पाते हैं. साथ ही साथ उनका स्नेह, बच्चों को समझाना भी बच्चों को भी बहुत भाता है. इसलिए वे उनकी आज्ञा और शिक्षा का पालन करने में सहज होते हैं और अपने बुजुर्गों के साथ हँसते खेलते, कब उनमें सद्गुणों का समावेश हो जाता है, उन्हें पता भी नहीं चलता.

घर में बड़े बुजुर्गों के रहने से विविध गतिविधियाँ जैसे पूजा-पाठ, धार्मिक आयोजन, व्रत-उपवास और तीज-त्योहार मनाने के तरीके बच्चों में भी अपनी संस्कृति का ज्ञान प्रवाहित करते हैं. बच्चे इन सबसे ईश्वर, धर्म और सात्विक प्रवत्ति के और भी करीब आते हैं. इनसे बच्चों के अंदर घर के रीति-रिवाजों की जानकारी समाहित होती है. साथ ही उनमें सात्विक गुण भी विकसित होते हैं. ये सभी मिलकर बच्चों के चरित्र की नींव को मजबूत बनाते हैं, जिससे वे आगे चलकर अच्छे मनुष्य बनते हैं और समाज को सकारात्मक दिशा में विकसित बनाते हैं.

बच्चों के खान-पान पर भी घर के बड़ों की बहुत रुचि होती है. अपनी दादी/नानी के हाथ के खाने सा स्वाद हम में से शायद ही कोई होगा जिसकी जुबान पर आज भी न हो. अपने पोते-पोतियों के लिए उनका रुचिकर भोजन बनाना और उन्हें परोसकर खिलाने में उन्हें अत्यंत प्रसन्नता होती है. वह प्रेम भरा स्वाद केवल उन्हीं के पास होता है. वे थाली में अन्न के साथ-साथ अपना स्नेह इस प्रकार परोसती हैं, मानो साक्षात माता अन्नपूर्णा अपने हाथों से भोजन करा रही हों. वास्तव में उनके हाथ से बना भोजन किसी प्रसाद से कम नहीं होता. उसका स्वाद और मिठास अतुलनीय होता है, जो किसी भी बड़े से बड़े भोजनालय में नहीं मिल सकता.

दादी/नानी बच्चों के लिए घरेलू वैध भी होती हैं, अनेकों छोटी बड़ी बीमारियाँ तो वे घर पर ही बच्चों की देखभाल करके दूर कर देती हैं. और कई बीमारियाँ उनकी सावधानियों और बचाव के चलते बच्चों को छू भी नहीं पातीं. उनके घरेलू नुस्खे कई बार तो चिकित्सकों पर भी भारी पड़ जाते हैं. उनके उपायों से हँसते-खेलते बच्चे स्वस्थ हो जाते हैं, और दवाओं के पार्श्व प्रभाव से भी वे बच जाते हैं. दादी/नानी के पास हर बदलते मौसम में बच्चों के लिए रखे जाने वाली छोटी-छोटी सावधानियों की सूची कंठस्थ होती है, जिन्हें वे मौसम बदलते ही दोहराना शुरू कर देती हैं, और जब उन्हें बच्चों के माता-पिता अपनाते हैं तो बच्चे कई बीमारियों से सुरक्षित हो जाते हैं.

दादा-दादी/नाना-नानी के किस्से और कहानियाँ तो सभी ने सुने होंगे. अपने अनुभवों को किस्सों में पिरोकर वे बच्चों को उनके समय में ले जाते हैं. उस वक़्त का रहन-सहन, भाषा शैली और वातावरण हमें उनके किस्सों में नजर आता है और घंटों उनकी बातों में समय व्यतीत हो जाता है. उनकी बातें जितनी दिलचस्प और मनोरंजक होती हैं, उतनी ही शिक्षाप्रद भी होती हैं. बातों-बातों में बहुत सारी सीख बच्चों को मिलती है, जो आगे चलकर बच्चों की पथ-प्रदर्शक भी बनती हैं. हमारे दादा-दादी/नाना-नानी के किस्से, उनकी बातें आज भी हमारे अंतर्मन में बसी हुई हैं, उन्हें जब भी याद करते हैं, हमारा मन प्रफुल्लित हो जाता है. वे किस्से अब हम अपने बच्चों को सुनाया करते हैं और उम्मीद करते हैं कि एक डोर की तरह ये हमारे पूर्वजों से हमारी आने वाली पीढ़ी को जोड़ेंगे. दादा-दादी/नाना-नानी से राम, कृष्ण, गौतम बुद्ध, श्री गुरुनानक, महाराणा प्रताप, शिवाजी, भगत सिंह आदि की कहानियाँ सुनकर बच्चों को न केवल हमारे देश की गौरवमयी सांस्कृतिक धरोहर से रूबरू होने का अवसर मिलता है, बल्कि उनमें बचपन से ही कई सकारात्मक गुणों का भी बीजारोपण हो जाता है. जो आगे चलकर उनके चरित्र और व्यवहार में समाहित हो जाता है.

बच्चों के दादा-दादी/नाना-नानी उनके प्राथमिक गुरु भी होते हैं. वे खेल-खेल में ही उन्हें जोड़-घटाना, गिनती, बारहखड़ी, वर्णमाला, पहाड़े, रंगों की पहचान, घड़ी देखना, विविध वस्तुओं और उनकी प्रवत्ति के विषय में ज्ञान देते रहते हैं, जो उनकी स्कूली शिक्षा के लिए आधारशिला का काम भी करता है. दादी/नानी बच्चों को घर के छोटे छोटे कामों में हाथ बंटाना, उन्हें नन्हें-नन्हें हाथों से शौकिया तौर पर खाना बनाना और धार्मिक ग्रंथ पढ़ने का अभ्यास भी करवाते हैं. उनके अलग-अलग प्रशिक्षण दादा-दादी/ नाना-नानी के माध्यम से ही प्रारंभ होते हैं. घर में और बाहर बड़ों से बात करने का सलीका बच्चे अपने घर के बुजुर्गों के साथ रहकर ही सीखते हैं.

बचपन में नानी के घर जाने की खुशी किसे नहीं याद होगी? साल भर केवल गर्मियों की छुट्टी का इंतजार इसलिए किया जाता था कि नानी के घर जाने को मिलेगा. जहाँ हमें खुल के जीने की आजादी होती थी. सुबह देर से उठना, फिर नानी के हाथ का स्वादिस्ट भोजन और अगर वह चूल्हे में पका हो तब उसका स्वाद ही दुगना हो जाता, दिन भर बेहिसाब धमाचौकड़ी और देर रात तक हंसी ठहाके और मौज. दिन जैसे घंटों की तरह पंख लगाकर उड़ जाते और समय कब बीत जाता पता भी नहीं चलता था. साल भर के लिए खुशियों और यादों का पिटारा हम नानी के घर से समेट कर लाते थे.

हमारे बुजुर्ग, बच्चों को परिवार में एकता बनाए रखने का पाठ भी सिखाते हैं, जब घर में ताऊजी, ताईजी चाचाजी, चाचीजी, पिताजी, माताजी, बुआ जी या परिवार के किसी भी सदस्य के बीच अनबन होती है, तब वे ही उन्हें कभी प्यार से और कभी डांट कर साथ रहने की शिक्षा देते हैं. वे ही घर में सबको एकता का महत्व बतलाते हैं. घर के बुजुर्ग मोतियों की माला में धागे की तरह होते हैं. धागा! जो कभी दिखता नहीं, पर सभी मोतियों को एक सूत्र में पिरोकर रखता है. और माला की मजबूती उसके धागे की मजबूती और भार सहने की क्षमता पर जिस प्रकार निर्भर करती है, उसी प्रकार घर की मजबूती घर के बुजुर्गों के घर को संजोए रखने की ललक, उनके अन्य सदस्यों के प्रति सजगता और घर में बनाए हुए अनुशासन, प्रेम और पारस्परिक आत्मीयता पर निर्भर करती है.

अंततः यह कहना अतिशयोक्ति नहीं होगी कि घर में बच्चों के लिए दादा-दादी/नाना-नानी का सर पर हाथ होना, घने बरगद की छाँव से कम नहीं, जिसकी शीतल छाया और ठंडी हवा हमें जीवन की धूप, गर्मी और उमस से बचाए रखती है. उनके आशीर्वाद के सान्निध्य में बच्चों का विकास आदर्श, संस्कार, सद्भाव और मिलनसारिता के संग होता है. साथ ही उनका बचपन यादगार बन जाता है, उन हजारों लाखों शुभ स्मृतियों के साथ जो बच्चों के दादा-दादी/नाना-नानी उन्हें सौंपते हैं. वास्तव में देखा जाए तो दो पीढ़ियों का यह मिलन अद्भुत और अतुलनीय होता है. इन्हें साथ देखना नयनसुख के साथ मन को सुकून देने वाला है. इस बचपन से अनमोल कोई और खजाना किसी के पास न कभी था, न ही वर्तमान में है, और न ही कभी हो सकेगा.

नीरजा अशोक कोष्टी

क्षे.का., जबलपुर

# हिंदी: क, ख, ग से आगे...

बालेन्दु शर्मा 'दाधीच'

इस वर्ष के 'राजभाषा गौरव पुरस्कार' से सम्मानित श्री बालेन्दु शर्मा 'दाधीच' हिंदी के जाने-माने तकनीकविद् और पूर्व संपादक हैं. दर्जनों पुरस्कारों से सम्मानित श्री शर्मा को तकनीक, भाषा और मीडिया तीनों क्षेत्रों में विशद अनुभव है. उन्होंने भारतीय भाषाओं में तकनीकी विकास, आम लोगों के बीच कौशल के प्रसार और तकनीकी विषयों पर जागरूकता पैदा करने का महत्त्वपूर्ण कार्य किया है. उन्होंने एक ओर दर्जनों सॉफ्टवेयर बनाकार निःशुल्क उपलब्ध कराए हैं, तो दूसरी ओर लाखों वेब पेज वाले समाचार पोर्टलों का विकास तथा संपादन किया है. उनकी पांच पुस्तकें प्रकाशित हुई हैं जिनमें से दो तकनीक पर आधारित हैं- 'तकनीकी सुलझनें' और 'दिव्यांगों के लिये तकनीक'.

देश-विदेश में भाषाई तकनीकी संगोष्ठियों में वक्ता के रूप में उपस्थित रहने वाले बालेन्दु शर्मा 'दाधीच' संप्रति माइक्रोसॉफ्ट में निदेशक- स्थानीय भाषाएं एवं सुगम्यता के पद पर कार्यरत हैं. इससे पहले वे इंडियन एक्सप्रेस और हिंदुस्तान टाइम्स समाचार पत्र समूहों में वरिष्ठ संपादकीय पदों पर रह चुके हैं. उनसे हिंदी के तकनीकी पहलुओं पर क्षेत्र महाप्रबंधक कार्यालय, अहमदाबाद में पदस्थ हमारे संवादादाता, श्री आशीष गुप्ता ने बात की.

**प्र. : सबसे पहले तो हम आपके बारे में जानना चाहेंगे, आप कैसे यहां पहुंचे? जब भी हिंदी और तकनीक की बात होती है तो सबसे पहले आपका नाम आता है.**

बचपन से ही जिन तीन विषयों के साथ मेरा जुड़ाव रहा, वे थीं- हिंदी भाषा, रचनात्मक लेखन और कंप्यूटर। मैंने शिक्षा भी इन सभी क्षेत्रों में प्राप्त की- मास्टर ऑफ आर्ट्स (हिंदी), मास्टर ऑफ कंप्यूटर एप्लीकेशंस (एमसीए) और पोस्ट ग्रेजुएट डिप्लोमा इन जर्नलिज्म! हालाँकि बाद में मैंने एमबीए भी किया, किंतु बुनियादी रूप से मेरी रुचि के तीनों क्षेत्रों में मैंने औपचारिक शिक्षा प्राप्त की. मैंने अपना पेशेवर कैरिअर पत्रकारिता से शुरू किया और राजस्थान पत्रिका, इंडियन एक्सप्रेस तथा हिंदुस्तान टाइम्स समूहों में संपादकीय पदों पर कार्य किया. लेकिन चूँकि मेरी रुचि कंप्यूटर की दिशा में भी थी इसलिए पत्रकारिता में कार्य करते हुए भी मैं कंप्यूटरों के निकट बना रहा. जब हमारे अखबार में कंप्यूटर का प्रयोग शुरू किया गया तो प्रबंधन ने हम लोगों से भी आग्रह किया कि हम भी कंप्यूटर पर काम करना सीखें लेकिन साथी पत्रकारों ने भारी विरोध किया. वे कुछ नया सीखने और अतिरिक्त कार्य करने की मनःस्थिति में नहीं थे. अलबत्ता, मैं सीखने में सदा दिलचस्पी रखता आया हूँ इसलिए मैंने स्वयं को इसके लिए प्रस्तुत किया. मैंने न सिर्फ कंप्यूटर पर टाइपिंग करना सीखा, जिसकी अपेक्षा हमसे की गई थी, बल्कि ऐसे भी कई कार्य सीखे जिन्हें सीखने की आवश्यकता उस समय नहीं थी, जैसे-अखबार के पृष्ठों की डिजाइनिंग, पेजमेकिंग, चित्रों का संपादन, ग्राफिक्स आदि. एक तरह से इन गतिविधियों ने तकनीक की दुनिया में मेरे प्रवेश की नींव रख दी. बाद में जब मैं अखबारों के कामकाज की एकरसता से ऊब गया तब एक दिन इस्तीफा देकर घर आ गया और अगले दिन से कंप्यूटर के क्षेत्र में पढ़ाई शुरू कर दी. कुछ महीने बाद मैंने एक कंप्यूटर कंपनी में नौकरी कर ली. हालाँकि मेरे पिछले कार्य में जहाँ मुझे 14000 रुपए का वेतन मिलता था, वहीं पर इस नई कंपनी में पहले महीने सिर्फ साढ़े तीन हजार रुपए प्रति माह का वेतन मिला. यह बात अलग है कि सिर्फ एक ही महीने बाद कंपनी ने मेरे कामकाज को देखते हुए मुझे प्रबंधक के पद पर पदोन्नत कर दिया और मेरी तनख्वाह हो गई- 12000 रुपए. यानि पत्रकारिता छोड़कर कंप्यूटर की दुनिया में आने पर नुकसान तो हुआ लेकिन बहुत अधिक नहीं. उसके बाद मैंने 'कंप्यूटर के क्षेत्र में हिंदी' को अपना विषय बना लिया और उसमें दक्षता पैदा करने में जुट गया. चूँकि मैं विधिवत् कंप्यूटर, सॉफ्टवेयर तथा वेब डेवलपमेंट आदि की शिक्षा प्राप्त था इसलिए मैंने अनेक हिंदी सॉफ्टवेयर भी विकसित किए और उन्हें हिंदी भाषियों के प्रयोग के लिए निःशुल्क उपलब्ध कराया. इनमें से एक सॉफ्टवेयर था 'माध्यम', जो एक निःशुल्क हिंदी वर्ड प्रोसेसर था. इसे उस जमाने में एक लाख से ज्यादा बार इंटरनेट पर डाउनलोड किया गया. इसकी प्रति कंप्यूटर की दुनिया की प्रसिद्ध पत्रिका चिप (बाद में जो 'डिजिट' बनी) के साथ वितरित की जाने वाली सीडी में भी शामिल किया गया. उसके

बाद मैंने हिंदी में अनेक वेबसाइटें और पोर्टल भी बनाए. साथ ही साथ तकनीकी विषयों पर हिंदी में लेखन शुरू किया. तकनीक और हिंदी से जुड़े कार्यक्रमों में प्रतिभागिता का सिलसिला भी शुरू हो गया जो आज तक जारी है. इस बीच कुछ किताबें भी आ गईं, जिनमें से दो ठीकठाक चल निकलीं- एक का नाम था 'तकनीकी सुलझनें' और दूसरी 'दिव्यांगों के लिए तकनीक.' दूसरी पुस्तक को इस वर्ष का राजभाषा गौरव पुरस्कार भी प्राप्त हुआ है. हिंदी और तकनीक के क्षेत्र में जब मेरी अच्छी-खासी पकड़ हो गई तो मैंने माइक्रोसॉफ्ट के हिंदी कामकाज में योगदान देना शुरू कर दिया. तब मुझे लगातार तीन वर्षों तक माइक्रोसॉफ्ट मोस्ट वैल्युएबल प्रोफेशनल (एमवीपी) का पुरस्कार दिया गया. कुछ वर्ष बाद ऐसी स्थिति बनी कि माइक्रोसॉफ्ट में भारतीय भाषाओं के कामकाज को देखने के लिए प्रभारी व्यक्ति का पद खाली हुआ। मुझे पता चला तो आवेदन किया और छह दौर के साक्षात्कारों के बाद मैं इस पद पर चुन लिया गया. तकनीक और हिंदी पर होने वाली चर्चा में मेरा नाम लिया जाना एक विनम्र अनुभव है. शायद ऐसा इसलिए है क्योंकि मैंने इसी क्षेत्र को अपने जीवन का लक्ष्य बनाया और जिस रूप में भी तकनीकी क्षेत्र में हिंदी के लिए योगदान दे सकता था उस हर रूप में मैंने योगदान देने का प्रयास किया. बहुत सीखा, गुना, प्रयोग किए, बहुत सी नाकामियाँ और कुछ सफलताएँ पाईं. हमेशा यही समझा कि मुझे तकनीक में कुछ विशेष नहीं आता और मुझे बहुत कुछ सीखना है. यही प्रवृत्ति आज भी है और मैं कुछ न कुछ नया सीखने की कोशिश आज भी करता रहता हूँ. यह क्षेत्र ही ऐसा है कि इसमें हर कुछ महीने बाद कोई ऐसी नई घटना घट जाती है, नई तकनीक आ जाती है या फिर नया उत्पाद आ जाता है कि आपके ज्ञान तथा अनुभव का भ्रम टूट जाता है. यह बेहद डायनेमिक तथा चुनौतीपूर्ण क्षेत्र है. यही इसका रोमांच भी है और यही इसका आनंद भी.

**प्र. : लेकिन ये तकनीक की दुनिया में आप जैसे व्यक्ति की क्या आवश्यकता?**

क्योंकि तकनीक जीवन के हर क्षेत्र को प्रभावित कर रही है और उसे ऐसे हर एक क्षेत्र से आने वाले कुछ लोगों की आवश्यकता है जो तकनीक तथा उस क्षेत्र विशेष के बीच में पुल का काम कर सकें. भाषा और तकनीक के संबंधों की मुझे ठीकठाक समझ रही. कन्टेन्ट क्रिएशन, अनुवाद आदि पर पत्रकारिता की पृष्ठभूमि के कारण अधिकार रहा. हिंदी में स्नातकोत्तर होने तथा बरसों से किए रचनाकर्म के कारण भाषा के विविध पहलुओं पर अच्छी पकड़ रही. तकनीक भी मेरे लिए कभी चुनौती नहीं रही क्योंकि मैं उसके विविध पक्षों को सीखता रहा, फिर भले ही वह प्रोग्रामिंग हो या फिर मल्टीमीडिया, नेटवर्किंग हो या फिर वेब डेवलपमेंट, डेटाबेस प्रबंधन हो या फिर डेटा विश्लेषिकी. ऐसे लोगों की आवश्यकता तकनीक के क्षेत्र में होती है जो दोनों पक्षों की जानकारी रखते हों. मिसाल के तौर पर बैंकिंग का सॉफ्टवेयर बनाने वाली कंपनी को ऐसे लोगों की आवश्यकता होगी जो बैंकिंग प्रक्रियाओं की ठोस जानकारी रखते हों तथा तकनीक को भी समझते हों. स्वास्थ्य के क्षेत्र में कोई एप्प बनाने वाली कंपनी को ऐसे डॉक्टरों की ज़रूरत होगी जो चिकित्सा के क्षेत्र के साथ-साथ तकनीक में भी दखल रखते हों. वजह यह कि ऐसे लोगों की मदद के बिना कोई भी डेवलपर ऐसा एप्लीकेशन, सॉफ्टवेयर या वेब सेवा आदि नहीं बना सकेगा जो सचमुच में कारगर सिद्ध हो.

**प्र. : अक्सर मैंने संगोष्ठियों में देखा है कि उनका विषय हिंदी और तकनीक होता है? क्या इससे ये ज़ाहिर नहीं होता कि हिंदी और तकनीक दोनों का वास्ता ज़रा कम है.**

हिंदी में तकनीक के प्रति जागरूकता का स्तर आज भी कम है, यह एक वास्तविकता है. हालाँकि ऐसा नहीं है कि हिंदी और तकनीक का वास्ता कम हो. तकनीक का भाषा से जुड़ाव ज़रूरी है क्योंकि उसके साथ तालमेल बिठाए बिना वह उस भाषा को बोलने-समझने वालों के लिए उपयोगी नहीं बन सकती. इसलिए, अगर दोनों के बीच कोई दूरी नजर आती है तो वह तकनीक की तरफ से नहीं है. तकनीक तो भाषा से जुड़ाव के लिए आतुर है, जैसा कि हमने पिछले तीन-चार दशकों की तकनीकी यात्रा में देखा है. तकनीक ने अपने प्रयोग की दिशा में भाषा-भाषियों के सामने पेश आने वाली हर समस्या के समाधान का प्रयास करने की कोशिश की है. यह बात छोटी से छोटी चीजों (जैसे कीबोर्ड लेआउट) से लेकर बड़ी से बड़ी प्रौद्योगिकी (जैसे कृत्रिम मेधा) तक पर लागू होती है. आज हिंदी और अनेक भारतीय भाषाओं के तकनीकी क्षेत्र में प्रयोग को लेकर कोई अड़चन शेष नहीं है. अगर अड़चन है तो वह प्रयोक्ताओं के स्तर पर है. अगर कोई दूरी है तो वह उपभोक्ता के स्तर पर है क्योंकि ऐसी अधिकांश तकनीकें न सिर्फ सुलभ हैं बल्कि निःशुल्क भी हैं. हम उन तक पहुँचें या न पहुँचें, उनका प्रयोग करें या न करें, यह हमीं पर निर्भर करता है. लेकिन हिंदी के उपभोक्ताओं का तकनीक के साथ जुड़ाव हमारे ही हित में है क्योंकि आज हम जिस युग में हैं उसमें तकनीकी जीवन के हर पहलू को प्रभावित कर रही है और उसे नकारकर, त्यागकर या अनदेखा करके हम आगे नहीं बढ़ सकते.

**प्र. : तो क्या अब हिंदी अंग्रेज़ी की ही तरह तकनीक सक्षम है?**

जी हाँ, जहाँ तक रोजमर्रा के जीवन में प्रयुक्त होने वाली तकनीक का प्रश्न है, उसमें हिंदी के प्रयोग में अगर कोई रुकावट नहीं होगी तो वह नगण्य ही होगी. कंप्यूटर, मोबाइल, इंटरनेट आदि पर किए जाने वाले अधिकांश कार्य आप विकसित देशों की भाषाओं तथा लिपियों के साथ-साथ हिंदी और देवनागरी में भी कर सकते हैं. यह बात आधुनिक तकनीकों पर भी लागू होती है, जैसे- डिक्टेशन (बोलकर टाइप), स्पीच सिन्थेसिस (पाठ का ध्वनि में परिवर्तन), कंप्यूटर दृष्टि (कंप्यूटर विजन), हस्तलिपि पहचान (इंक रिकॉग्निशन), ऑप्टिकल कैरेक्टर रिकॉग्निशन, मशीन अनुवाद आदि आदि। हिंदी में दैनिक कामकाज के साथ-साथ संचार से जुड़े सभी क्षेत्रों, इंटरनेट सर्च, भाषायी डोमेन नेम, भाषाई ईमेल पतों और यहाँ तक कि आभासी सहायकों (वर्चुअल असिस्टेंट) के साथ भी काम करना सामान्य बात है। कंप्यूटर ही क्यों, डिजिटल तकनीकों से जुड़े अन्य उपकरणों तथा क्षेत्रों में भी हिंदी का प्रयोग किया जा सकता है, जैसे कि एटीएम मशीनें, कंप्यूटर गेमिंग,

इंटेलिजेंट मशीनें, आईओटी उपकरण आदि. डेटाबेस में हिंदी में प्रविष्टियाँ करना संभव है तो हिंदी में सॉफ्टवेयर, मोबाइल एप्स और वेबसाइटें बनाना भी उतना ही सरल है जितना कि वह अंग्रेजी में है. हिंदी में प्रोग्रामिंग भाषाओं के भी प्रयोग किए गए हैं, हालांकि लोगों ने उन्हें अपनाने में उतनी उत्सुकता नहीं दिखाई जितनी कि दिखाई जानी चाहिए थी. विंडोज जैसे ऑपरेटिंग सिस्टम और ऑफिस जैसे सॉफ्टवेयर को पूरी तरह हिंदीमय बनाया जाना संभव है, कहने का अर्थ यह कि उनमें दिखने वाले तमाम आइकन, फाइलों के नाम, संदेश, मेनू आदि हिंदी में ही दिखाई देंगे. यही बात स्मार्टफोनों के लिए भी कही जा सकती है. ऐसे और भी बहुत सारे कार्य हैं.

**प्र. : यूनिकोड क्या है? क्या ये सिर्फ़ हिंदी और भारतीय भाषाओं से जुड़ा शब्द है?**

यूनिकोड के बारे में आज भी हिंदी प्रयोक्ताओं के बीच भ्रम मौजूद है. कोई इसे फॉन्ट कहता है तो कोई तकनीक. कुछ लोग इसे सॉफ्टवेयर तक मानते हैं और कुछ इसे डाउनलोड करने या खरीदने के स्रोतों के बारे में पूछते हैं. वास्तव में यूनिकोड एक मानक है यानी कि स्टैंडर्ड। यह स्टैंडर्ड सिर्फ टेक्स्ट (पाठ) से ताल्लुक रखता है. आपके कंप्यूटर पर देवनागरी या किसी दूसरी लिपि के टेक्स्ट को कैसे सहेजकर रखा जाएगा उसके नियम और तौरतरीकों का ब्योरा इस स्टैंडर्ड में दिया गया है. इसकी ज़रूरत इसलिए पड़ी क्योंकि कंप्यूटर सिर्फ अंकों की भाषा को समझता है जबकि हम कंप्यूटर पर अक्षरों की लिपि में काम करते हैं. जाहिर है कि अंकों और अक्षरों को एक–दूसरे में परिवर्तित करने की कोई न कोई व्यवस्था होनी चाहिए, तभी हम कंप्यूटर पर टेक्स्ट का इस्तेमाल कर पाएंगे. यही व्यवस्था यूनिकोड है. यूनिकोड हर अक्षर को एक अंक के रूप में अभिव्यक्त करने की व्यवस्था है, ताकि जब आप अक्षर टाइप करें तो वह अक्षर अंक में बदलकर कंप्यूटर के भीतर स्टोर किया जा सके. इसी तरह से जब कंप्यूटर के पास स्टोर किया गया टेक्स्ट आपको देखना हो तो यही प्रक्रिया उल्टे क्रम में संचालित हो सके। यह प्रक्रिया एनकोडिंग और डिकोडिंग कहलाती है. अगर यह उलझन हल हो जाए तो कंप्यूटर और उसके प्रयोक्ता के बीच संपर्क आसान हो जाएगा। यही व्यवस्था यूनिकोड के जरिए की गई है. हाँ, यूनिकोड सिर्फ टेक्स्ट को स्टोर करने में मदद करने तक सीमित नहीं है बल्कि टेक्स्ट से जुड़ी दूसरी गतिविधियों में भी भूमिका निभाता है. मसलन टेक्स्ट को प्रदर्शित कैसे किया जाएगा और शब्दों की शॉर्टिंग के नियम क्या होंगे आदि–आदि.

एक बात याद रखने की है कि यूनिकोड का संबंध भाषा से नहीं है बल्कि लिपि से है, क्योंकि कंप्यूटर पर टेक्स्ट को हम लिपि में अंकित करते हैं, भाषा का प्रयोग तो बोलते समय करते हैं. यूनिकोड देवनागरी या भारतीय लिपियों तक सीमित नहीं है. यह दुनिया की 154 लिपियों को वही क्षमता देता है जो कि भारतीय लिपियों को देता है. इसका प्रादुर्भाव ही कंप्यूटर के क्षेत्र में दुनिया की सभी भाषाओं के लिए मार्ग सुगम बनाने के लिए किया गया है. पहले जो समस्याएँ हमारी भाषाओं में आया करती थीं, उनसे मिलती–जुलती समस्याएँ दुनिया की दूसरी भाषाओं में भी आती थीं. तब ऐसा स्टैंडर्ड बनाने की ज़रूरत महसूस हुई जो यह सुनिश्चित करे कि कंप्यूटर का प्रयोग सिर्फ अंग्रेजी या पश्चिमी भाषाओं तक सीमित न रहे, बल्कि दुनिया की हर भाषा में सुगमता से कार्य करना संभव हो जाए.

**प्र. : माइक्रोसॉफ्ट की तरफ़ से हिंदी और भारतीय भाषाओं को अंग्रेज़ी की तरह सक्षम बनाने के लिये किये जा रहे प्रयासों को अगर आप बताना चाहें.**

भारतीय भाषाओं की तकनीकों के संदर्भ में माइक्रोसॉफ्ट की भूमिका एक पायोनियर (प्रवर्तक) की रही है। सन 2000 में हिंदी में यूनिकोड को सबसे पहले माइक्रोसॉफ्ट ने ही विंडोज़ 2000 के जरिए लागू किया. हिंदी में यूनिकोड के जरिए काम करने के तमाम साधन उपलब्ध कराए गए, जैसे कीबोर्ड लेआउट, फॉन्ट और शेपिंग इंजन आदि। माइक्रोसॉफ्ट ने यूनिकोड का इतना उत्कृष्ट क्रियान्वयन किया कि उत्पादकता के क्षेत्र में क्रांति आ गई। जो काम आप अपने सुपरिचित सॉफ्टवेयरों (माइक्रोसॉफ़्ट वर्ड, पावरप्वाइंट, एक्सेल, पब्लिशर आदि) पर अंग्रेजी में किया करते थे, वही सब काम उन्हीं सॉफ्टवेयरों में हिंदी करना संभव हो गया. पहले ऐसा नहीं था और आपको हिंदी में काम करने के लिए अलग से सॉफ्टवेयर खरीदने पड़ते थे. अब आपको एक ही सॉफ्टवेयर का इस्तेमाल करते हुए किसी भी भाषा में काम करने की क्षमता मिल गई थी, जो कि उपभोक्ता के लिहाज से बहुत बड़ी क्रांति थी. उसके बाद भारतीय भाषाओं में माइक्रोसॉफ्ट ने अनगिनत काम किए जैसे कि हिंदी में स्पेलिंग जाँच, अनेक हिंदी फॉन्ट, मशीन अनुवाद, टेक्स्ट टु स्पीच, डिक्टेशन, हैंडराइटिंग रिकॉग्निशन, हिंदी ईमेल पतों का समर्थन, सॉफ्टवेयरों का हिंदी इंटरफेस, टाइपिंग के लिए अनेक इनपुट मैथड एडीटर (इंडिक लैंग्वेज इनपुट टूल, फोनेटिक कीबोर्ड, इनस्क्रिप्ट कीबोर्ड, हिंदी ट्रैडीशनल कीबोर्ड, इंडिक इनपुट 1,2,3, टीबीआईएल डेटा कनवर्टर) आदि। आम हिंदी प्रयोक्ता को अपने निजी तथा व्यावसायिक कार्य के लिए माइक्रोसॉफ्ट ने वह सब कुछ उपलब्ध करा दिया है जिसकी ज़रूरत उसे पड़ती है. मोबाइल फोन के लिए भी माइक्रोसॉफ्ट का स्विफ्टकी नामक कीबोर्ड उपलब्ध है जो हिंदी सहित दो दर्जन भारतीय भाषाओं में काम करने की सुविधा देता है. माइक्रोसॉफ्ट की वेबसाइट– भाषाइंडिया.कॉम, भारतीय भाषाओं में दर्जनों टूल उपलब्ध कराती है. वेबसाइट निर्माताओं से लेकर सॉफ्टवेयर निर्माताओं तथा डेटाबेस में प्रविष्टियों से लेकर मोबाइल एप्लीकेशन के निर्माताओं तक के लिए हिंदी सहित अनेक भारतीय भाषाओं में विकास की सुविधा माइक्रोसॉफ्ट ने अपने डेवलपमेंट प्लेटफॉर्म्स के जरिए दी है. माइक्रोसॉफ्ट के क्लाउड पर भी हिंदी से जुड़ी वेब सेवाएँ उपलब्ध हैं तो माइक्रोसॉफ्ट के लोकप्रिय समाचार पोर्टल एमएसएन.कॉम का हिंदी संस्करण भी मौजूद है. हिंदी सहित भारतीय भाषाओं के कामकाज में माइक्रोसॉफ्ट की अग्रणी भूमिका है और रहेगी.

आशीष गुप्ता
क्षे.म.प्र.का., अहमदाबाद

# बचपन, कल से आज तक

बचपन एक ऐसा शब्द जिसे सुनते ही हमें अपने जीवन के कुछ ऐसे पल याद आने लगते हैं, जिनके बारे में सोचने से ही हमें अत्यंत खुशी मिलने लगती है. बचपन यानी जन्म से किशोरावस्था तक का समय, एक व्यक्ति के जीवन का सबसे महत्वपूर्ण और सुंदर हिस्सा. स्कूल की कक्षा में दोस्तों के साथ की गई मस्ती , शरारतें , खेलकूद , साथ में घूमना ,मेले में खो जाने से डरना फिर भी मेला देखने की जिद करना, संयुक्त परिवार में बड़े छोटे भाई-बहनों के साथ गपशप, दादी-नानी की कहानियां, चाचा-ताऊ के दुलार और डाँट दोनों ही बचपन की याद को चटपटा बनाते हैं. बेफिक्र जीना, मनचाहा खाना पीना, बेफिक्र सोना, दोस्तों के साथ साइकिल की लंबी सवारी का मजा ही अलग होता था. गर्मी की छुट्टियों में परिवार के साथ घूमने जाना, नानी के घर जाकर खूब मौज मस्ती करना, एक अलग शाही जीवन का एहसास कराता था. पर आज की इस नई आधुनिक दुनिया में मानो यह सब कहीं बहुत पीछे छूट गया हो. आज आधुनिकता का सरल अर्थ है मॉडर्न होना, जो अपने आप में गर्व की बात है.

इस अंधी दौड़ में प्रतिस्पर्धा का भार इतना बढ़ गया है कि परिवार में लोग एक साथ होते हुए भी अनजानों की तरह रहते हैं, कुछ भी शुद्ध नहीं है, ना हवा, ना पानी, ना खाना और ना ही रिश्ते. सुबह होते ही इस दौड़ में हिस्सा लेने के लिए हम तैयार हो जाते हैं. पहले शाम होने का इंतजार किया जाता था, दोस्तों के साथ घूमने जाते थे, परिवार के साथ चाय और गपशप होती थी, एक ही टीवी पर पूरा परिवार साथ में बैठकर टीवी देखता था, साथ में खाना खाने से उसका स्वाद ही बदल जाता था. बच्चे, बड़े बूढ़े के प्रति संवेदनशील होते थे, उनका ध्यान रखते थे, उनके साथ समय बिताते थे. आज इस आधुनिक दुनिया में नए-नए डिजिटल उपकरणों के आने से बच्चों का बचपन मोबाइल फोन, लैपटॉप तक ही सीमित रह गया है. छोटे-छोटे बच्चे मोबाइल और टीवी में इतने व्यस्त हो गए हैं कि घर से बाहर निकलकर खेलना कूदना सब भूल गए हैं. जिसका दुष्परिणाम इनकी सेहत और आंखों पर पड़ता है. हमेशा उदास और तनावग्रस्त रहने के कारण चिड़चिड़े होते जा रहे हैं. लोगों के साथ घुलने मिलने और बात करने में भी झिझकते हैं. जिसकी वजह से उनका मानसिक, शारीरिक, सांस्कृतिक व सामाजिक विकास नहीं हो पा रहा है. ताजी हवा में मौज मस्ती, दोस्तों के साथ बगीचे में खेलना इन बच्चों को मालूम ही नहीं है.

खेलकूद बच्चों के विकास के लिए बहुत आवश्यक है. खेल से उन्हें काफी कुछ सीखने को भी मिलता है, साथ ही उनका शरीर स्वस्थ, फुर्तीला और सुडौल भी बना रहता है. बचपन में घर के बुजुर्गों से जो सीख हमें मिलती है, वह जीवनभर हमारे व्यक्तित्व को निखारने में मददगार साबित होती है, क्योंकि बचपन में हमारा मन कच्ची मिट्टी की तरह होता है जिसे जैसे ढालो वह वैसा हो जाता है.

टेक्नोलॉजी ने जहां हमें एक तरफ कई सुविधाएं दी हैं, तो दूसरी तरफ इसके परिणाम घातक भी साबित हो रहे हैं. आधुनिक युग में बच्चों से बचपन का खोना केवल उन्हीं की गलतियों की वजह से नहीं है परन्तु माता-पिता का भी इसमें पूरा योगदान है. अपने जीवन, घर और काम में संतुलन बनाते बनाते, वे अपने बच्चों की परवरिश को दरकिनार कर देते हैं. व्यस्तता के कारण उनकी आदतों व संगत पर ध्यान नहीं दे पाते और ज्यादा प्यार दिखाने के लिए उन्हें महंगे से महंगे डिजिटल उपकरण जैसे मोबाइल, लैपटॉप लाकर दे देते हैं, जो न केवल उनके शारीरिक विकास को रोकता है पर उन्हें अपने परिवार से भी दूर कर देता है. जिस कारण वे शिष्टाचार को भी भूलते जा रहे हैं और पढ़ाई को भी महत्व नहीं देते, क्योंकि हर कदम उनका मार्गदर्शन करने के लिए माता-पिता व बड़े बुजुर्ग उनके पास नहीं होते. माता-पिता दोनों ही बाहर जाकर काम करते हैं और अपने बच्चों की देखभाल ठीक तरह से नहीं कर पाते, जिससे बच्चे उनसे कट जाते हैं. वे शिष्टाचार के साथ-साथ अपनी हंसी, मासूमियत व चंचलता सब खो देते हैं. बच्चों के भीतर का बचपन खत्म हो जाता है और उन्हें मोबाइल या इंटरनेट से जुड़ाव हो जाता है. जहां उन्हें अपने जैसे कई दोस्त मिलते हैं और वे उनके प्रभाव मे आकर ज्यादा समय मोबाइल और लैपटॉप पर बिताने लगते हैं. माता-पिता बच्चों के बचपन को छीन कर उन्हें स्कूल ,डांस क्लासेस, वीडियो गेम आदि में व्यस्त रखते हैं जिससे कि बच्चा घर के अंदर दुबक कर अपना ही बचपन भूल जाता है.

आजकल के बच्चे पहले से ही होशियार और प्रबल बुद्धि के होते हैं और नई तकनीक के साथ सुदृढ़ भी हो गए हैं, उन्हे केवल सही मार्गदर्शन की जरूरत है. हमें अपने बच्चों के प्रति संवेदनशील होने व उन पर ध्यान देने की जरूरत है. एक शोध के अनुसार यह पाया गया है कि बच्चों का 1 दिन में कम से कम 15 से 20 मिनट के लिए बाहर निकलकर खेलना उनके पूर्णतः विकास के लिए बेहद जरूरी है. हमें अपने व्यस्त जीवन में से थोड़ा समय निकालकर अपने बच्चों के साथ समय बिताना चाहिए, उनसे बात करनी चाहिए, उनका दोस्त बनकर कभी-कभी उनके साथ घूमने, फिरने और खेलने जाना चाहिए, जिससे वे हमसे आत्मीयता महसूस करें. कभी-कभी घर के बड़ों जैसे दादी नानी या किसी रिश्तेदार से मिलने के लिए उन्हें ले जाना चाहिए व हमारे संस्कारों से उन्हें अवगत कराना चाहिए. किसी दबाव में नहीं, बल्कि प्यार और विश्वास के साथ वे हमारे साथ आएँ, इसके लिए हमें थोड़ा सहनशील बनना होगा और उन्हें इस नए तौर तरीके को अपनाने के लिए उन्हें प्रेरित करना होगा.

आज के बच्चे ही हमारे देश का भविष्य है. आज के दौर में पढ़ाई की अहमियत को नजरअंदाज नहीं किया जा सकता, पढ़ाई लिखाई अपनी जगह है, पर बच्चों का बचपन भी दोबारा लौटकर नहीं आता. आधुनिकता के साथ उन्हें अपनी जड़ों को नहीं भूलने देना चाहिए. हमें तकनीक और वास्तविक जीवन दोनों के बीच सामंजस्य बनाकर नई पीढ़ी को मानसिक और सामाजिक रुप से सुदृढ़ बनाना होगा जिससे भारत के बेहतर भविष्य का निर्माण हो सके.

*वो भी क्या दिन होते थे, जब हम बच्चे होते थे,*
*ना दुनिया की चिंता होती ,बस यूँ ही खुश होते थे.*
*अब कहां वो बचपन है, जब हम छोटे होते थे,*
*छोटी छोटी जीतों से, खुशियाँ बड़ी पिरोते थे.*
*अब तो जीत भी हार है, छूटा प्यार- परिवार है,*
*सफलता की इस दौड़ में, मासूमियत पर वार है.*

**राजेश कुमार**
कुम्बकोणम शाखा, तिरुच्चिरापल्ली

# बचपन आज का, देश का नागरिक कल का!

वर्ष 1953 में बनी हिंदी फ़िल्म ''बूट पॉलिश'' के गाने की निम्न पंक्तियां बच्चों की मासूमियत और उनके नन्हें मुन्ने हाथों में जो कल को बदलने की शक्ति है, को बख़ूबी बयां करती है.

*नन्हें मुन्ने बच्चे तेरी मुट्ठी में क्या है,*
*मुट्ठी में है तक़दीर हमारी!*

किसी भी देश की असली संपत्ति होती है उस देश के बच्चे. लोग जब वृद्ध हो जाते हैं तब बच्चे ही उनका सहारा होते हैं. आज के बच्चे कल के युवा होते हैं. कल को डॉक्टर, इंजीनियर, बैंकर, वैज्ञानिक, नेता व शिक्षक जैसी महत्वपूर्ण भूमिकाएं निभाते हैं. उनकी बौद्धिकता और क्षमता पर ही आने वाले कल की नींव रखी जाती है. इसीलिए किसी देश के उज्ज्वल भविष्य के लिए बच्चों की अच्छी परवरिश अत्यंत आवश्यक है. यदि देश के बच्चों की सही परवरिश की जाए, उनकी शिक्षा का उचित प्रबंध हो व उनके स्वास्थ्य की अच्छी देखभाल की जाए तो वह देश निस्संदेह बहुत तेजी से विकास करेगा.

आज हमारे देश में अनेकों समस्याएं हैं जो इंसान के कारण ही पैदा हुई हैं. वैश्विक जनसंख्या के आकड़ों के अनुसार भारत दुनिया का दूसरा सबसे बड़ा आबादी वाला देश है. आज हमारे देश की जनसंख्या 125 करोड़ से अधिक है. जिनमें अधिकतम युवा व बच्चे हैं. हमारे देश की विविध समस्याओं में आज एक प्रमुख समस्या है बाल मज़दूरी. ऐसे बच्चे गरीबी, कुपोषण व भूखमरी से जूझ रहे हैं. इन बच्चों को बचपन में ही काम करने के लिए मजबूर किया जाता है. इस कारण से इन बच्चों का सही विकास नहीं हो पाता है. बचपन स्कूल जाने के लिए, पढ़ाई करने के लिए व खेलने कूदने के लिए होता है, न कि काम करके पैसे कमाने के लिए. इसलिए हम सभी का यह कर्तव्य है कि बच्चों से उनका बचपन न छीना जाए. हर बच्चे को कम से कम इतनी शिक्षा तो मिलनी ही चाहिए, जिससे वो पढ़ना लिखना और हिसाब लगाना जान लें.

यदि हमारे देश के बच्चों को उचित शिक्षा प्रदान की जाए तो भविष्य में हमारा देश बड़ी से बड़ी समस्याओं का सामना कर सकता है और देश को विकसित बना सकता है. भारत एक विकासशील देश है. इस देश में गरीबों की संख्या भी अधिक है और इसी कारण देश के अधिकतर गरीब बच्चे कुपोषण का शिकार हो रहे हैं. जब तक इन बच्चों के शरीर और बुद्धि का पूर्ण रूप से विकास नहीं होगा, वे बड़े होकर देश का विकास नहीं कर पाएंगे. वास्तव में माँ-बाप की ग़रीबी के कारण उनके बच्चों को सही मात्रा में पौष्टिक आहार नहीं मिल पाता, इसलिए भारत सरकार सर्व शिक्षा अभियान के तहत गरीब बच्चों के लिए उत्तम शिक्षा और पोषक आहार की व्यवस्था स्कूल में ही करवा रही है. सरकार के साथ-साथ हम सब का भी यह दायित्व है कि इन बच्चों के विकास में अपना सहयोग दें.

भारत सरकार ने इस दिशा में अनेकों कदम उठाते हुए छः से चौदह वर्ष तक के बच्चों की शिक्षा मुफ़्त कर दी है. इसके अतिरिक्त आवश्यक पुस्तकें, स्कूल ड्रेस, जूते, दोपहर का भोजन आदि भी मुफ्त प्रदान कर रही है. इतना ही नहीं भोजन के साथ-साथ बच्चों को पोषक आहार यथा दूध, फल इत्यादि भी स्कूल में ही उपलब्ध करवाया जा रहा है. इसका मुख्य उद्देश्य यह है कि गरीब माता-पिता निःशुल्क सुविधाओं का लाभ उठाने हेतु अपने बच्चों को स्कूल भेजें.

बच्चों को अच्छे संस्कार देना भी बेहद ज़रूरी है. बचपन में जो आदतें पड़ जाती हैं, वह पूरे जीवन बनी रहती हैं. बच्चे कच्चे घड़े की तरह होते हैं. उन्हें जो आकार दो वे वैसे ही बन जाते हैं. हर पीढ़ी का बचपन एक दूसरे से अलग होता है. आज इस पीढ़ी का बचपन काफी हद तक मोबाइल, लैपटॉप, कंप्यूटर जैसी चीजों ने हथिया लिया है. हम सब इनके ज़्यादा उपयोग के दुष्परिणामों से भी वाकिफ हैं. इन उपकरणों के हद से ज्यादा उपयोग का असर बच्चों के मानसिक तथा शारीरिक विकास पर पड़ता है.

अनेकों कंपनियां अपने फायदे के लिए छः साल की उम्र से ही बच्चों को कंप्यूटर कोडिंग सीखने के लिए प्रोत्साहित कर रही हैं. उनके माता-पिता को यह लालच दिखाया जाता है कि भविष्य में उनके बच्चों द्वारा डेवलप किए हुए एप्प ख़रीदने के लिए बड़ी-बड़ी कंपनियाँ उनके दरवाज़े पर लाइन लगाकर खड़ी रहेंगी. उन्हें यह कौन समझाये कि एप्प बनाना कोड लिखना नहीं होता. कोडिंग का मतलब होता है प्रॉब्लम सॉल्विंग, जो कि बच्चों को ऑनलाइन नहीं सिखाया जा सकता. आज बच्चों के लिए कोडिंग सीखने या कंप्यूटर पर गेम खेलने से भी ज़्यादा ज़रूरी यह है कि वे अपने असली दोस्तों के साथ मैदान में असली खेल खेलें. बच्चे मूल मानवीय गुण जैसे ईमानदारी, दया भाव, प्यार और एक दूसरे का आदर करना सीखें.

आज बहुत से माता-पिता अपने बच्चों के हाथ में मोबाइल, लैपटॉप इत्यादि इलेक्ट्रॉनिक गैजेट दे कर उनकी देखभाल या निगरानी का विशेष प्रयास नहीं करते हैं. इससे बच्चों के शारीरिक, मानसिक, बौद्धिक, सामाजिक और आध्यात्मिक विकास पर घातक प्रभाव पड़ रहा है. बच्चों में बचपन से ही नैतिक संस्कार दिए जाने की परम आवश्यकता है, जिसका समाज में लोप हो रहा है. भौतिकता के इस युग में नैतिकता लुप्त हो रही है.

बड़ों के आचरण का बच्चों पर गहरा प्रभाव पड़ता है, ज्यादातर बच्चे अपने अच्छी बुरी सभी आदतें घर में ही सीखते हैं. समाज के नकारात्मक वातावरण का प्रभाव भी बच्चों पर पड़ता है. आज की युवा पीढ़ी जाने-अनजाने धूम्रपान, नशा आदि जहरीली आदतों का शिकार होती जा रही है. उनकी चमक-दमक से आकर्षित होकर बच्चे उस राह पर चल पड़ते हैं. सही समय पर सही शिक्षा ही बच्चों को इन जानलेवा चीज़ों से बचा सकती है,

बाल्यावस्था हमारे जीवन में सुबह की तरह होता है. हम अक्सर यह महसूस करते हैं यदि हमारा सबेरा योजना के अनुसार ठीक शुरू होता है तो पूरा दिन अच्छा गुज़रता है. किसी का यदि बचपन सुधर गया तो उसका पूरा जीवन अच्छा गुज़रता है. इसीलिए हर काल में समाज में बच्चों के विकास का पूरा ध्यान रखा जाता है. क्योंकि, देश का भविष्य बच्चों पर ही निर्भर करता है. आज के बच्चे आने वाले कल के नागरिक होते हैं, जिनमें समाज को नयी दिशा देने की प्रचंड क्षमता होती है. क्यों कि बच्चे...

*देखो इन्हें ये हैं ओस की बूंदें,*
*पत्तों की गोद में आसमां से कूदे,*
*खो ना जाए ये कहीं, तारे जमीं पर....*

पूनम टी. येंगड़े
क्षे.म.प्र.का., बेंगलूरु

# शिक्षा और बचपन

*हर व्यक्ति के जीवन में शिक्षा की अपनी एक महत्वपूर्ण भूमिका होती है. शिक्षा ने हमेशा से ही एक व्यक्ति में बेहतर व्यक्तित्व का निर्माण किया है. शिक्षा का उद्देश्य केवल परीक्षा में अच्छे अंक प्राप्त करना नहीं होता है, बल्कि शिक्षा के माध्यम से नई चीजों को सीखने के साथ अपने ज्ञान में वृद्धि की जा सकती है. हालांकि, बच्चे हमारे देश का भविष्य हैं, इसलिए हमें उन्हें अच्छी नैतिकता और बेहतर तरीके से शिक्षा ग्रहण करने पर जोर देना चाहिए, ताकि वे भविष्य में एक जिम्मेदार व्यक्ति बन सकें. शिक्षा से बच्चों में यह भी समझने की क्षमता उजागर होती है कि उनके लिए क्या सही है और क्या गलत है. जब एक बच्चा एक उत्कृष्ट शिक्षा और अच्छी नैतिकता के साथ आगे बढ़ेगा, तभी देश का विकास होगा.*

**माता-पिता – बच्चों की शिक्षा का पहला चरण**

माता-पिता अपने बच्चे के प्रारंभिक बचपन के विकास को संवारने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं. शिक्षा का पहला अनुभव, बच्चा अपने घर से सीखता है. एक बच्चे के जीवन में उसका पहला विद्यालय (प्रथम पाठशाला) परिवार होता है. माता-पिता अपने बच्चे के भविष्य को एक आकार देने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं.

यदि बच्चे अपने घर में अधिक समय बिता रहे हैं, तो उनके माता-पिता को उन्हें एक स्वस्थ वातावरण देना चाहिए. माता-पिता एक कुम्हार की तरह होते हैं, क्योंकि कुम्हार जैसा चाहे उसी प्रकार से बर्तन को ढाल लेता है. इसलिए माता-पिता को अपने बच्चों को बचपन से ही वृद्धों का सम्मान, लोगों की मदद करना और दूसरों के साथ वस्तुओं का आदान-प्रदान करना आदि जैसे अहम नैतिक मूल्यों से अवगत कराना चाहिए. एक माता-पिता को अपने बच्चों को नए और परिवर्तनात्मक पहलुओं का पालन करने के लिए प्रेरित करना चाहिए.

**प्ले स्कूलों की स्थापना**

बच्चों के समग्र व्यक्तित्व के आधार का निर्माण करने में प्ले स्कूलों ने काफी योगदान दिया है. ये स्कूल बच्चों को वांछित विद्यालय में प्रवेश पाने के लिए तैयार करने में मदद करते हैं. प्ले स्कूल छोटे बच्चों में सामाजिक और शैक्षिक कौशल का विकास करते हैं. यह स्कूल बच्चों को अधिक अनुशासित और समयनिष्ठ बनाते हैं. 2 से 3 साल की उम्र के बीच के बच्चों को प्ले स्कूल में भेजा जाता है. प्ले स्कूल बच्चों को औपचारिक स्कूलों में जाने के विचार से परिचित कराने में मदद करते हैं. यह स्कूल बच्चों को दुनिया का सामना करने के लिए तैयार करते हैं.

**बच्चों को पढ़ाने की नवीन पद्धतियाँ**

भारतीय बच्चों के शिक्षण में उपयोग की जाने वाली पद्धतियाँ नवीन होनी चाहिए. कक्षा में बच्चों का ध्यान आकर्षित करने जैसी सबसे बड़ी चुनौती का अक्सर शिक्षक को सामना करना पड़ता है. आज की शिक्षा प्रणाली का मुख्य उद्देश्य बच्चों के दिमाग पर शिक्षा का लंबे समय तक प्रभाव डालना है. बच्चों को घर जाने के बाद कक्षा में क्या पढ़ाया गया था, यह याद रखने में सक्षम होना चाहिए.

हर बच्चे का स्वभाव भिन्न होता है और वह अलग-अलग शिक्षण तकनीक का पालन करता है. एक बार जब आप उन्हें उनकी पसंदीदा सीखने की शैली का अभ्यास कराते हैं, तो वह आपको आश्चर्यचकित करने में कभी असफल नहीं होते हैं. बच्चों को पढ़ाने और कक्षाओं को अधिक रोचक बनाने के लिए शिक्षकों द्वारा प्रयोग की जाने वाली कुछ नवीन पद्धतियाँ इस प्रकार हैं:-

**दृश्य (विजुअल) शिक्षण**

बच्चे देखकर बहुत कुछ सीखते हैं. इसलिए अपनी शिक्षण पद्धतियों में चित्र, चिह्न, चार्ट, रेखा-चित्र और रंगों को शामिल करके बच्चे की रुचि को जागृत किया जा सकता है.

**सुनना और सीखना**

एक पाठ को कहानी के रूप में परिवर्तित करके बताना, बच्चों की शिक्षा के प्रति रुचि को बढ़ाएगा. कक्षा में बच्चों के साथ गायन का उपयोग करके उनके मनोभाव में वृद्धि की जा सकती है.

**पहेलियाँ और खेल**

पहेलियों और खेलों की मदद से बच्चों को अभ्यास करवाएं और उनका कक्षा में अधिक मात्रा में उपयोग करें. इसके परिणामस्वरूप वे सक्रिय रूप से ऐसी गतिविधियों में भाग लेंगे.

### कक्षा के बाहर कक्षाएं लगाएं

जब हम बच्चों को उनकी कक्षा से बाहर ले जाते हैं, तो वे बहुत उत्सुकतापूर्वक चीजों को सीखते और याद करते हैं. इसलिए शिक्षा की प्रासंगिकता के लिए क्षेत्रीय भ्रमण का आयोजन करें.

### रोल प्ले (भूमिका निभाना)

यह किसी भी आयु वर्ग के बच्चों को पढ़ाने का सबसे उपयुक्त तरीका है. इस विधि से वे कक्षा में पढ़ाए गए पाठ को तुरंत समझ सकते हैं.

### स्मार्ट लर्निंग

एक बड़े छात्र को शिक्षित करने की तुलना में एक छोटे बच्चे को शिक्षित करना एक बहुत कठिन कार्य होता है. यह बच्चों में चीजों को समझने और उनकी व्याख्या करने तथा उन्हें सही दिशा देने के लिए महत्वपूर्ण है. यदि बच्चे शिक्षा की उचित पद्धतियों का अनुसरण करने में कामयाब नहीं होते हैं, तो वे बहुत जल्द शिक्षा के प्रति अपनी रुचि को खो देते हैं.

स्मार्ट लर्निंग मनोरंजन तथा शिक्षा का मिश्रण है. यह पद्धति न केवल कक्षाओं को सुव्यवस्थित करती है, बल्कि यह अभ्यास कराने में बच्चों की रुचि का भी विकास करती है. इसमें ऑडियो और वीडियो उपकरण का संयोजन शामिल है, जो बच्चों में अभ्यास की जिज्ञासा को बढ़ाने के लिए प्रभावी ढंग से उपयोग किए जाते हैं. खेल, खिलौने, पॉडकास्ट, फिल्म और टेलीविजन आदि जैसे उपकरणों का उपयोग शिक्षण सत्र में काफी काम करता है.

स्मार्ट लर्निंग आज के कई स्कूलों द्वारा अपनाई जाने वाली एक प्रचलित पद्धति बन गई है. इस अभ्यास के उद्भव के बाद ब्लैकबोर्ड की अवधारणा अपना अस्तित्व खो रही है और जब बच्चों की बात आती है, तो उनके लिए अवकाश, शिक्षा की तुलना में अधिक महत्वपूर्ण होता है. जब बच्चे इसे पसंद करने लगते हैं, तो उनके लिए यह स्मार्टलर्निंग की पद्धति काफी मजेदार हो जाती है.

### बाल निरक्षरता

शिक्षा के क्षेत्र में इतना विकास होने के बाद भी, भारत में अभी भी कुछ बच्चे ऐसे हैं, जो प्राथमिक शिक्षा से भी वंचित हैं. साक्षरता की कमी बच्चों और साथ ही साथ देश के विकास के लिए भी खतरा बनी हुई है.

बाल निरक्षरता के पीछे के प्रमुख कारणों में वित्तीयसंकट भी शामिल है, क्योंकि देश की ज्यादातर जनसंख्या गरीबी स्तर से नीचे जीवन यापन कर रही है, इसलिए वे अपने बच्चों को अच्छे स्कूलों में भेजने तथा वहाँ आने वाले खर्च को वहन नहीं कर पाते हैं. गाँवों और पिछड़े क्षेत्रों में सरकार द्वारा चलाए जाने वाले विद्यालयों में व्यापक निरक्षरता के परिणाम कम दिखाई पड़ते हैं. जब माता-पिता के पास घर का खर्च चलाने के लिए कोई विकल्प नहीं बचता है, तो वह परिवार की आजीविका के लिए बच्चों को काम करने के लिए भेज देते हैं.

बच्चों को शिक्षा के महत्व से परिचित करवाना बहुत महत्वपूर्ण है. शिक्षा की कमी से इस बात की संभावना रहती है कि वह बच्चे समाज के लिए खतरा बन सकते हैं.

### बाल निरक्षरता से लड़ने के लिए सरकार की पहल

भारत सरकार ने भारतीय शिक्षा प्रणाली में सुधार के लिए कई योजनाओं की शुरूआत की है. सरकार द्वारा गरीब परिवार के बच्चों को स्कूलों में जाने के लिए ''सर्व शिक्षा अभियान'' और ''मिड-डे मील'' जैसी योजनाएं चलाई जा रही हैं. सरकार भारत की साक्षरता दर बढ़ाने के लिए पिछड़े क्षेत्रों में भी स्कूलों की स्थापना कर रही है.

प्रत्येक बच्चे को स्कूल जाना चाहिए, क्योंकि प्रत्येक के पास शिक्षा का समान अधिकार है. किसी भी देश का विकास और समृद्धि वहाँ के नागरिकों के बचपन से प्राप्त होने वाली शिक्षा की गुणवत्ता पर निर्भर करती है. प्रत्येक बच्चा अपने आप में खास अर्थात् हर बच्चे में कोई न कोई खूबी मौजूद होती है. इसलिए हमें बच्चों की कार्यक्षमता की पहचान करनी चाहिए और उन्हें सही दिशा में मार्गदर्शन करवाना चाहिए. आखिरकार आज के बच्चे कल का भविष्य होंगे.

विवेक साव

# बचपन:
# हमारे व्यक्तित्व का निर्माता

एक छोटा बच्चा प्रायः यही सोचता रहता है कि वह बड़ा होगा तो बहुत कुछ करेगा, किंतु वास्तविकता तो यह है कि परिपक्वता प्राप्त करने पर कोई व्यक्ति वही करता है जो कि उसे उसके बचपन ने दिया होता है. यह बहुत ही रोचक एवं विचित्र तथ्य है कि किसी भी बच्चे का व्यक्तित्व कैसा होगा और आगे चलकर वह क्या करेगा या बनेगा, उसका 90 प्रतिशत उसके जीवन के प्रथम छः वर्ष ही निर्धारित कर देते हैं, ऐसा अधिकांश शिक्षा मनोवैज्ञानिकों का मत है. इतना ही नहीं, किसी व्यक्ति के मन में बनने वाली अवधारणाएं तथा उसकी आदतें व प्रवृत्तियाँ, सब कुछ किसी बच्चे के बचपन में ही निर्धारित हो जाती हैं.

आज कॉर्पोरेट जगत में औसत आयु कम हो रही है और जाहिर सी बात यह है कि इस क्षेत्र से जुड़े हुए अधिकांश लोगों के सामने अपने बच्चों का लालन-पालन एवं उनका चहुंमुखी विकास एक प्रतिस्पर्धात्मक चुनौती बन गया है. ऐसे में यह आवश्यक है कि हम महान मनोवैज्ञानिकों एवं शिक्षा शास्त्रियों द्वारा किये गये शोध कार्यों के आलोक में अपनी भावी पीढ़ी के भविष्य निर्धारण का प्रयास करें.

इस संदर्भ में एक प्रश्न बहुधा उठाया जाता है कि क्या किसी बच्चे के गुण-दोष उसे अपने पूर्वजों से प्राप्त होते हैं या वह उन्हें स्वयं विकसित करता है. इसके उत्तर में यही कहा जा सकता है कि जहाँ तक बात शारीरिक संरचना की है, वह तो किसी बालक-बालिका को उसके माता-पिता या उससे पहले की पीढ़ी द्वारा प्राप्त हो सकते हैं, कुछ वंशानुगत रोग अपने पूर्वजों से मिल सकते हैं, किंतु वातावरण किसी के आंतरिक व्यक्तित्व के निर्माण में अहम भूमिका अदा करता है. मनोवैज्ञानिकों ने पाया है कि प्रायः ग्रामीण क्षेत्र के बच्चे अधिक मिलनसार होते हैं, जबकि शहरी क्षेत्र के बच्चे लोगों से अधिक मेलजोल नहीं रख पाते, ऐसा होने के पीछे उनका परिवेश उत्तरदायी होता है, क्योंकि ग्रामीण बच्चों को माहौल खुला-खुला मिलता है और किसी प्रकार का दबाव उन पर नहीं होता, जबकि शहरी बच्चों के साथ कई प्रकार की पाबंदियाँ होती हैं. जब दो जुड़वाँ बच्चों को भिन्न-भिन्न परिवेश में पाला गया तो ज्ञात हुआ कि उन दोनों का व्यक्तित्व एक दूसरे से भिन्न था.

इस विचार को बी. एफ. **स्कीनर** जैसे विचारकों ने प्रमुखता के साथ स्थापित किया है. **स्कीनर** के अनुसार नवजात शिशु किसी खाली स्लेट की भाँति होता है और **व्यक्तित्व** जैसा कुछ नहीं होता है. जो कुछ भी है वह व्यवहार में निहित है. उनके अनुसार बच्चा जो कुछ देखता है और जो कुछ अपने वातावरण से पाता है, वही उसका व्यवहार बन जाता है. यदि वह बचपन में अपने माता-पिता को मुस्कराते हुए देखता है, तो वह भी मुस्कराने लगता है. इसी तरह से जब उसे किसी काम के लिए प्रोत्साहन मिलता है, तो वह यह सीख जाता है कि उक्त काम को करना चाहिए. जिस काम से प्रोत्साहन नहीं मिलता, बल्कि डाँट पड़ती है, उस काम को वह या तो नहीं करेगा, या फिर ऐसे लोगों के सामने नहीं करेगा जो उसे डाँट सकते हैं. प्रोत्साहन एवं उत्प्रेरण का यह चक्र जीवन में प्रत्येक स्तर पर दोहराया जाता है.

## बाल विकास के महत्वपूर्ण 5 चरण

**फ्रायडवादी** मनोवैज्ञानिक डॉलार्ड एवं मिलर का विचार है कि किसी भी बच्चे को इच्छा, संकेत, प्रतिक्रिया तथा पुरस्कार या फल प्राप्ति से ही सीखने को मिलता है. जैसे नवजात शिशु को भूख लगती है, जिसका एहसास उसे पेट में होता है, इस पर वह रो कर प्रतिक्रिया देता है और परिणाम स्वरूप उसे माँ से भोजन अर्थात् दूध की प्राप्ति होती है. इस तरह से बच्चा यह सीख जाता है कि उसे रोने पर भोजन की प्राप्ति होगी. **फ्रायड** के **मनोविश्लेषणवाद** के सिद्धांत को आगे बढ़ाते हुए डॉलार्ड एवं मिलर ने किसी भी बच्चे के विकास के मुख्य रूप से 4 चरण बताए हैं, जबकि फ्रायड ने इन चरणों को 5 बताया है. इन चरणों में ही किसी व्यक्ति का व्यक्तित्व बनता एवं निखरता है. उनका मत है कि कोई बच्चा महज **कोरी स्लेट** नहीं होता है. वह अपने आप में सृजनशील भी होता है. विकास के 4 चरणों जिनसे व्यक्तित्व का निर्माण एवं विकास होता है, हम इस प्रकार से समझ सकते हैं-

1. **भोजन प्राप्ति काल :** यह बच्चे के जन्म से लेकर 18 माह तक का महत्वपूर्ण समय होता है, जिसमें बच्चा भोजन द्वारा ही हर प्रकार का सुख प्राप्त करता है. इस आयु में बच्चे की भोजन विषयक आवश्यकताओं का पूर्ण किया जाना अत्यंत आवश्यक है. यदि

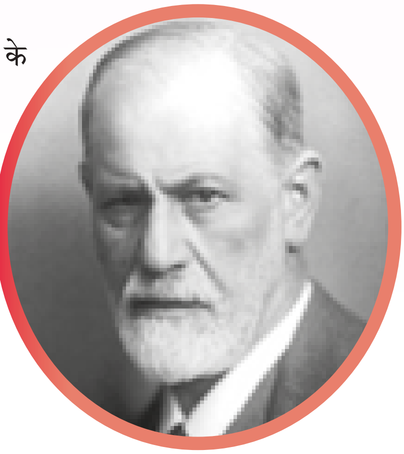

आवश्यकता से कम आहार दिया जाए अथवा आहार के दिये जाने में कोताही बरती जाती है, तो **फ्रायड** के अनुसार ऐसे बच्चे युवा अवस्था प्राप्त करने पर खाद्य आक्रामक हो सकते हैं, उनमें चिड़चिड़ापन आ जाता है, वे विवाद प्रिय हो जाते हैं, अधिक जिद्दी हो सकते हैं एवं षड्यंत्र करने वाले हो सकते हैं. यदि भोजन अधिक मात्रा में दिया जाता है और बच्चे का आवश्यकता से अधिक ध्यान रखा जाता है तो ऐसी स्थिति में बच्चों में अकर्मण्यता, सीधापन, अपनी ओर लोगों का ध्यान आकर्षित करने का गुण आदि विकसित हो सकता है. इससे आगे अति पोषित शिशु आगे चलकर धूम्रपान, मद्यपान, जैसे व्यसनों का शिकार हो सकते हैं. ऐसे में यह आवश्यक है कि इस काल में भोजन पर विशेष ध्यान देते हुए उसे संतुलित भोजन दिया जाना चाहिए.

2. **व्यक्तिगत स्वच्छता :** डेढ़ वर्ष से तीन वर्ष की आयु में किसी बच्चे को अपने मल-मूत्र संबंधी आदतों की जानकारी होने लगती है और वह इन पर नियंत्रण एवं इनके विषय में सूचना देना भी प्रारंभ कर देता है. ऐसे में बच्चे को उसकी व्यक्तिगत सफाई विषयक जानकारी दी जानी चाहिए और सामाजिक नियमों की जानकारी दी जानी चाहिए. इस आयु वर्ग के बच्चों के साथ उनके मल-मूत्र विसर्जन विषयक प्रशिक्षण देने में उदारता बरती जानी चाहिए. ऐसा न किये जाने पर या उसे डाँट-फटकार मिलने पर बच्चे में चिंतित रहने तथा हठ करने की प्रवृत्ति बढ़ती है. इसके साथ ही उसमें कृपणता का विकास होता है. इस क्षेत्र में अति उदारता बरतने से अर्थात् बच्चे को उचित प्रशिक्षण न देने पर बड़े होने पर बच्चा सब चलता है वाली प्रवृत्ति अपना लेता है. इसके साथ ही वह अपने आप को लेकर अव्यवस्थित हो जाता है. लापरवाही, आलस्य, क्रूरता एवं विद्रोही प्रवृत्ति जैसे अवगुण भी उसमें दृष्टिगोचर हो सकते हैं. इस अवस्था में जो बच्चे शौचालय आदि का समुचित उपयोग करना सीख जाते हैं, वे ही अगले चरण में प्रवेश करते हैं.

3. **फेलिक चरण या लैंगिक चरण : फ्रायड** कहते हैं कि 3 वर्ष से 6 वर्ष की आयु में बच्चे के मन में अपने शरीर विषयक स्वाभाविक जिज्ञासा का विकास होता है. इस अवस्था में बच्चे स्वयं के व विपरीत लिंग के विषय में जानने में रुचि दिखाते हैं. प्रायः **डाक्टर-डाक्टर** जैसे खेल खेलने में उनकी रुचि बढ़ती है. विपरीत लिंग के माता-पिता के प्रति आकर्षण होता है. यदि इस अवस्था में समान लिंग वाले अभिभावक अथवा माता-पिता के साथ संबंध ठीक नहीं रहते हैं, अर्थात् उनकी ओर से यदि डाँट-फटकार मिलती है तो आजीवन उनके साथ बेहतर संबंध स्थापित करने में कठिनाई आती है. भारतीय परिवेश में इसे पिता-पुत्र के संबंधों के संदर्भ में समझा जा सकता है. यदि इस अवस्था में बच्चे अपने समान लिंग वाले अभिभावकों के साथ सामन्जस्य स्थापित करने में असफल रहते हैं तो ऐसी स्थिति में युवा अवस्था में पहुंचने पर उन्हें विभिन्न प्रकार के **भय अर्थात् फोबिया, दुश्चिंताएं तथा अवसाद** का सामना करना पड़ता है.

4. **प्रसुप्ति काल :** यह अवस्था 6 वर्ष के पश्चात प्रारंभ होती है. किसी बालक के जीवन के प्रारंभिक 6 वर्षों की तरह उथल-पुथल इस काल में नहीं रहती. प्रायः बच्चे अपने समान लिंग वाले साथियों का साहचर्य अधिक पसंद करते हैं. यह अवस्था एकदम शांत होती है.

5. **किशोरावस्था:** यह अवस्था पुनः उथल-पुथल लेकर आती है. इसमें स्वयं को स्थापित करने की अभिलाषा एवं अभिभावकों से संघर्ष पुनः आरंभ हो जाता है. यह संघर्ष जितना अधिक होगा, आगे चलकर किशोर अथवा किशोरी को सामाजिक एवं अंतरंग संबंधों की स्थापना में उतनी ही अधिक कठिनाई का सामना करना पड़ेगा.

हालाँकि **फ्रायड** एवं उनके समर्थकों का मत भी एक पक्षीय प्रतीत होता है, क्योंकि इसमें बहुत से मनोवैज्ञानिक पहलुओं का उल्लेख नहीं किया गया है. अन्य वैज्ञानिकों ने कई अन्य सिद्धांत प्रस्तुत किये हैं. उन सभी को इस छोटे से लेख में समेट पाना संभव नहीं है. यदि हम चाहें तो **फ्रायड** के **मनोविश्लेषणवाद** से बहुत कुछ प्राप्त कर सकते हैं, जिससे हम अपनी भावी पीढ़ी को एक बेहतर एवं सुरक्षित जीवन प्रदान कर सकें.

अर्पित जैन
स्टा.प्र.के., भोपाल

# भारत सरकार, गृह मंत्रालय से यूनियन बैंक पुरस्कृत

बैंक की गृह पत्रिका 'यूनियन सृजन' को वित्तीय वर्ष 2018-19 के लिए 'ख' क्षेत्र में भारत सरकार, गृह मंत्रालय, राजभाषा विभाग द्वारा राजभाषा कीर्ति पुरस्कार के अंतर्गत 'द्वितीय' पुरस्कार के लिए चुना गया.

पूर्व आंध्रा बैंक अब यूनियन बैंक ऑफ इंडिया की गृह पत्रिका 'राजभाषा सरिता' को वित्तीय वर्ष 2018-19 के लिए 'ग' क्षेत्र में भारत सरकार, गृह मंत्रालय, राजभाषा विभाग द्वारा राजभाषा कीर्ति पुरस्कार के अंतर्गत 'द्वितीय' पुरस्कार के लिए चुना गया.

पूर्व कॉर्पोरेशन बैंक अब यूनियन बैंक ऑफ इंडिया को वित्तीय वर्ष 2019-20 के लिए 'ग' क्षेत्र में भारत सरकार, गृह मंत्रालय, राजभाषा विभाग द्वारा राजभाषा कीर्ति पुरस्कार के अंतर्गत राष्ट्रीयकृत बैंक श्रेणी में 'प्रथम' पुरस्कार के लिए चुना गया.

पूर्व आंध्रा बैंक (नराकास - विशाखापट्टनम) अब यूनियन बैंक ऑफ इंडिया को वित्तीय वर्ष 2019-20 के लिए 'ग' क्षेत्र में भारत सरकार, गृह मंत्रालय, राजभाषा विभाग द्वारा राजभाषा कीर्ति पुरस्कार के अंतर्गत नराकास श्रेणी में 'द्वितीय' पुरस्कार के लिए चुना गया.

पूर्व आंध्रा बैंक अब यूनियन बैंक ऑफ इंडिया की स्टाफ सदस्य सुश्री सुलक्षणा डनसाना के लेख 'बैंकों के व्यवसाय वृद्धि में कौशल विकास का महत्व' के लिए हिंदीतर भाषी क्षेत्र के लिए वित्तीय वर्ष 2019-20 के लिए राजभाषा विभाग, गृह मंत्रालय, भारत सरकार द्वारा राजभाषा गौरव पुरस्कार के अंतर्गत 'तृतीय' पुरस्कार के लिए चुना गया.

नराकास (बैंक) पटना, भारतीय रिजर्व बैंक द्वारा वर्ष 2019-20 के दौरान बैंकों में राजभाषा नीति के उत्कृष्ट कार्यान्वयन हेतु क्षे.का. पटना को प्रथम पुरस्कार हेतु चुना गया. दि. 16.07.2020 को प्राप्त ईमेल द्वारा इसकी घोषणा की गई.

# नराकास, बेंगलूरु

नराकास बैंक बेंगलूरु की दि. 17.08.2020 को माइक्रोसॉफ्ट टीम्स के माध्यम से आयोजित 69वीं छमाही बैठक में वित्तीय वर्ष 2019-20 में राजभाषा हिन्दी के उत्कृष्ट कार्यान्वयन हेतु क्षे.का., बेंगलूरु (दक्षिण) को प्रथम पुरस्कार प्राप्त हुआ. इस वर्चुअल बैठक में राजभाषा विभाग, गृह मंत्रालय, भारत सरकार के प्रतिनिधि श्री के.पी.शर्मा, उप निदेशक के अतिरिक्त बैंक से क्षेत्र महाप्रबंधक, बेंगलूरु श्री बी.श्रीनिवास राव व क्षेका, बेंगलूरु (दक्षिण) के क्षेत्र प्रमुख श्री टी.नञ्जुंडप्पा, उप महाप्रबंधक भी जुड़े थे.

**नराकास बैंक बेंगलूरु की दि. 17.08.2020 को माइक्रोसॉफ्ट टीम्स के माध्यम से आयोजित 69वीं छमाही बैठक में वित्तीय वर्ष 2019-20 में राजभाषा हिन्दी के उत्कृष्ट कार्यान्वयन हेतु क्षे.का., बेंगलूरु (उत्तर) को द्वितीय पुरस्कार प्राप्त हुआ.**

**नराकास बैंक बेंगलूरु की दि. 17.08.2020 को माइक्रोसॉफ्ट टीम्स के माध्यम से आयोजित 69वीं छमाही बैठक में वित्तीय वर्ष 2019-20 में राजभाषा हिन्दी के उत्कृष्ट कार्यान्वयन हेतु स्टाफ महाविद्यालय बेंगलूरु को भी द्वितीय पुरस्कार प्राप्त हुआ.**

**69वीं छमाही बैठक में वित्तीय वर्ष 2019-20 में राजभाषा हिन्दी के उत्कृष्ट कार्यान्वयन हेतु क्षे.का., बेंगलूरु (पूर्व) को प्रोत्साहन पुरस्कार प्राप्त हुआ.**

---

दि. 08.09.2020 को नराकास कंडला/गांधीधाम द्वारा वर्ष 2019 में उत्कृष्ट राजभाषा कार्यनिष्पादन हेतु कार्पोरेशन बैंक गांधीधाम शाखा (अब यूनियन बैंक ऑफ इंडिया) को बैंकिंग कार्यालय वर्ग में प्रथम पुरस्कार दिया गया. दीनदयाल पोर्ट ट्रस्ट एवं नराकास कंडला/गांधीधाम के अध्यक्ष श्री संजय कुमार मेहता के कर कमलों से राजभाषा शील्ड और प्रमाणपत्र ग्रहण करते हुए शाखा प्रमुख श्री यश भेतारिया, शाखा हिन्दी प्रतिनिधि श्री मनोहर सांखला तथा साथ में फोरेक्स प्रमुख श्री प्रणव पण्ड्या.

नराकास (बैंक), पटना के तत्वावधान में सेंट्रल बैंक ऑफ इंडिया द्वारा दि. 11.06.2020 को आयोजित ऑनलाइन राजभाषा एवं सामान्य ज्ञान (क्विज) प्रतियोगिता में यूनियन बैंक के स्टाफ सदस्य श्री कुंदन कुमार एवं श्री सौरभ आनंद ने प्रथम तथा द्वितीय पुरस्कार प्राप्त किया.

श्री कुंदन कुमार

श्री सौरभ आनंद

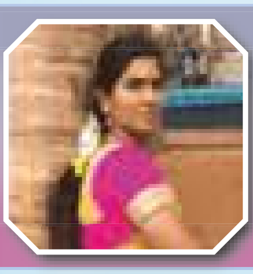

आत्म निर्भर भारत अभियान के बारे में आयोजित नराकास की निबंध प्रतियोगिता में श्रीमती एन वी एन आर अन्नपूर्णा, क्षे म प्र कार्यालय, विशाखापट्टनम को द्वितीय पुरस्कार प्राप्त हुआ. कोविड - 19 के कारण नराकास की बैठक वीसी मोड पर हुई तथा पुरस्कार की रकम खाते में जमा की गई.

पंजाब नेशनल बैंक द्वारा अखिल भारतीय अंतर बैंक हिंदी निबंध प्रतियोगिता में श्री पी सी पाणिग्राही, के का मुंबई ने प्रोत्साहन पुरस्कार प्राप्त किया.

पंजाब नेशनल बैंक द्वारा अखिल भारतीय अंतर बैंक हिंदी निबंध प्रतियोगिता में श्री दीपक गुलवानी, क्षे का राजकोट ने प्रोत्साहन पुरस्कार प्राप्त किया.

# हिंदी दिवस का आयोजन

क्षे.का., उडुपी

क्षे.का., गुवाहाटी

क्षे.का., सिकंदराबाद

क्षे.का., नेल्लूर

क्षे.का., गाजीपुर

क्षे.का., मुंबई (अंधेरी)

क्षे.का., मदुरै

क्षे.म.का. व क्षे.का., बेंगलूरु (दक्षिण)

क्षे.का., प्रयागराज

क्षे.म.प्र.का., विशाखापट्टनम

क्षे.म.प्र.का., लखनऊ

क्षे.का., हावड़ा

क्षे.का., बड़ौदा

क्षे.म.प्र.का., वाराणसी

क्षे.का., आगरा

क्षे.म.का. एवं क्षे.का., भोपाल (सेंट्रल)

क्षे.म.प्र.का. एवं क्षे.का., अहमदाबाद

क्षे.का., दुर्गापुर

क्षे.म.प्र.का., भुवनेश्वर एवं क्षे.का., कटक

क्षे.का., गांधीनगर

क्षे.का., पुणे

स्टा.प्र.कें., भुवनेश्वर

क्षे.का., इंदौर

क्षे.का., रायपुर

क्षे.का., मेहसाणा

क्षे.का., जूनागढ़

क्षे.का., राजकोट

क्षे.म.प्र.का., विजयवाड़ा

क्षे.का., कोट्टयम

क्षे.का., समस्तीपुर

क्षे.का., अयोध्या

क्षे.का., पटना

क्षे.का., सूरत

क्षे.का., दिल्ली (सेंट्रल)

क्षे.का., कोज़िकोड

क्षे.का., तिरुवनंतपुरम

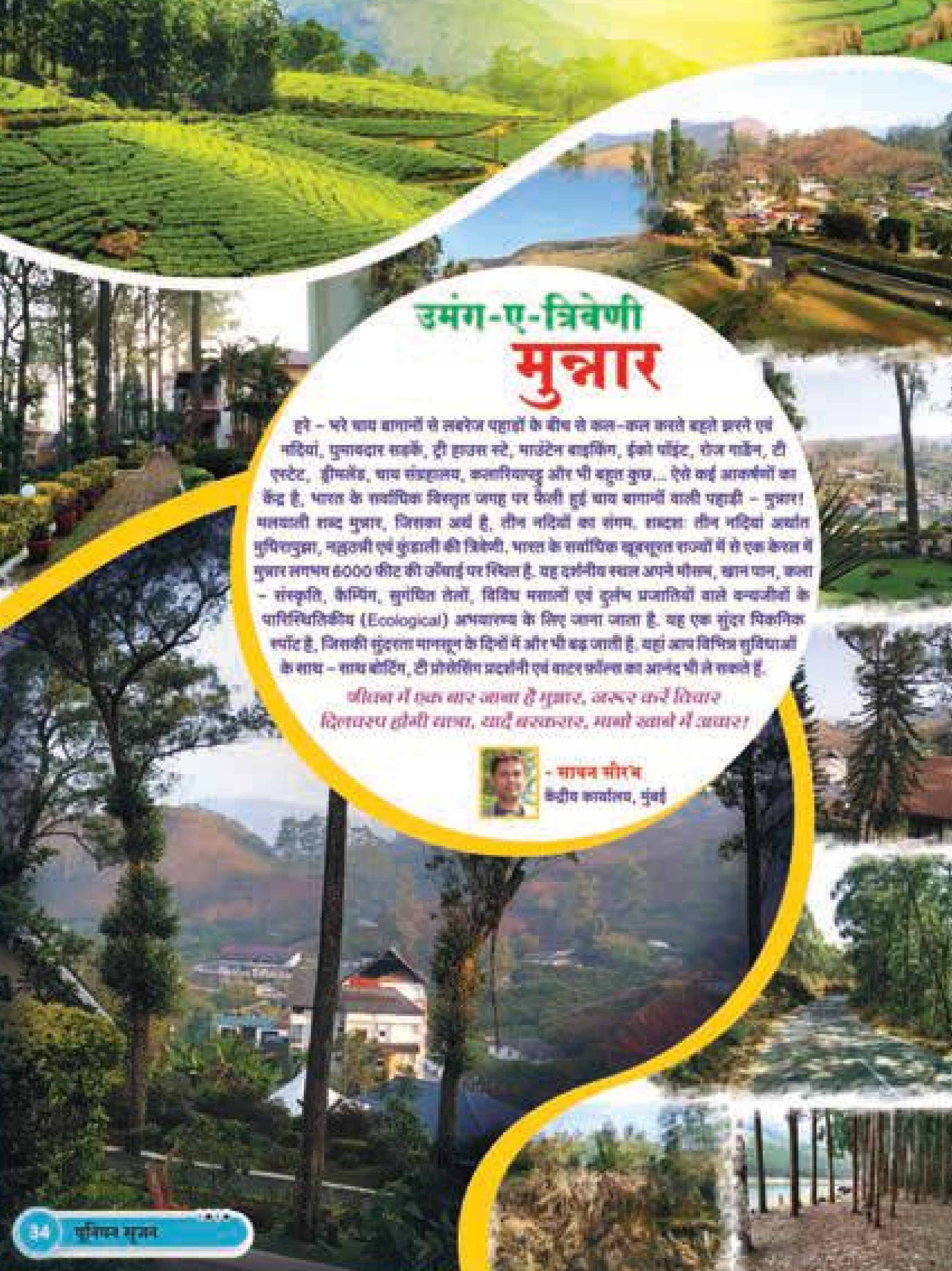

## उमंग-ए-त्रिवेणी

# मुन्नार

हरे – भरे चाय बागानों से लबरेज पहाड़ों के बीच से कल-कल करते बहते झरने एवं नदियां, घुमावदार सड़कें, ट्री हाउस स्टे, माउंटेन बाइकिंग, ईको पॉइंट, रोज गार्डन, टी एस्टेट, ड्रीमलैंड, चाय संग्रहालय, कन्नानिवाडु और भी बहुत कुछ... ऐसे कई आकर्षणों का केंद्र है, भारत के सर्वाधिक विस्तृत जगह पर फैली हुई चाय बागानों वाली पहाड़ी – मुन्नार! मलयाली शब्द मुन्नार, जिसका अर्थ है, तीन नदियों का संगम, शब्दशः तीन नदियां अर्थात मुथिरापुझा, नल्लतन्नी एवं कुंडाली की त्रिवेणी. भारत के सर्वाधिक खूबसूरत राज्यों में से एक केरल में मुन्नार लगभग 6000 फीट की ऊँचाई पर स्थित है. यह दर्शनीय स्थल अपने मौसम, खान पान, कला – संस्कृति, कैम्पिंग, सुगंधित तेलों, विविध मसालों एवं दुर्लभ प्रजातियों वाले वन्यजीवों के पारिस्थितिकीय (Ecological) अभयारण्य के लिए जाना जाता है. यह एक सुंदर पिकनिक स्पॉट है, जिसकी सुंदरता मानसून के दिनों में और भी बढ़ जाती है. यहां आप विभिन्न सुविधाओं के साथ – साथ बोटिंग, टी प्रोसेसिंग प्रदर्शनी एवं वाटर फॉल्स का आनंद भी ले सकते हैं.

*जीवन में एक बार जाना है मुन्नार, जरूर करें विचार*
*दिलचस्प होगी यात्रा, यादें बरकरार, मानो ख्वाबों में आकार!*

- सावन सौरभ
केंद्रीय कार्यालय, मुंबई

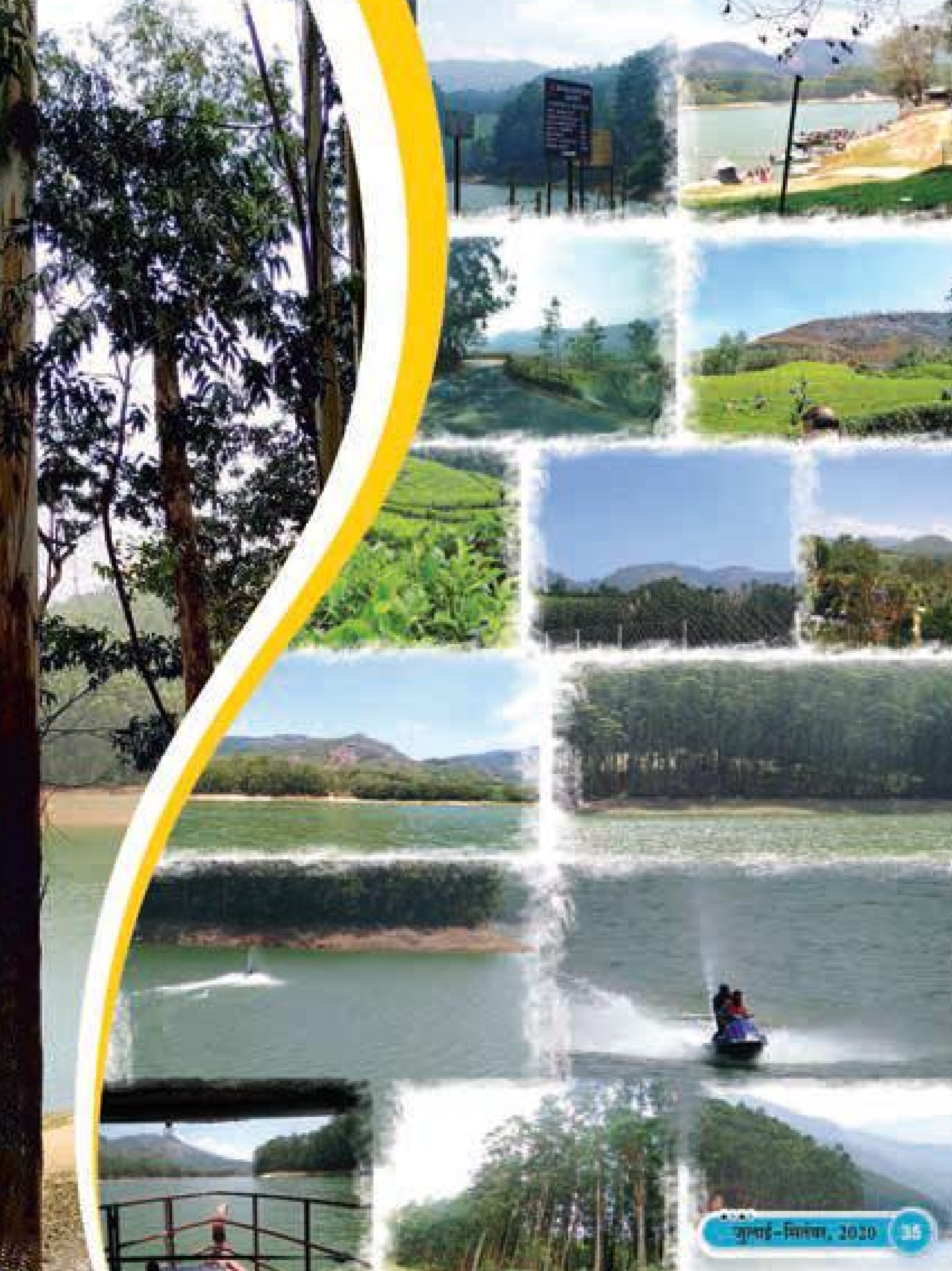

# मेरी चार धाम यात्रा

मेरा हमेशा से ऐसा मानना रहा है कि दूसरों के साथ अपने अनुभव साझा करने से यात्रा का आनंद दोगुना हो जाता है. इसी सोच के साथ मैं अपनी चार धाम यात्रा का अनुभव आप लोगों के साथ साझा करना चाहती हूँ. अब से कुछ 11 वर्ष पूर्व सन् 2009 की बात है, हमारे परिवार व कुछ मित्रों ने चार धाम यात्रा करने का निश्चय किया. हमारे कुछ रिश्तेदारों ने कई बार चार धाम यात्रा की थी. अतः हमने सर्वप्रथम उनसे मार्गदर्शन लिया. तदनंतर, एक ट्रैवल एजेंसी से संपर्क किया व पर्याप्त कपड़े, कुछ दवाइयाँ व आवश्यक सामान लेकर दिनांक 28.04.2009 को 5 लोगों के समूह के साथ बेंगलूरु से हवाई जहाज से दिल्ली के लिए निकल पड़े.

दिल्ली से हरिद्वार तक की यात्रा सरकारी बस से पूरी करनी थी. हरिद्वार पहुँचने का हमारा निर्धारित समय रात 9 बजे था, परंतु गाजियाबाद के आगे एक बस दुर्घटना के कारण हाइवे जाम हो गया था. इस कारण हम लोग रात 1.00 बजे हरिद्वार पहुंचे. भूख के मारे सबका बुरा हाल था. अतः भोजन के पश्चात पूर्व निर्धारित होटल में हमने विश्राम किया.

अगले दिन प्रातः10 बजे हरिद्वार से टैक्सी द्वारा यमुनोत्री की यात्रा आरंभ हुई. टेड़े मेढ़े पथरीले रास्तों पर पूरे दिन यात्रा के पश्चात सायं लगभग 8.00 बजे हम राणा चेट्टी पहुंचे. सब लोग बहुत थक गए थे, अतः भोजनोपरांत वहीं होटल में रुक गए. वैसे भी पहाड़ों में रात को यात्रा करना खतरनाक होता है.

राणा चेट्टी से 30 अप्रैल, 2009 को प्रातः 8.00 बजे टैक्सी द्वारा जानकी चेट्टी के लिए निकले. हमें पहले ही बता दिया गया था कि शाम को यहीं वापस आकर रुकना है. जानकी चेट्टी से 6 कि.मी. पैदल चलकर यमुनोत्री पहुँचना था. परंतु, 4 किमी के बाद मेरी दीदी को थकान के कारण आगे बढ़ना मुश्किल हो गया. अतः उन्हें पिट्ठू में बैठाना पड़ा. पिट्ठू एक टोकरी जैसी सीट होती है जिसे वहाँ के स्थानीय निवासी व कुछ नेपाली अपनी पीठ पर बांधकर उसमें तीर्थयात्रियों को बैठाकर पैदल चलते हैं. दोपहर 2 बजे तक यमुनोत्री पहुँचते-पहुँचते हम सब लोग थक कर चूर हो गए थे. परंतु निर्मल यमुना जी के दर्शन होते ही हमारी थकान काफूर हो गयी. पहाड़ों से छनकर आ रही ठंडी हवाओं ने तो मानो जादू ही कर दिया. मन ही मन में यह सोच रही थी कि अब तक मैं यहाँ क्यों नहीं आई. पवित्र यमुना में स्नान के समय अद्भुत चैतन्य का अनुभव हो रहा था. उस अनुभव को शब्दों में बयान करना शायद मेरे बस की बात नहीं है. स्नान के पश्चात हम सभी कुछ देर ध्यानावस्था में वहीं बैठे रहे. सच कहें तो वहाँ से उठने का मन ही नहीं कर रहा था. यमुना का जल अपने उद्गम स्थल पर बहुत गरम रहता है, परंतु बहते हुए यहाँ तक पहुँच कर सामान्य हो जाता है. तदनंतर सायं 06 बजे तक हम वापस राणाचेट्टी पहुँच कर भोजनोपरांत विश्राम किए.

अगले दिन अर्थात 01 मई, 2009 को प्रातः 8.00 बजे राणाचेट्टी से अपने अगले पड़ाव उत्तरकाशी के लिए निकल पड़े. आगे की पूरी यात्रा जंगली रास्तों से होते हुए थी. एक स्थान पर सड़क के बीच में एक बड़ा सा पेड़ गिरा हुआ था, जिसे जंगल विभाग के कर्मचारियों ने हटाकर रास्ता खोला. मार्ग में कुछ दृश्य तो इतने रमणीय थे कि हम लोग कार से उतरकर प्रकृति के सौन्दर्य का आनंद लेने से खुद को नहीं रोक सके. दोपहर लगभग 03 बजे हम लोग उत्तरकाशी पहुंचे. भोजनोपरांत हम लोग विश्वनाथ जी के मंदिर में दर्शन किए. शाम के समय स्थानीय बाजार भ्रमण के बाद वहीं पर रात्रि विश्राम किए.

अगले दिन प्रातः गंगोत्री के लिए निकले. गंगोत्री ही माँ गंगा का जन्म स्थान है. दोपहर 12.00 बजे के लगभग हम लोग गंगोत्री पहुँच गए. गंगोत्री के गंगारानी घाट पर सबने गंगा स्नान किया. यहाँ गंगा तट पर खड़े हो कर प्रकृति देवी के अद्भुत सौन्दर्य का दर्शन कर सभी मंत्रमुग्ध हो गए. घाट से थोड़ा ऊपर माँ गंगा का एक मंदिर है, जिसमें गंगा पृथ्वी पर कैसे आई, इसका चित्रण किया गया है. हम एक बोतल में पवित्र गंगा जल भर कर, भारी मन से वापस होटल आ गए.

अगले पड़ाव गौरीकुंड के लिए हमारी यात्रा अगले दिन प्रातः 6 बजे ही आरंभ हो गयी. रास्ते में गुप्तकाशी के दर्शन के उपरांत वहीं भोजन हेतु एक होटल में रुके. होटल में बेंगलूरु से आया यात्रियों का एक समूह मिला. उनके पास घर से लाया हुआ कुछ भोजन था. कई दिनों बाद दक्षिण भारतीय भोजन मिलने से हमें अत्यंत आत्मिक संतुष्टि मिली. सायं 05.30 बजे हम गौरीकुंड पहुंचे. शाम होने वाली थी, अतः हमने तुरंत गौरीकुंड में स्नान किया. उसके बाद स्थानीय बाजार का भ्रमण कर वहीं पर रात्रि विश्राम किए.

04 मई को प्रातः 5.30 बजे ही केदारनाथ की यात्रा आरंभ हो गयी. वहाँ से केदारनाथ पहुँचने के लिए पैदल के अतिरिक्त घोड़ा व डोली द्वारा यात्रा का विकल्प होता है. डोली द्वारा यात्रियों को लेकर जाना बहुत ही मेहनत वाला काम है. चार लोग मिलकर एक आदमी को डोली में बैठाकर पैदल ले जाते हैं. यह इतना थकाऊ काम है कि थोड़ी-थोड़ी देर पर इन्हें रुककर सुस्ताना व नाश्ता लेना पड़ता है. यहाँ सरकारी काउंटर पर डोलियों की बुकिंग होती है. बुकिंग के समय बच्चों के लिए अलग व लोगों के वजन के स्लैब के अनुसार डोली का किराया कम या अधिक रहता है. टिकट काउंटर पर बहुत से कामवाले लोग बैठे रहते हैं. उनकी बारी आने पर उन्हें बुलाया जाता है. वे जिस व्यक्ति को ऊपर लेकर जाते है, उन्हें वापस लाना भी उन्हीं की ज़िम्मेदारी होती है. हम लोगों ने भी डोली से जाने का निर्णय लिया.

केदारनाथ मंदिर मार्ग में बहुत ज्यादा शांति रहती है. प्रकृति की गोद में बसे इस स्थान पर जिधर भी नजर घुमाइए नीले अंबर के नीचे चारो तरफ हरे भरे पहाड़ ही दिखाई देंगे. मार्ग में इक्का-दुक्का चाय की छोटी-छोटी दुकानें दिख जाएंगी, जिसमें से बांसुरी की मधुर ध्वनियों के साथ नेपाली संगीत सुनाई देता है. वहाँ की प्राकृतिक छटा का वर्णन करना शायद मेरे बस की बात नहीं है. आप लोग स्वयं ही वहाँ जाकर इसका बेहतर अनुभव कर सकते हैं. केदार घाटी में अचानक बर्फीली बारिश होती रहती है, अतः वहाँ पतले पालिथीन की सस्ती रेनकोट तत्काल पहनने के लिए मिल जाती है. हमने भी 20 रुपये की सस्तीवाली रेनकोट पहनकर आगे की यात्रा पूरी की. लगभग साढ़े ग्यारह बजे हम केदारनाथ मंदिर पहुँच गए. मंदिर में बहुत भीड़ थी, अतः लाइन में लगकर करीब दो घंटे में हमने केदारनाथ जी के दर्शन किए.

भोजन के उपरांत वापसी की यात्रा आरंभ हुई. हमें उसी पिट्ठू में वापस आना होता है. वापसी यात्रा काफी सुखद होती है, क्योंकि पुनः एक बार हमें प्रकृति माँ के सौंदर्य का दीदार होता है. गौरीकुंड से सोनप्रयाग आकर उस दिन हम वहीं ठहर गए. शाम को सोनप्रयाग में त्रियुग नारायण मंदिर में दर्शन करने का सौभाग्य प्राप्त हुआ. कहा जाता है कि इसी स्थान पर शिव-पार्वती का विवाह संपन्न हुआ था. यहाँ हवन कुंड में अग्नि हमेशा जलती रहती है. सभी तीर्थ यात्री उस कुंड में कुछ लकड़ी अवश्य डालते हैं, ताकि अग्नि बुझे नहीं. किंवदंती है कि यह अग्नि शिव-पार्वती के विवाह से अब तक लगातार जल रही है और अनंतकाल तक जलती रहेगी.

05 मई, 2009 को प्रातः 7.30 बजे बद्रीनाथ धाम के लिए हमारी आगे की यात्रा आरंभ हुई. पथरीले रास्तों पर पूरे दिन टैक्सी द्वारा यात्रा करनी थी. मई के महीने में भी वहाँ कड़ाके की ठंड पड़ रही थी. यात्रा लंबी व थकाऊ थी. दोपहर 1 बजे के करीब एक छोटे से ढाबे पर हमने भोजन किया. फिर एक दो स्थानों पर रुककर चाय की चुस्कियां ली. शाम 5 बजे तक बद्रीनाथ धाम पहुँचते-पहुँचते हम सभी थककर चूर हो चुके थे. वहीं होटल लेकर थोड़ा आराम व चाय के उपरांत शाम को ही बद्रीनाथ के दर्शन के लिए निकल पड़े. दर्शन व भोजन के उपरांत होटल में रात्रि विश्राम किए.

अगले दिन 06 मई को स्नान के पश्चात हमने पुनः बद्रीनाथ जी के दर्शन किए. दर्शन के उपरांत अपने अगले पड़ाव मानागाँव के लिए निकल पड़े. दोपहर लगभग 1.00 बजे हम मानागाँव पहुंच गए. मानागाँव भारत का आखिरी गाँव है. उसके आगे तिब्बत शुरू होता है. मानागाँव में व्यास व गणेश गुफा दर्शनीय है. विश्व में सरस्वती नदी का साक्षात दर्शन केवल यहीं पर किया जा सकता है. यहाँ से सरस्वती नदी गुप्त रूप से बहने लगती है. कहा जाता है कि आदिकाल में सरस्वती यहाँ से बहुत आवाज करते हुए बहती थी. यहीं पर व्यास मुनि गणेश जी से महाभारत लिखवा रहे थे. व्यास मुनि द्वारा मना करने पर भी जब सरस्वती नदी का शोर कम नहीं हुआ तो उन्होंने श्राप दे दिया और तब से सरस्वती जी यहाँ से गुप्त हो गयीं. यहाँ स्नान आदि कर हम लोग शाम तक पिपलकोटी पहुँच कर रात्रि विश्राम किए.

अगले दिन 07 मई, 2009 को पिपलकोटी से वापस हरिद्वार के लिए निकले. यहाँ से हरिद्वार के मार्ग में पाँच प्रयाग मिलते हैं. दो नदियों के मिलन स्थल को प्रयाग कहते हैं. सर्वप्रथम हम नन्द प्रयाग पहुंचे. नन्द प्रयाग से आगे बढ़ने पर हम देव प्रयाग पहुंचे. देव प्रयाग में भागीरथी व अलकनंदा नदियों का मिलन होता है. यहाँ दोनों नदियों के जल का अंतर स्पष्ट रुप से देखा जा सकता है. दोनों नदियों के मिलने के बाद जो धारा निकलती है उसे ही पतित पावनी गंगा नदी के नाम से जाना जाता है. यहाँ का दृश्य अत्यंत मनोरम व दर्शनीय होता है. हम लोग काफी देर यहाँ बैठे रहे. आलम यह था कि कोई भी यहाँ से उठना नहीं चाहता था. यहाँ का श्रीराम मंदिर भी दर्शनीय है. इसी प्रकार हम कई स्थानों पर दर्शन करते हुए रात लगभग 8.30 बजे हरिद्वार पहुंचे. रात्रि विश्राम के उपरांत अगले दिन हम दिल्ली के लिए रवाना हो गए. आज भी जब मैं सोचती हूँ तो स्मृतियाँ ताजी हो जाती हैं. सारे दृश्य आंखों के समक्ष सजीव हो उठते हैं. शायद यह यात्रा मेरे जीवन की सबसे अनमोल यात्रा है.

**आर. वसुधा**
जे.पी. नगर शाखा,
बेंगलूरु (दक्षिण)

# क्यों अपराधी बन जाते हैं, बच्चे?

**एक अपराधी बालक निर्धारित आयु से कम आयु का वह व्यक्ति है, जो समाज विरोधी कार्य करने का दोषी है और जिसका दुराचार कानून का उल्लंघन है**

**– मार्टिन न्यूमेयर**

**बा**ल अपराधों की बढ़ती संख्या हमारे समाज के माथे पर एक ऐसा कलंक है, जिसके धुलने के प्रयास तुरंत शुरू किये जाने चाहिये. जहां एक तरफ इसके लिये परिवार, माँ बाप को सतर्क होने की जरुरत है, वहीं दूसरी तरफ सामाजिक स्तर पर भी इसके लिये अलग से कदम उठाने की जरुरत है. भारत में बाल अपराध की समस्या एक विकराल समस्या है, अगर देश के भावी कर्णधार आपराधिक कार्यों में संलिप्त हो जाएं तो उस समाज एवं राष्ट्र की स्थिति क्या होगी? इसीलिए यह आवश्यक है कि बाल अपराध को पनपने से रोका जाए. विभिन्न आंकड़ों से यह पता चलता है कि शिक्षित बालकों की तुलना में निरक्षर बालकों में बाल अपराध अधिक पाया जाता है. आर्थिक स्थिति के अनुसार निम्न आय वर्ग में इसका प्रतिशत अधिक पाया जाता है.

माता-पिता की अनुमति के बिना घर से भाग जाना, अपने पारिवारिक सदस्यों के प्रति अभद्र भाषा का प्रयोग करना, ऐसी आदतों को अपनाना जिससे समाज प्रभावित होता हो, जिसे निश्चय ही अनदेखा नहीं किया जा सकता, जैसे चोरी करना, लड़ाई झगड़ा करना, अपराध करना, गंदी फिल्में देखना, शराब पीना, ऐसे समूह में शामिल होना जो बच्चों के लिये सही न हो, ऐसी जगह पर जाना जहां बच्चों का जाना पूर्णत: वर्जित है, दुकान से कोई सामान उठाना, किसी के प्रति भद्दी और अभद्र भाषा का प्रयोग करना, छोटे बच्चों की रैगिंग लेना, अपने से कम उम्र के बच्चों को नुकसान पहुंचाना आदि अपराधी बालक के मुख्य लक्षण हैं. इसके अलावा झूठ बोलना, नशा करना, तोड़फोड़ करना, दीवारों पर उचित या अनुचित बातें लिखना, जुएं के अड्डे और शराब घरों में आना-जाना, आवारा व्यक्तियों से मिलना-जुलना, नियमों का पालन न करना आदि बाल अपराध के मुख्य प्रकार है. किंतु ये फूल से कोमल बच्चे क्यों भटक जाते हैं और अपराध की ओर अपने कदम बढ़ाते हैं. इसके कारण जानते हैं:

- आजकल का शहरी वातावरण अत्यंत ही दूषित और हानिकारक है. यहाँ बाल अपराध को प्रोत्साहन देने वाले सभी साधन विद्यमान हैं, जैसे कामुक चलचित्र, जुआ और अड्डा, लाउडस्पीकर पर अश्लील गाने आदि, जिन बालकों पर उनके माता-पिता का पर्याप्त नियंत्रण नहीं होता है, वह कुमार्ग पर चलने लगता है.
- बालकों को अपना समय बिताने के लिए मनोरंजन और खेल के उचित साधन प्राप्त नहीं हैं, तो उनका अनुचित दिशा में जाना तय है. जिन बालकों के पास में खाली समय रहता है, वे अपराध की ओर अग्रसर होते हैं.
- देखने में आया है कि अधिकांश बाल अपराध की जड़ गंदी संगत होती है यदि किसी बालक का साथी अपराधी है तो वह भी जल्दी अपराध को अपना लेता है.
- बालक के शारीरिक दोष तिरस्कार के कारण बनते हैं, इस तिरस्कार से बच्चे के आत्मसम्मान को ठेस पहुंचती है, फलस्वरुप वह तिरस्कार का बदला लेने के लिए दूसरों को कष्ट देने और सताने का अपराध करता है.
- कम मानसिक योग्यता वाले बालकों में अपराधी प्रवृत्ति का विकास जल्दी होता है, क्योंकि पिछड़ेपन के कारण उन्हें घर और स्कूल दोनों जगह डांट फटकार पड़ती है, जिससे वे कुंठित होकर अपराध की ओर अग्रसर होते हैं.
- आक्रमण निराशा की सामान्य प्रतिक्रिया है. व्यक्ति जितना अधिक निराश होगा उतना ही अधिक आक्रमणकारी हो जाता है. यही स्वभाव अपराध में परिवर्तित हो कर उसके अंदर समाज और दुनिया के लिए घृणा उत्पन्न हो जाती है और यह घृणा अपराध में परिवर्तित होती है.
- माता-पिता का अत्यधिक व्यस्त होने के कारण, वे बच्चों को दूसरों के भरोसे छोड़ देते हैं, जिनका मुख्य कार्य केवल बच्चों की देखभाल करना होता है. बच्चे के जीवन में प्रेम और सहानुभूति का अत्यंत ही अभाव रहता है, जिसके कारण उनका कोमल मन भटक जाता है.ऐसे बच्चे असामाजिक तत्वों की निगाह में जल्दी आते हैं और वे फायदे के लिए इनका उपयोग करते हैं.
- कठोर अनुशासन में रहने वाले बच्चे भी अपराधी हो सकते हैं, क्योंकि कठोर अनुशासन में उनकी स्वतंत्रता का निरंतर हनन होता है. जिससे मौका मिलते ही वे अपराध की ओर कदम बढ़ाते हैं,
- धन उपार्जन करने वाले की मृत्यु हो जाती है या घर का मुखिया किसी कारण से परिवार से संबंध तोड़ लेता है, या अनैतिकता का मार्ग अपना कर किसी की चिंता नहीं करता है, ऐसे परिवार के बच्चे भी अपराध की ओर रुख करते हैं.
- अत्यंत गरीबी, बच्चों को आरंभ से ही चोरी करने या भीख मांगने के लिए बाध्य करती है.

- सौतेले मां और बाप के कारण बच्चों का तिरस्कार होता है. इन बच्चों को घर के स्थान पर गलियों में घूमने वाले आवारा लोगों का प्यार मिलता है और वे कुछ समय बाद उन्हीं के मार्गदर्शन में चलने लगते हैं. और वे अपराध की ओर रुख करते हैं.
- आजकल के विद्यालय शिक्षा की दुकानें हो गई हैं, कई विद्यालय में उचित शिक्षक, खेल कूद आदि की व्यवस्था ही नहीं है, कई स्कूल इतना दिखावे में विश्वास करते हैं कि बच्चों में ऊंच नीच की भावना पैदा कर देते हैं और इस तरह बच्चे रैगिंग और मारपीट को अपनाते हैं.
- पत्र पत्रिकाओं (comic books) का मुख्य उद्देश्य बालकों का मनोरंजन करना है. इन पुस्तकों की सामग्री काल्पनिक होने के साथ-साथ कभी-कभी आक्रमणकारी और उत्तेजित करने वाली घटनाओं पर आधारित होती है, जो बच्चों के कोमल मस्तिष्क में अपराध का कारण बनती हैं.
- **तरुण और परेशान किशोरों के लिए टेलीविजन बाल अपराध का प्रारंभिक प्रशिक्षण केंद्र है:**

  जब कोई आदर्श अभिनेता नकारात्मक भूमिका में नजर आते हैं, तब अपराधों की संख्या बालकों में बढ़ जाती है. जैसे डर फिल्म के बाद अचानक लड़कों में लड़कियों को छेड़ने के अपराध में वृद्धि हुई थी.

  कई बच्चे शक्तिमान की तरह उड़ने की कोशिश में छत से गिर गए. अतः सिनेमा और टेलीविजन भी बच्चों को अपराध की ओर अग्रसर करते हैं.

**बाल अपराध को रोकने के उपाय :-**

**समुचित पालन पोषण:-** बालक के पालन पोषण कला की आवश्यक शर्त है माता-पिता का चरित्र, उनका व्यवहार एवं घर का वातावरण. आवश्यकता से अधिक लाड़-प्यार बच्चों को बिगाड़ देता है. आवश्यकता से कम स्नेह पाने से उनका भावनात्मक विकास नहीं हो पाता है. मारपीट और अपमान शायद उन्हें गलत राह पर ले जाता है. अतः घर का वातावरण, माता - पिता का आदर्श बड़ों को चरित्र ठीक रखने के विषय में जिम्मेदारी महसूस करनी चाहिए. वास्तव में बालक को अपराध से रोकने का तरीका उसकी बुरी आदतों को रोकना नहीं, बल्कि उनमें अच्छी आदतें डालना है. उनके सामने एक आदर्श स्थिति को पेश करना है.

बच्चो को समय - समय पर अपनी वास्तविक स्थिति से अवगत कराना चाहिए, चाहे वह आर्थिक स्थिति हो या कोई और बात. -

**समुचित शिक्षा :-** शिक्षक का आचरण और व्यवहार बड़ा सुधरा हुआ होना चाहिए, शारीरिक दंड का संभवतः कम प्रयोग होना चाहिए. कमजोर बालकों की ओर ज्यादा ध्यान देना चाहिए.

खेलकूद, नाटक, वाद-विवाद, स्काउटिंग-आदि नाना प्रकार की प्रतियोगिताओं द्वारा विभिन्न प्रवृत्तियों के अभिव्यक्त होने का अवसर मिलता है. सामान्य शिक्षा के साथ-साथ बालकों को शारीरिक शिक्षा, औद्योगिक शिक्षा और नैतिक शिक्षा की आवश्यकता है.

- **मार्गदर्शन, परामर्श और प्रेरणा :-**

  समझदारी की कमी के कारण बच्चे बाल अपराध की ओर अग्रसर होते हैं, अतः माता-पिता और शिक्षकों को चाहिए कि वे बच्चों का निरंतर निरीक्षण करें और जरुरत पढ़ने पर उन्हें दंड के स्थान पर परामर्श दें. उनका मार्गदर्शन करें, अच्छी किताबें और प्रेरणादायक चलचित्र/किस्सों/कहानियों के माध्यम से मार्गदर्शन और परामर्श दिया जा सकता है.
- **पाठ्य सहायक गतिविधियों का विकास**

  मुख्य पाठ्यक्रम के अलावा बच्चों को सांस्कृतिक एवं खेल गतिविधि में भाग लेने हेतु प्रेरित करना चाहिए.
- **मनोरंजन की व्यवस्था :-**

  समाज, विद्यालय और परिवार की जिम्मेदारी है कि बच्चों के मनोरंजन की उचित व्यवस्था हो, जिससे वे अपने अवकाश का उचित उपयोग कर सकें. विद्यालय और सोसाइटी दोनों में ही खेलकूद के भरपूर साधन होने चाहिए.
- **चलचित्रों पर नियंत्रण :-**

  चलचित्र बालकों के अपराध प्रवृत्ति को प्रोत्साहित करने में विशेष योगदान देते हैं. अतः राज्य द्वारा अपराधों और अनैतिक कार्यों के प्रदर्शन वाले चलचित्रों पर कड़ा नियंत्रण होना चाहिए. माता-पिता बच्चों की गतिविधियों का निरंतर अवलोकन करें. वे क्या देख रहे हैं वह माता-पिता की जिम्मेदारी है.
- हर विद्यालय में मनोचिकित्सीय कक्षाओं की व्यवस्था होनी चाहिए जिससे बच्चों की मनोवृत्ति का सकारात्मक विकास किया जा सके.

दरअसल भारतीय जीवन जीने की शैली में आए परिवर्तन टीवी, मोबाइल और सोशल मीडिया आदि ने हमारे परिवार में संवाद का अभाव पैदा कर दिया है, जिससे हम बच्चों की छोटी मोटी समस्याओं के बारे में जान ही नहीं पाते हैं. वास्तव में आपसी बातचीत और परिवारिक प्रयासों से अभिभावकों और बच्चों के बीच की दूरी और दरार को मिटाकर बच्चों के मन से अपराधी भावना दूर की जा सकती है. बच्चों को भारतीय परंपरा, रीति रिवाज, मानवीय मूल्यों और सामाजिक मूल्यों से जोड़ना होगा तभी हम उन्हें और उनके बचपन को सुरक्षा प्रदान कर सकेंगे. उनके कोमल कदम अपराध की ओर न बढ़ें यह समाज, विद्यालय और परिवार की संयुक्त जिम्मेदारी हैं.

बबली सिंह
राजेंद्र नगर शाखा, इंदौर

# आधुनिकता के साथ आज का बचपन

आधुनिकता क्या है? यह एक सोच और विचार है जो हर व्यक्ति विशेष को इस दुनिया के प्रति अधिक जागरूक व मानवीय दृष्टिकोण से जीने का सही मार्गदर्शन करती है. आज मनुष्य का हर क्षेत्र आधुनिकता से परिपूर्ण है. आधुनिकता की चकाचौंध अच्छी भी है, परंतु यह आज के बच्चों का बचपन छीन भी रही है. यह कहना गलत नहीं होगा कि जिस प्रकार सिक्के के दो पहलू होते हैं, वैसे ही यदि आज के इस आधुनिक समाज में बच्चों का बचपन खो रहा है, तो इसी आधुनिक समाज में बचपन में ही बच्चे नए-नए आधुनिक उपकरणों द्वारा बहुत कुछ नया भी सीख रहे हैं. परंतु अब बचपन के उस रविवार की मस्ती लौट के नहीं आती, अब वो दादी-नानी की कहानियाँ नहीं होती. अब इस आधुनिक समाज में बचपन ऐसे व्यस्त हो चुका है कि भरी दोपहरी में जो बच्चे पूरा मौहल्ला नाप आते थे अब वही बच्चे लैपटॉप, कम्प्यूटर, मोबाइल आदि में आँखें गढ़ाए रहते हैं. हम सरल शब्दों में यह कह सकते हैं कि बचपन को आधुनिकता की नजर लग गई है.

पहले माता-पिता बाहर खेलते हुए बच्चों को घरों में पकड़-पकड़ कर लाते थे, वहीं आज माता-पिता अपने बच्चों को बाहर खेलने के लिए प्रेरित करते हैं. हम यह कह सकते हैं कि जिस उम्र में बच्चों को खुले विचारों के साथ हमें पढ़ाना चाहिए, आज वही बच्चे भारी-भारी बस्तों के कारण मानसिक तनाव के शिकार होते जा रहे हैं. इस आधुनिकता की अंधी दौड़ में बच्चों का बचपन रौंदा जा रहा है. समाज में अपने रुतबे तथा बड़ा बनने की होड़ ने और अधिक धन कमाने की विवशता ने माता-पिता को बच्चों से दूर कर दिया है. अब माता-पिता वेतन भोगी हो गए हैं और इनका स्थान आया व नौकरानी ने ले लिया है. एक-दूसरे से ऊपर उठने की होड़ में माता-पिता बच्चों को अपना स्नेह, प्यार और अपनापन देने की बजाय उनको लैपटॉप, कम्प्यूटर, मोबाइल आदि दिलाना अति आवश्यक समझते हैं. यही कारण है कि बच्चे भी अपने माता-पिता से दूर होते जा रहे हैं. अब उन्हें अपने माता-पिता से लगाव कम और इलेक्ट्रानिक उपकरणों से ज्यादा प्यार और लगाव हो चुका है. बच्चे अपने माता पिता के साथ बाहर घूमने जाने से ज्यादा अपने मित्रों के साथ समय बिताना अधिक पसंद करते हैं. अपनी हर बात अपने मित्रों के साथ साझा करते हैं, जिस कारण अधिकतर माता-पिता को यह पता ही नहीं होता है कि उनका बच्चा मानसिक रूप से कितना तनाव में है या कितना खुश है. यह कहना गलत नहीं होगा कि आधुनिकता के इस समाज में रिश्तों की गर्माहट ठंडी पड़ती जा रही है.

यहाँ यह कहना उचित नहीं होगा कि आधुनिकता से बच्चों का बचपन पीछे छूट गया है. इस बदलते आधुनिक समाज में बच्चों के बचपन की तस्वीर भी बिलकुल बदल चुकी है. आज का बचपन पहले से अधिक मुखर और ऊर्जावान हो गया है. जिस प्रकार समय का पहिया हमेशा चलता रहता है, जैसे-जैसे समय बदलता जा रहा है उसी तरह समाज भी समय के अनुसार अपने आप को बदल रहा है. अब इस आधुनिक समाज में बड़े-बड़े लोगों से लेकर फूल जैसे नन्हें बच्चे भी एक-दूसरे से आगे बढ़ने की होड़ में लगे रहते हैं. छोटी सी उम्र में इन्हें भी प्रतिस्पर्धा की दौड़ में शामिल कर दिया गया है.

आज के माता-पिता अपने बच्चों को किसी से कम नहीं आंकना चाहते हैं, इसलिए अपने बच्चों के बेहतर भविष्य के लिए अच्छे-अच्छे विद्यालयों का चयन करते हैं, जहां उनके बच्चों को आधुनिक तकनीक के द्वारा पढ़ाया जा सके ताकि उनके बच्चों का भविष्य उज्वल हो. आज के माता-पिता ऐसे विद्यालय चाहते हैं, जहां पढ़ाई के साथ-साथ अन्य गतिविधियां भी हों, जिससे उनका बच्चा किसी भी क्षेत्र में अन्य से पीछे न रहे.

आज का आधुनिक युग हमें अच्छी-अच्छी तकनीकी सुविधा उपलब्ध करा रहा है, इससे बच्चों से लेकर बड़ों तक का कार्य आसानी से हो रहा है, इसलिए कुछ हद तक यह वरदान भी है और अभिशाप भी. इस आधुनिकता के साथ हमें बचपन की मिलीजुली तस्वीर देखने को मिल जाती है. यहाँ यह तय कर पाना मुश्किल हो जाता है कि जीवन के किस पहलू की तस्वीर को दर्शाया जाये. कुछ खट्टा और कुछ मीठा सा होता है बचपन इसमें सभी की अपनी-अपनी यादें जुड़ी होती हैं, बचपन शब्द ही इतना सुंदर है कि इससे बच्चों के बचपन की शरारतें और उनके खेलकूद वाली छवि हमारे मन में छा जाती है. आधुनिक समाज में यह तस्वीर थोड़ी धुंधली पड़ गयी है, परंतु नष्ट नहीं हुई है. बच्चे आज भी वही मस्ती करते हैं परंतु समाज और माता-पिता द्वारा दिये गए मानसिक तनाव के कारण बच्चों की प्रतिभा उनके माता-पिता के सपनों के बोझ तले दब जाती है. अपने बच्चों पर अपने सपने रखना सभी माता-पिता का अधिकार है परंतु बच्चों के बचपन को प्रभावित किए बिना यदि उनका पालन-पोषण किया जाए तो बच्चे प्रत्येक क्षेत्र में अव्वल आएंगे.

नरेन्द्र कुमार
क्षे.का., मदुरै

आज के इस भागम-भाग के जमाने में सब कुछ बड़ी तेजी से बढ़ रहा है, नई-नई तकनीकों का इजाद हुआ है और साथ ही विज्ञान दिन ब दिन नई ऊंचाइयों को छू रहा है,

मगर आपको नहीं लगता है, इस भागते जमाने में अगर कुछ पीछे छूट गया है तो वह है बचपन! आज के इस दौर में बच्चों से बच्चों का बचपना ही छीन लिया है. ये आधुनिकता, ये तकनीके हमें तरक्की की ओर नहीं विपत्ति की ओर ले जा रही हैं. आज इस आधुनिकता के चलते लोग अपने आप में इतने मजबूर हो गए हैं कि उन्हें अपने घर या बाहर की दुनिया से कोई मतलब नहीं है,

*मैं आज सिर्फ इतना समझ पाया हूँ कि इस आधुनिकता ने*
*आलस, बीमारी और स्वार्थ जैसी चीजों को जन्म दिया है।*

मानता हूँ आज कोई भी काम मिनटों में हो जाता है, मगर इस आधुनिकता के चलते जो शारीरिक श्रम था वह खत्म हो गया है. कहीं ना कहीं शारीरिक श्रम इंसान को आलस से दूर रखता है. बड़े तो बड़े अब बच्चे भी पीछे नहीं हैं, इस आधुनिकता नाम की बीमारी से.

*"इन नन्हें-नन्हें हाथों को, तुम चाँद सितारे छूने दो*
*दो चार किताबें पढ़ ली तो, हम जैसे ही हो जाएंगे"*

आज 4 साल के बच्चे को फोन के बारे में किसी वयस्क से ज्यादा ज्ञान है, आजकल के बच्चे के मां बाप बच्चों को संभालने के कष्ट से निपटने के लिए उनके हाथ में फोन पकड़ा देते हैं,

परंतु उसके दुष्परिणाम उन्हें कौन बताएगा उन्हें कौन समझाएगा कि

इससे तुम्हारी आंखें, तुम्हारी मानसिकता को खतरा है. तुम्हारे शारीरिक विकास को खतरा है.

एक समय था जब किसी भी मोहल्ले में चले जाओ. शाम होते ही वहां बच्चे जल्दी से खाना खाकर एक साथ इकट्ठे हो जाते थे और अलग-अलग तरह के खेल जैसे की भागम-भाग, चयन तोड़, बर्फ-पानी, सतोलिया, लंगड़ी-टांग, लुका-छुपी, चिड़िया-उड़ आदि खेल खेलते थे.

इन बच्चों के बचपन को छीनने का एक श्रेय माता-पिता को भी जाता है क्योंकि बच्चा अबोध होता है, वो वही करेगा जैसा आप उसे सिखाएंगे.

उन्हें महंगे-महंगे खिलौने दिलाना, महंगे-महंगे कपड़े दिलाना, उन्हें उतनी खुशियां नहीं देता जितना कि अगर आप उनसे प्यार से बात करोगे, उन्हें समझाओगे उनके मानसिक विकास के लिए कुछ करोगे और उन्हें तनाव से दूर रखने में मदद करोगे.

मोहल्ले की सड़कें सूनी हैं,
नहीं निकलता कोई बाहर
बचपना खत्म कर दिया है
इस आधुनिकता की मार ने।।

आज का बचपन जाने कहाँ खो गया है
अस्तित्व इसका कम्प्यूटर में विलीन हो गया है
जो विचरता था खुले आसमान के नीचे
जो खेलता था पवन की मस्त मौजों से
फैलाकर बाहें समेट लेता था जहाँ की सारी खुशियाँ
बढ़ाकर हाथ छू लेता था. आसमान की बुलंदियाँ
जो झगड़ता था, रूठता था, मनाता था, हंसता था,
रोता था, खेलता था साथ अन्य बचपनों के
जो कहता था अपनी भावनाओं को, अपने अपार मित्रों के समूह से
भावनाओं का वह समंदर आज सिमट कर एक बूँद हो गया है.

हो गया है कैद एक बंद कमरे में
हो रहा आहत ए.सी., कूलर,पंखे की हवा के थपेड़ों से
फैलाकर बाँह एकांत, उदासी मायूसी समेटता है
बड़ाकर हाथ रिमोट और कीपैड के बटनों को दबोचता है।
हाँ उड़ता है-3, आज वो अंतरिक्ष की असीम ऊँचाईयों में
पर कहाँ कंप्यूटर के बंद डिब्बे में
आज इसके रिश्ते, मित्र, टी.वी., कंप्यूटर, वीडियो गेम हैं।
ये आधुनिक बचपन है जो मशीन हो गया है
जो भावना हीन, उमंगहीन हो गया है।

उठो जागो 'ए बचपन' इस चिरनिन्द्रा से
और समेटो और जुड़ जाओ मित्रों के समूहों से
उड़ो आकाश में, साँस लो खुली हवा में
फैलाकर बांह, बढ़ाकर हाथ, जीवित कर दो दफन बचपन को
नई उड़ान, नई उमंग, नई मुस्कान दो, प्रौढ़ हो चले भारत को।
और लौटा दो पुनर्बचपन भारत का, भारत को ।

आज के बचपन को चाहिए सही परवरिश देना, अच्छा करने पर प्रोत्साहन देना, बुरा करने पर डांटना और फिर उसे समझाना क्योंकि खुशियां पैसों से नहीं प्यार से खरीदी जाती हैं.

एक अंतिम गुजारिश है, कृपया बच्चों को जोर जबरदस्ती से नहीं प्यार से समझा कर देखें. उन पर कोई चीज थोपें नहीं. एक बार उनकी भी सुन लें, क्योंकि आज की इस दुनिया में सब पराए हैं, एक परिवार ही तो है. वे अपने सुख-दुख आपसे बाँट लें, उसे इस काबिल बनाइए.

**कुलदीप कुमार**
क्षे.का., कानपुर

आधुनिकता सिर्फ़ एक शब्द नहीं है, बल्कि जीवन शैली है. आधुनिकता जीवन के प्रत्येक क्षेत्र को बहुत गहराई से प्रभावित करती है. वो क्षेत्र सिर्फ़ हमारी बाहरी दुनिया से न जुड़ा होकर हमारा अंतर्मन भी हो सकता है. बचपन भी आधुनिकता से अछूता नहीं है. आज का बचपन पहले से अधिक मुखर और होशियार है. बच्चे कहीं अधिक प्रखर और ऊर्जावान हैं. कइयों की समझदारी के आगे बड़ों को हीनता का बोध हो तो भी कोई आश्चर्य नहीं होगा. लेकिन इस सबके साथ-साथ ये भी सच है कि उक्त सकारात्मक पहलुओं के साथ-साथ आधुनिकता ने बच्चों पर बहुत से नकारात्मक प्रभाव भी डाले हैं. आज के बच्चों में मुखरता और होशियारी तो आ गई, लेकिन बचपने से सौरभ उस बाग की शांति ग़ायब हो गयी है, जिसमें हज़ार रंग के फूल तो हैं पर खुशबू वाला एक भी नहीं. ऐसा बाग देखने में मोहक भले ही हों पर बाग का अंतस उदास कर देता है. ठीक वैसे ही बचपन में मासूमियत, भोलापन, सच्चाई, शरारतें, अठखेलियाँ, खेलकूद, मस्तमौला और तनावमुक्त जीवन ही बचपन के मायने हैं. यही वो खुशबू है जो जीवन भर बच्चों की दुनिया को सुवासित करती रहती है, लेकिन यह कहना ग़लत न होगा कि तेज़ रफ्तार आधुनिकता जितनी तेज़ी से हमारे जीवन का हिस्सा हो रही है, उतनी तेजी से बचपन के मायने भी परिवर्तित हो रहे हैं.

दुनिया हमेशा से बदलती रही है, पर जैसे अब बदल रही है, वैसी रफ़्तार पहले कभी नहीं थी. इस बदलती दुनिया में न तो ज़िंदगी पहले सी है, न ही लोगों की सोच वैसी रही, न ही परिवारों का पहले जैसा ताना-बाना बचा रहा. आज जो चीज़ सबसे तेज़ी से बदली है, वह है परिवार में लोगों के बीच संवेदनाओं और भावनाओं की परस्पर तरंग प्रतितरंग, और इसी बदलाव में रिश्तों की गर्माहट ठंडी पड़ती जा रही है. हमेशा से इसी ऊष्मा में बच्चों का जीवन भावनात्मक स्तर पर बनता-बिगड़ता रहा है, लेकिन आज रिश्तों की परिभाषा बदल गई है. रिश्ते भावनाओं से अधिक ज़रूरतों पर टिके हैं. नतीजतन, आज के बच्चे अब से पहले के बच्चों की तरह नहीं हैं. उनकी ज़िंदगी बदल गई है. उनकी खुशियों की इबारतें अब नई कहानी कहती हैं, जहां हसरत है ज्यादा से ज्यादा हासिल करने की. सपनों की इस दुनिया में अभिलाषाओं की नई फसलों के ऐसे हाईब्रिड बीज जमने लगे हैं ,जो मनुष्यता की सदियों से जमा की गई पूंजी को लीलते जा रहे हैं. आज के बच्चों की दुनिया में परियाँ ज़िंदगी की सही राह नहीं दिखातीं, न ही सुपर हीरोज़ जीवन में मुश्किलों से लड़ने की प्रेरणा देते हैं. आज सपनों में है डोरोमैन, जिसके पॉकेट में ऐसे नायाब गैजेट्स मौजूद हैं, जो बिना संघर्ष या सीख के सभी मुश्किलों को हल कर देते हैं. आज का बचपन या तो उन कपोल कल्पनाओं में खोता जा रहा है, जहां सीखने को कुछ विशेष नहीं है या फिर दूसरी ओर ऐसे बच्चे हैं, जो बाल सुलभ निश्चिंतता से दूर समय से पहले ही जीवन की आपाधापी में जा भिड़े हैं. बहुत ओजस्वी होने के बाद भी ऐसा बचपन एक खास तरह का अबूझ और जटिल चेहरा अख़्तियार कर लेता है.

परिवार बच्चों की ज़िंदगी का मूल आधार है और पश्चिमी आधुनिकता के अंधानुकरण ने भारतीय परिवार की पूरी संरचना को बदलकर रख दिया है. पहले परिवार का मतलब कई लोगों का साथ रहना और उनके बीच एक सहज, सरल भावनात्मक जुड़ाव का मौजूद होना था. यह लोगों के बीच जिम्मेदारियों, खुशियों, त्योहारों के साथ-साथ ज़िंदगी के तमाम उतार चढ़ाव को साझा करने की प्रेरणा थी. पहले के परिवार में अमूमन तीन पीढ़ियों का समावेश होता था. ये पीढ़ियाँ मिल-जुलकर परिवार की जिम्मेदारियों को संभालती थीं, जिससे बचपन की फुलवारी के फलने-फूलने के लिए स्वस्थ माहौल और उर्वर ज़मीन मिलती थी. दादा दादी ,नाना नानी बच्चों के लिए किस्सों कहानियों की खुली किताब होते थे, वे कहानियों के ज़रिये उनमें जीवन दर्शन, संस्कारों और मूल्यों का प्रवाह करते थे,जिससे समग्र रूप में बचपन पल्लवित, कुसुमित हो पाता था.

आज पति, पत्नी और बच्चों के एकल परिवार के अवधारणा ने पुराने परिवार के जीवन मूल्यों को ही तहस नहस नहीं किया, बल्कि नए और बेहतर उपायों को भी अवरुद्ध किया है. आज किसी को फुर्सत नहीं है कि

वह बचपन की इस फुलवारी को संवारे. बच्चे के उर्वर मन को सींचने और पोषित करने का वक़्त न माता पिता के पास है, न ही आज की अपार्टमेंट लाइफ में दादा-दादी ,नाना-नानी की कोई जगह शेष है. सब मिलाकर दुष्परिणाम यह हुआ कि न चाहते हुए भी बदलते समाज और नई सामाजिक व्यवस्था ने बचपन की सुहानी दुनिया में वयस्कों की महत्वाकांक्षा के कांटे बो दिये हैं.

बालपन का मन कोरा होता है, जिस पर परिवार के लोग सबसे अधिक असर डालते हैं. बच्चों का यह कोमल मन बहुत संवेदनशील होता है-अच्छे या बुरे दोनों का प्रभाव उन पर समान रूप से पड़ता है. इसी संवेदनशीलता से बच्चे अपने आस पास की चीजों, लिए गए निर्णयों, होने वाली घटनाओं, मिलने वाली अनुभूतियों और व्यवहारों से जीवन मूल्य और जीवन दृष्टि ग्रहण करते हैं. तभी तो परिवार को बच्चों की पहली पाठशाला कहा जाता है. बच्चे माता पिता के भावनात्मक जुड़ाव से ही प्रेम करना सीखते हैं. जिन परिवारों में परस्पर प्रेम, रिश्तों का और विवेक, पारिवारिक निर्णयों का आधार होते हैं, उन परिवारों में बचपन एक सकारात्मक दिशा में पनपता और फलता फूलता है और बालिग होने तक पूर्ण मनुष्यता को प्राप्त करता है, लेकिन जहां अहम और द्वेष है और पारिवारिक निर्णयों में दिखावा और दंभ है, वहाँ बचपन भी कलुषित और कुंठित ही होता जाता है.

सहजता बचपन का मूल धर्म है. यही वह भाव है जो बीज बनकर एक समर्थ व्यक्ति का निर्माण करता है, परंतु असमय ही जीवन के संघर्षों में बच्चों को झोंकना उन पर की जाने वाली क्रूरतम हिंसाओं में से एक है. माता-पिता अपनी असफलताओं, अधूरी लिप्साओं से कुंठित होकर दुनिया के सामने अपनी सार्थकता का ढोंग करते हैं. इसके लिए अपने बच्चों के जीवन को जीवन न समझते हुए वे ख़ुद को साबित करने का आखिरी उपाय बना लेते हैं. सोचते हैं, जो काम वे ख़ुद न कर सके, वे काम उनके बच्चे पूरा करेंगे. पढ़ाई के नाम पर मासूम बच्चों को वर्कफोर्स का हिस्सा बनाने के लिए सघन प्रशिक्षण

के ऐसे आयोजनों में यों जोत दिया जाता है, जैसे कि हल में बैल जोते जाते हैं. यह बच्चों के मनोवैज्ञानिक विकास के लिए उचित नहीं होता है. बचपन जीवन संघर्षों की तैयारी है और नज़ाकत इस बात में है कि यह तैयारी इंसान को विकसित होने का सहज मौक़ा दे.

बिलखते बचपन को मोटी- मोटी किताबों की नहीं, बल्कि प्यार और दुलार की आवश्यकता होती है. यही बच्चों के शारीरिक, मानसिक एवं बौद्धिक विकास का आधार भी है. आज का पूरा भारतीय बचपन इसी प्रकार बिलख रहा है. बाल्यावस्था के अंतिम चरण में बच्चों का स्वभाव चिड़चिड़ा हो जाता है, उनका मानसिक विकास रुक जाता है. यह एक नाज़ुक दिमाग पर पड़ने वाला खतरनाक प्रभाव ही नहीं, बल्कि राष्ट्र के विकास का बाधक भी है. इस आधुनिकता की अंधी दौड़ में हमारे बच्चों का बचपन बुरी तरह से कुचला जा रहा है. आज बच्चों को माता -पिता की गोद नसीब नहीं है, क्योंकि समाज में अपने रुतबे तथा होड़ ने आजीविका के लिए माता-पिता को बच्चों से दूर किया है. उनका स्थान वेतनभोगी नौकरानी या आया ने ले लिया है, आधुनिकता की चकाचौंध में अब बचपन की तस्वीर ही बदल गयी है. टेक्नोलॉजी के युग में बचपन अब खोता जा रहा है. आधुनिक युग में बच्चे टीवी, मोबाइल में गेम, कार्टून में व्यस्त हो गए हैं. समय की तेज धारा नें बच्चों को भी एक दूसरे से अलग-थलग कर अपने-अपने आँगन तक बांध कर रख दिया है. स्वचालित खिलौने, दूरदर्शन, सैटेलाइट चैनल ने बचपन की तस्वीर ही बदल दी है. रही-सही कसर किताबों के बढ़ते बोझ ने पूरी कर दी है. उम्र से जुड़ी चंचलता, बाल सुलभ शरारतें, सहजता और अल्हड़पन अब कहां है, बचपन की पूरी तस्वीर ही बदल गयी है.

बचपन की नई तस्वीर में जब हम अपने बचपन के अक्स को ढूंढ़ते हैं तो मालूम पड़ता है, तमाम चमचमाते गैजेट्स, महंगे कपड़े, खिलौने, अंग्रेज़ी, चॉकलेट्स, वीडियो गेम्स ये सब हैं, लेकिन बचपन खोखला है.

**आशीष कुमार**
क्षे.म.प्र.का., अहमदाबाद

# स्क्रीन के साथ चिपका हुआ बचपन

शीर्षक को पढ़कर आप स्वयं ही समझ गए होंगे कि मैं किस विषय पर अपनी बात रखना चाह रहा हूं. मैं यह भी जानता हूं कि ज़्यादातर लोग इस लेख को पूरा पढ़ना भी मुनासिब नहीं समझेंगे, क्योंकि वे लोग अपने मोबाइल, लैपटाप या टैब पर चैटिंग करने, वीडियो देखने या सोशल मीडिया पर कमेंट करने में व्यस्त होंगे. हमने आधुनिकता की अंधी दौड़ में भागते-भागते आने वाली युवा पीढ़ी को एक ऐसा झुनझुना पकड़ा दिया है, जिससे वो अपना बचपन बर्बाद कर रहे हैं. आज जो लोग 30-40 की उम्र के हैं उस पीढ़ी ने तो फिर भी अपना बचपन स्लेट-चॉक से शुरू कर लैपटाप तक का सफर तय किया है, परंतु हमने इक्कीसवीं सदी में इस पृथ्वी पर अवतरित होने वाली नयी युवा पीढ़ी को मोबाइल देकर उनका बचपन समय से पहले ही छीन लिया है. हमने जिस मिट्टी पर खेल कर अपना बचपन बिताया था हम आज अपने बच्चों को उस मिट्टी में जाने से रोक कर मोबाइल थमा रहे हैं और उनका बचपन छीन रहे हैं.

आज छोटे नासमझ बच्चे से लेकर टीन एज के बच्चों तक के साथ में मोबाइल है. छोटा बच्चा मोबाइल देखकर खाना खाता है, उससे बड़ा बच्चा मोबाइल देखकर सोने जाता है, उससे बड़ा बच्चा तो चोरी से ही सही लेकिन 24 घंटे मोबाइल अपने साथ रखना चाहता है. ये बात सच है कि सोशल मीडिया, यूट्यूब पर दुनिया की हर आधी-अधूरी जानकारी उपलब्ध है, पर ये सब किताबों की जगह कभी नहीं ले सकते हैं. हमारे बच्चे आज हर एक जानकारी के लिए मोबाइल, गूगल को सर्च कर रहे हैं, जिसके कारण उनकी याद करने और रखने की शक्ति कम होती जा रही है. अगर ये सिलसिला यूं ही चलता रहा तो वह दिन दूर नहीं जब आने वाली पीढ़ी की स्मरण शक्ति कमज़ोर होगी और वह किसी भी विषय पर अपनी तार्किक शक्ति का प्रयोग करने में असमर्थ होगी. स्क्रीन पर ज्यादा समय चिपके रहने से इस पीढ़ी का दिमागी नियंत्रण मोबाइल के हाथ में होगा और वह अपने जीवन के सही या गलत निर्णयों को लेने में असमर्थ होंगे. उनके दिन भर के समय के उत्पादक घंटे दिन प्रतिदिन कम होते जा रहे हैं और इसका दुष्प्रभाव उनके कॅरियर पर भी हो रहा है.

अगर हम आज सफलता की बुलंदी पर पहुंचे हुए कुछ खिलाड़ियों जैसे सचिन तेंदुलकर, साइना नेहवाल, महेंद्र सिंह धोनी, विराट कोहली, पी वी संधु, वीणेश फोगट, मिताली राज इत्यादि के उदाहरण लें, तो पाएंगे कि इनके बचपन में इन सब ने कड़ी शारीरिक मेहनत कर ही यह मुकाम हासिल किया है. किसी को भी यह सफलता मोबाइल पर चिपक कर नहीं मिली है. इसके अलावा अगर हम देश की सबसे कठिन एवं बड़ी परीक्षाओं में से एक यूपीएससी/आईआईटी की परीक्षा में सफल होने वाले विद्यार्थियों के बचपन को देखें तो उनको भी यह सफलता कड़ी मेहनत, लगातार किताबों का अध्ययन करने से ही प्राप्त हुई है. किसी भी सफल युवा ने यह नहीं बताया कि मोबाइल पर चिपके रहकर उसने यह सफलता प्राप्त की है. इसका यही मतलब है कि स्क्रीन पर ज्यादा समय चिपके रहना सिर्फ एक लत है, एक नशा है जिससे जितनी जल्दी छुटकारा मिल जाए उतना ही अच्छा है.

अगर हम स्क्रीन पर चिपके रहने के कारण युवा पीढ़ी पर पड़ने वाले शारीरिक प्रभाव की बात करें तो वह और भी ज्यादा भयावह है. उम्र से पहले ही पता लग जाता है सब कुछ, स्मार्टफोन में आप तरह-तरह के एप डाउनलोड कर सकते हैं. साथ ही यूट्यूब पर जो भी वीडियो चाहें देख सकते हैं और इंटरनेट पर हर तरह की सामग्री उपलब्ध है. ऐसे में बच्चों को जो चीजें एक निश्चित उम्र में जाननी चाहिए वह उन्हें कम उम्र में ही पता लगने लगती हैं, जिसका उनके दिमाग पर गहरा असर होता है. मोबाइल के बहुत ज्यादा इस्तेमाल से बच्चों में सबसे ज्यादा मानसिक बीमारियों की समस्या देखने को मिल रही हैं. जब बच्चे मोबाइल को आंखों के बहुत पास रखकर देखते हैं तो आंखों पर बहुत बुरा असर पड़ता है. इससे उनकी पास और दूर दोनों की दृष्टि कमजोर होती है, जिसके कारण छोटे बच्चों को चश्मे की जरूरत पड़ने लगती है. यह भी विडंबना है कि मोबाइल का इस्तेमाल करने वाले अधिकतर बच्चे बाहर खेलने नहीं जाते हैं, इससे कम उम्र में बच्चों में डायबिटीज, मोटापा और हाईपरटेंशन जैसी बीमारियां होने का खतरा भी बना रहता है. मोबाइल के ज्यादा उपयोग से बच्चों में डिप्रेशन, एंज़ाइटी, ध्यान नहीं लगना, बाइपोलर डिसॉर्डर, उन्माद, प्रॉब्लम चाइल्ड बिहेवियर (problematic child behavior), मोटापा जैसी समस्याएं बढ़ती जा रही हैं.

अगर हमें अपनी बच्चों का भविष्य सुरक्षित करना है तो हमें इस स्क्रीन से चिपके हुए बचपन को सुधारने के लिए स्वयं ही प्रयास करने होंगे. यह भी हमारी ज़िम्मेदारी है कि हम अपने देश को स्वस्थ, सक्षम और ज़िम्मेदार युवा दें. इसके लिए अभिभावकों को भी दिन भर स्मार्टफोन से चिपके रहने की आदत को बदलना चाहिये और अपने परिवार के साथ समय बिताना चाहिये.

बच्चों को अगर इसलिए फोन देना है कि वह आपके साथ संपर्क में रहे तो उसे स्मार्टफोन देने की बजाय साधारण फोन दें, इसका दुरुपयोग होने की संभावना कम होती है. हालांकि वर्तमान हालात जो कोविड-19 महामारी के कारण उत्पन्न हुए हैं, जिसमें ज़्यादातर बच्चे अपना स्कूल ऑनलाइन कर रहे हैं, इसमें हमें बच्चों को स्मार्टफोन देना मजबूरी है पर

उसका सही एवं गलत प्रयोग समझाना भी हमारी ही ज़िम्मेदारी है.

घर पर बच्चों से उनकी पढ़ाई के बारे में बात करें और जितना समय घर पर रहें बच्चों के साथ किसी ना किसी गतिविधि में लगे रहें. इससे बच्चे धीरे-धीरे स्मार्टफोन से दूर होते जाएंगे और आपके साथ समय बिताना उन्हें अच्छा लगेगा. हर बच्चे की किसी ना किसी चीज में रुचि होती है आप उसके मुताबिक उसे डांस क्लास, स्पोर्ट क्लास, म्यूजिक क्लास, पेंटिंग क्लास या अन्य कोई ज्वॉइन करवा सकते हैं. बच्चों को बाहर खेलने के लिए प्रोत्साहित करें और उनके साथ खुद भी खेलें. इससे बच्चों का शारीरिक विकास भी होगा और आपको भी मजा आयेगा.

यदि हम इतिहास पर नज़र डालें तो पाएंगे कि हर सफल व्यक्ति को सफलता एक लक्ष्य निर्धारित करने, कड़ी मेहनत एवं लगातार प्रयास करने से मिलती है पर स्क्रीन पर समय बर्बाद करके युवा पीढ़ी और बच्चे सोशल मीडिया के नियंत्रण में आते जा रहे हैं और अपनी विफलता का ठीकरा वो देश की अर्थव्यवस्था, बेरोजगारी, साधन उपलब्ध ना होना भिन्न-भिन्न कारणों को देते हैं. अगर हम इतिहास उठा कर देखें तो पता चलेगा कि सफलता उन्हीं को मिलती है जो लक्ष्य निर्धारित कर कड़ी मेहनत एवं लगातार प्रयास करते हैं.

आज ये कहा जा सकता है कि वर्तमान युवाओं से पहले की पीढ़ी ने चांद पर क़दम रखने से लेकर कंप्यूटर पर हर काम होने तक परिवर्तन देखा और किया है. यहां तक कि जिस मोबाइल स्क्रीन से बच्चे चिपके हुये हैं, उसकी भी खोज इसी पीढ़ी के नाम है. आज के बच्चों और युवाओं को निर्णय लेना है. आपको इतिहास बनाना है या इतिहास बनना है. उन्हें ही देश और दुनिया की आने वाली दिशा तय करनी है.

आज के अभिभावक बच्चों को हर तरह की सुविधा देना चाहते हैं और उनसे कोई काम नहीं करवाते, यह तरीका ठीक नहीं है. बच्चों से घर के रोजमर्रा के कामों में कुछ ना कुछ योगदान लें, इससे उन्हें अपनी जिम्मेदारियों का भी अहसास होगा और चीजों का महत्व भी पता चलेगा.

अब हमें तय करना है कि हम अपने बच्चों की किस तरह परवरिश कर रहे हैं, उन्हें कितना समय दे रहे हैं. जिससे वे अपने आप को अकेला न समझें और भविष्य में अपने दिमाग का उपयोग एक बेहतर भारत, ऊर्जावान भारत बनाने के लिए कार्य करें.

**अजय खरे**
क्षे.म.प्र.का., अहमदाबाद

---

**"ज**ब देखो तब बस मोबाइल में घुसा रहता है..." मां की कर्कश आवाज राहुल के कानों में गूंजती है. एक समय था जब राहुल यह शब्द सुनकर सहम जाता था, डर के मारे फटाफट सब बन्द करने की कोशिश करता था. लेकिन आज मानो उसे कुछ सुनाई ही ना दिया हो. मां उसके पास जाकर दुबारा पूछती है, क्या कर रहे हो, मोबाइल पर? कुछ काम कर रहा हूँ. आजकल कोविड 19 ने बच्चों को स्क्रीन से चिपका दिया है, ना खेलने जा पा रहे हैं, ना स्कूल जा पा रहे हैं. स्थिति यह हो गई है कि पढ़ाई, खेलकूद, मनोरंजन सब मोबाइल/लैपटॉप/टी.वी स्क्रीन पर ही हो रहा है. आजकल बच्चों का स्क्रीन से चिपके रहना मजबूरी हो गई है. कोरोना तो पिछले छह महीने से आया है, लेकिन इससे पहले का बचपन भी तो स्क्रीनों से चिपका हुआ है, कभी मोबाइल, कभी लैपटॉप, कभी वीडियोगेम या घूम फिरकर फिर टी.वी. हर मां-बाप बच्चों की इस आदत से परेशान हैं, लेकिन इस भयावह स्थिति का जिम्मेवार कौन है? प्रश्न के जवाब में हम अगल-बगल झांकने लगते हैं. जी हाँ, इस स्थिति के लिए काफी हद तक हम स्वयं जिम्मेदार हैं. आइए जानते हैं कैसे?

- बच्चा तो बच्चा है. उसे मोबाइल भी एक खिलौना लगता है, इसलिए होश संभालते ही वह आपके हाथ में मोबाइल देखकर मोबाइल लेने की जिद करता है. हम थोड़ी देर मना करते हैं, फिर उसकी जिद के सामने हार जाते हैं और मोबाइल उसे थमा देते हैं.
- अभी बच्चे ने बोलना भी नहीं सीखा, लेकिन सिर्फ आवाजें सुनकर खुश होता है, वे आवाजें भी हम उसे मोबाइल पर ही सुनवाते हैं.
- हमारे बचपन में गाना दूर रेडियो पर बजता था, लेकिन आजकल वह भी वीडियो के साथ मोबाइल में आ गया है. हमें सुनते देख

बच्चा जिद करता है, इसलिए उसके कानों में भी इयर फोन लगा देते हैं।

- ✦ उसे समझ तो कुछ नहीं आता, लेकिन खुश होता है, मुस्कराता है और हम तो उसकी मुस्कान पर जान छिड़कने लगते हैं. उसकी मुस्कान के लिए मोबाइल उसे थमा देते हैं.
- ✦ चंदा मामा दूर के..... जैसी छोटी-छोटी कविताएं व कहानियां हम दादा-दादी, नाना-नानी की गोद में सुनते थे. आजकल ना गोद है और ना कहानियाँ और बच्चा फिर मोबाइल की शरण में.
- ✦ दिन रात भागते महानगरों में वक्त किसी के पास नहीं है. घरों में अकेले बच्चे मोबाइल या टी.वी. स्क्रीन से ही चिपके रहते हैं.
- ✦ महानगरों में कामकाजी महिलाएं जरूरत से ज्यादा व्यस्त हैं, वे अपना कोई काम करती हैं तो दो-तीन साल के बच्चे को मोबाइल थमा देती हैं. महानगरों में बच्चे एकाकीपन के लिए मजबूर हैं. उनके अभिभावक ही हर समय मोबाइल से चिपके रहते हैं.
- ✦ दो तीन साल की उम्र में बच्चा इधर-उधर हाथ मारकर मोबाइल पर अपना कोई खेल या गाना चला पाता है, तो हम इसमें गर्व महसूस करने लगते हैं. हमें लगता है, हमारा बच्चा बहुत तेज है.

ऐसे अनेकों उदाहरण हम दे सकते हैं, जिन्हें पढ़कर आपको अहसास होगा कि हम स्वयं ही इसके लिए जिम्मेदार हैं. अब तक जिस बच्चे को हम खुद मोबाइल देते थे अब पांच साल की उम्र तक आते-आते उसे वह अपना हक समझने लगता है, जन्मदिन पर उपहार स्वरूप मोबाइल के नए मॉडल्स लेने की जिद करने लगता है. हम भी लाड़, प्यार व जिद में उसकी मनमानी चलने देते हैं. बच्चों का ज्यादा समय तक यूं स्क्रीन से चिपका रहना बीमारियों व अन्य समस्याओं को आमंत्रित करता है.

आजकल पांच साल की उम्र तक आते-आते हर तीसरे बच्चे को चश्मा चढ़ जाता है. मोबाइल के शौक ने उनके बाहर मैदान में जाकर खेलने के शौक को खत्म कर दिया है. टी.वी. के सामने बैठकर जंक फूड खाने से मोटापा बढ़ रहा है. बच्चों का मानसिक विकास तो हो रहा है लेकिन शारीरिक विकास ठीक से नहीं हो रहा है. शरीर सौष्ठव तो है लेकिन निरोगी नहीं.

**राजवत् पंचवर्षाणि, दस वर्षाणि दासवत्**
**प्राप्तेषु शोडष वर्षे पित्रं मित्रं तत् आचरेत्**

अथार्थ पांच वर्ष तक राजा की तरह और दस वर्ष तक नौकर की तरह और सोलह वर्ष की आयु हो जाने पर पुत्र को मित्र की तरह आचरित करना चाहिए. लेकिन हम पन्द्रह वर्ष तक उसे राजा की तरह रखते हैं उसके बाद वह स्वयं को राजकुमार समझने लगता है फिर आप उसे किसी भी चीज के लिए ना नहीं कर सकते हैं. यही स्थिति है जिसमें उनकी पढ़ाई, सेहत प्रभावित होने लगती है तथा अभिभावक बेबस महसूस करने लगते हैं, क्योंकि इस उम्र पर ना सख्ती चल पाती है और ना ही ज्यादा ढिलाई. ऐसे में उन्हें प्यार से समझाकर अच्छे संस्कार डालने हैं. समय का महत्व समझाना है शिक्षा की अहमियत समझानी है.

ऐसा नहीं है कि मोबाइल का प्रयोग करने से नकारात्मक परिणाम ही आते हैं. मोबाइल व गुगल के माध्यम से दुनिया आपकी मुट्ठी में सिमट जाती है. दुनियाभर की जानकारी आप आसानी से प्राप्त कर सकते हैं. बच्चे अपने ज्ञान के भंडार को समृद्ध कर सकते हैं. अपनी जिज्ञासाओं को शान्त कर सकते हैं. अतः हमें मोबाइल व टी.वी. का उपयोग बन्द नहीं करना है, सीमित करना है. सीमित प्रयोग से हम बच्चों को उनका बचपन लौटाने की कोशिश कर सकते हैं, उन्हें सुनहरे भविष्य की ओर अग्रसर कर सकते हैं. आजकल के बच्चों का बचपन देख बरबस ही हमें अपना बचपन याद आता है जहाँ...

**मोबाइल का 'नाम' भी नहीं था**
**फिर भी वह बचपन मस्त था।**
**दिन रात दोस्तों संग खेलता कूदता था यह बचपन,**
**फिर भी हर काम को वक्त था।**
**अब मोबाइल तो है पर, ना वक्त है, ना खेलकूद**
**ना मस्ती है ना दोस्ती।**
**अकेला है, स्क्रीन से चिपका ये बचपन।**

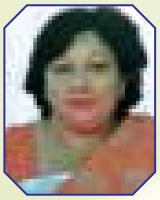

शर्मिला कटारिया
क्षे.का., दिल्ली (सेंट्रल)

बचपन मनुष्य के जीवन में एक बहुत ही महत्वपूर्ण दौर होता है. इस दौरान बच्चों का मानसिक विकास बहुत ज्यादा विकसित होता है. वह नए-नए शब्द सीखता है ताकि वह अपनों से बात कर सके, नई-नई चीजें सीखता है, जिससे उसे दुनिया को जानने का मौका मिलता है. इस समय सिर्फ उसका शारीरिक विकास ही नहीं होता बल्कि वह अपनी क्षमताओं में भी पारंगत हासिल करता है. जैसे कि बैठना, चलना, टॉयलेट जाना सीखना, चम्मच पकड़ना सीखना और अपने हाथ और आंखों में सामंजस्य बनाते हुए किसी बॉल को पकड़ना और फेंकना. छूना, सुनना, सूंघना, देखना आदि सीखने के वह औजार हैं, जिनसे बच्चा अपने आस-पास की दुनिया को परखने की कोशिश करता है.

इस दौर में सबसे महत्वपूर्ण विकास जो होता है, वह है सोशियो इमोशनल डेवलपमेंट (socio-emotional development). जिस तरह का वातावरण उनके आस-पास होता है, वह उनके भविष्य के लिए समाज के साथ अपने रिश्तों को आकार देने में मदद करता है.

बहुत दिनों के बाद गुप्ताजी अपनी धर्मपत्नी जी के साथ अपने बेटे के घर गए थे. गुप्ताजी का बड़ा ही खुशहाल परिवार था. उनका बेटा एक बड़े एमएनसी कंपनी में प्रोजेक्ट डायरेक्टर और बहू बैंक में नौकरी करती थी और दो पोता-पोती भी थे. सेवानिवृत्ति के पश्चात गुप्ताजी अपना पूरा समय अपनी पत्नी जी को देते और दोनों मिलकर अक्सर बेटे के घर जाकर पोता-पोती के साथ कुछ समय बिता कर आते थे. मगर यह कोविड-19 बीमारी ऐसी फैली कि हर तरफ सब कुछ बंद हो गया और इस लॉकडाउन के दौरान उनका आपस में मिलना मुश्किल हो गया.

एक दिन जैसे ही लॉकडाउन की छूट हुई दोनों पति-पत्नी अपने बेटे के घर निकल पड़े परंतु वहां जाकर पता चला कि बेटा और बहू अपने बच्चों को लेकर बहुत परेशान हैं. पूछने पर पता चला कि दोनों बच्चे आजकल बड़ा अजीब सा व्यवहार करते हैं - चिढ़चिढ़े से होने लगे हैं, बात नहीं मानते हैं, अपनी ही दुनिया में खोए रहते हैं और जब गुप्ताजीने देखा तो उन्हें पता चला कि ऐसा क्यों हो रहा है. दोनों बच्चे अपने अपने मोबाइल में लगे हुए थे. वह बच्चे जो पहले दादा-दादी को देखते ही आकर गले मिलते थे और पांव छूते थे. आज दूर से ही नमस्ते बोलकर रह गए.

बच्चों का मोबाइल से चिपके रहना घर-घर की समस्या बन गई है. आजकल बच्चे बहुत ज्यादा वक्त मोबाइल, टैबलेट, लैपटॉप, टीवी आदि पर बिता रहे हैं, जिससे कि उनके शारीरिक और मानसिक विकास के साथ-साथ परिवार की उन्नति के लिए भी खतरे की घंटी है. विशेषकर इस महामारी के दौरान जब भौतिक कक्षाएं बंद हैं और बच्चों की पढ़ाई ऑनलाइन हो रही है तो बच्चों को मोबाइल से दूर रख पाना मुश्किल ही नहीं, नामुमकिन होता जा रहा है. और कभी-कभी बच्चों के पास मोबाइल छोड़कर जाना जरूरी हो जाता है ताकि जब हम ऑफिस में रहते हैं तो बच्चों से बात कर सकें.

बच्चों के लिए विकास और सीख का सबसे जरूरी रास्ता एक-दूसरों के साथ मेल-जोल का होता है. माता-पिता और देखभाल करने वाले बच्चों के साथ जितनी बातें करेंगे और उस पर ध्यान देंगे, बच्चा उतनी ही तेजी से सीखेगा. बच्चे अगर शब्द समझने के लायक न हों तो भी यह बातचीत उनकी भाषा और सीखने की क्षमता का विकास करती है. लेकिन जब वे लोग स्क्रीन से चिपके रहते हैं तो यह रुकावट होती है. और मोबाइल या यूट्यूब पर वह अलग-अलग भाषाओं के कार्टून देखते रहते हैं, जिससे

उन्हें अपनी भाषा सीखने में देरी होती है.

**स्क्रीन की लत के लक्षण:**

**बर्ताव में बदलाव:**

- हमेशा मोबाइल से चिपके रहना
- मोबाइल मांगने पर बहाने बनाना या गुस्सा करना
- दूसरों के घर जाकर भी मोबाइल पर ही लगे रहना
- दूसरों से कटे-कटे रहना
- टॉइलट में मोबाइल लेकर जाना
- बेड में साइड पर मोबाइल रखकर सोना
- खेल के मैदान में भी मोबाइल साथ ले जाना
- पढ़ाई और खेलकूद में मन न लगना
- पढ़ाई में नंबर कम आना
- ऑनलाइन फ्रेंड्स ज्यादा होना
- नहाने, खाने में बहाने बाजी करना

**शारीरिक परेशानी:**

- नींद पूरी न होना
- वजन बढ़ना
- सिर दर्द होना
- भूख न लगना
- साफ न दिखना
- आंखों में दर्द रहना
- उंगलियों और गर्दन में दर्द होना

**मानसिक समस्याएं:**

- ज्यादा संवेदनशील होना
- काम की जिम्मेदारी न लेना
- हिंसक होना
- डिप्रेशन और चिढ़चिढ़ापन होना

**बच्चों को कैसे बचाएं इस लत से:**

**1. बच्चों के लिए रोल मॉडल बनें:**

बच्चे हमेशा वही सीखते हैं जो देखते हैं. ऐसे में आपको बच्चों के सामने रोल मॉडल बनना होगा. बच्चों के सामने मोबाइल, लैपटॉप या टीवी का कम-से-कम इस्तेमाल करें. अगर मां या पिता ने एक हाथ में बच्चा पकड़ा है और दूसरे में मोबाइल पर बात कर रहे हैं तो बच्चे को यही

लगेगा कि मोबाइल और वह (बच्चा) बराबर अहमियत रखते हैं.

**2. बनाएं गैजट-फ्री समय:**

यह समय आपका खाने का या पढ़ने का हो सकता है. कोशिश करें कि घर में रात के समय सब लोग एक साथ खाना खाएं और उस समय मोबाइल न देखें.

इससे बच्चे का ध्यान बंटता है और खाने का पोषण पूरा नहीं मिल पाता. साथ ही, उनकी एकाग्रता भी कमजोर होती है.

**3. बच्चों के साथी बनें:**

आजकल एकल परिवार के साथ-साथ एक बच्चे का भी चलन है. ऐसे में बच्चा अकेलापन बांटने के लिए मोबाइल या टैबलेट आदि का इस्तेमाल करने लगता है जो कि धीरे-धीरे लत बन जाती है. ऐसी स्थिति से बचने के लिए आप घर में बच्चे के साथ क्वॉलिटी टाइम बिताएं. उसके साथ कैरम, लूडो, ब्लॉक्स, अंताक्षरी, पहेली जैसे खेल खेलें.

**4. लालच न दें:**

कई बार माता-पिता बच्चों से कहते हैं कि फटाफट होमवर्क कर लो तो फिर मोबाइल मिल जाएगा या खाना खाओगे तो मोबाइल देखने को मिलेगा. इस तरह की शर्तें बच्चों के सामने नहीं रखनी चाहिए. इससे बच्चे लालच में फटाफट काम तो निपटा लेते हैं, लेकिन उनका सारा ध्यान मोबाइल पर ही लगा रहता है.

**5. आउटडोर गेम्स में लगाएं:**

दौड़ने, फुटबॉल, बैडमिंटन आदि शारीरिक खेल-कूदों के लिए प्रेरित करें. विशेषज्ञों का कहना है कि अगर बच्चे रोजाना दो घंटे सूरज की रोशनी में खेलते हैं तो उनकी आंखें कमजोर होने से बच सकती हैं. और उनका शारीरिक विकास भी अच्छा होता है.

**6. हॉबी का सहारा लें:**

बच्चों की रुचि किसमें है, वह देखिये जैसे कि पेंटिंग, डांस, म्यूजिक, रोबॉटिक्स, क्ले मॉडलिंग आदि. और यह उसके शारीरिक और मानसिक विकास के लिए भी जरूरी है.

**7. घर के काम में हाथ बंटवाएं:**

घर के कामों में बच्चों की उनकी क्षमता के अनुसार मदद लें. इससे बच्चे आत्मनिर्भर बनेंगे और खाली समय मोबाइल पर बिताने के बजाय कुछ व्यवहारिक चीजें सीखेंगे. और इस तरह आप अपने बच्चों के साथ ज्यादा समय भी बिता सकेंगे.

**8. किताबों से दोस्ती कराएं:**

आपको किताब के साथ देखकर बच्चों का भी मन पढ़ाई में लगेगा. बच्चों को रात में सोने से पहले कुछ सकारात्मक पढ़ने को कहें, फिर चाहे दो पेज ही क्यों न हों. इससे नींद भी अच्छी आएगी. हालांकि आजकल डिजिटल का जमाना है और किताबें भी डिजिटली मिल रही हैं, लेकिन उसको फ़िज़िकल किताब पढ़ने का महत्व बताएं.

9. यूट्यूब को अपनी जरूरत के अनुसार इस्तेमाल करना सिखाएं.

**10. प्राथमिकताएं तय करें :**

आजकल अति आवश्यक (अर्जेंट) और आवश्यक (इम्पॉर्टेंट) के बीच फर्क खत्म हो गया है. इसे ऐसे समझ सकते हैं कि सेहत आवश्यक है, लेकिन अति आवश्यक नहीं है इसलिए हम नजरअंदाज कर देते हैं. रिश्ते आवश्यक हैं, लेकिन अति आवश्यक नहीं हैं इसलिए पीछे छूट जाते हैं. ऐसे में प्राथमिकताएं तय करें और सेहत और रिश्तों को सर्वोपरि रखें.

**डिजिटल डी-टॉक्सिफिकेशन जरूरी:**

अपने घर के लिए डिजिटल डी-टॉक्सिफिकेशन का नियम बनाएं. हर हफ्ते में एक दिन और महीने में कुल 4 दिन गैजट फ्री रहें. सुनने में यह मुश्किल जरूर लगता है, लेकिन ऐसा करना नामुमकिन नहीं है. इस दौरान आप मोबाइल को स्विच ऑफ रखें या उसे फ्लाइट मोड पर रखें. इस दौरान साथ मिलकर कार्यकलाप करें. परिवार के साथ मिलकर खेल खेलें.

मोबाइल के लत से मतलब फोन पर बातें करने से नहीं बल्कि स्क्रीन के इस्तेमाल यानी इंटरनेट सर्फिंग या सोशल मीडिया पर वक्त बिताने से है. परेशानी की बात यह भी है कि बच्चों को टीवी या मोबाइल से जो मानसिक खुराक मिल रही है, उससे वे ज्यादा हिंसक और असंवेदनशील हो रहे हैं. वे इंसानों के मुकाबले गैजट्स के साथ ज्यादा सुकून महसूस करते हैं. यह परिवार और रिश्तों के ताने-बाने के लिए सही नहीं है.

**रोजाना कितनी देर मोबाइल?**

3-4 वर्ष के बच्चों को 30-60 मिनट से ज्यादा मोबाइल इस्तेमाल न करने दें. इसके अलावा, 5 साल से 12 साल तक के बच्चे को भी 90 मिनट से ज्यादा स्क्रीन नहीं देखना चाहिए.

**"बच्चों के रोल मॉडल बनें. वे वही करते और सीखते हैं जो देखते हैं. अगर आप एक हाथ में मोबाइल और दूसरे में बच्चा पकड़े रहेंगे तो बच्चे को लगेगा कि मोबाइल भी इसके जितना ही अहम है. ऐसे में माता-पिता के लिए जरूरी है कि वे घर में मोबाइल का इस्तेमाल जरूरी होने पर ही करें".**

**– डॉ. समीर पारिख, सीनियर सायकायट्रिस्ट**

**मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है और उसको समाज के नीति-नियमों को मानते हुए अपने परिवार के साथ समय काटना है.** खेलने और खोजबीन के लिए मिलने वाला बढ़ावा बच्चों को सीखने और उनमें सामाजिक, भावनात्मक, शारीरिक और दिमागी विकास में मदद करता है. बच्चे चीजों को आजमाते हुए, नतीजों की तुलना करते हुए, सवाल पूछते हुए और चुनौतियों का सामना करते हुए सीखते हैं. खेलना भाषा सीखने, सोचने, योजना बनाने, संगठित होने और फैसला लेने के कौशल का विकास करता है. दूसरों को देखते और उनके जैसा बनते हुए छोटे बच्चे सामाजिक व्यवहार का तौर-तरीका सीखते हैं. वे सीखते हैं कि कौन सा व्यवहार ठीक है और कौन सा नहीं. और इस तरह हम अपने बच्चों को एक सुनहरा भविष्य देने के साथ एक सुदृढ़ समाज की भी परिकल्पना सुनिश्चित कर सकते हैं.

गीतांजलि साहू
स्टा.प्र.के., भुवनेश्वर

# जिंदगी हर पल सिखाती है

**स**फलता के मायने हर व्यक्ति के लिए अलग-अलग हो सकते हैं, मेरे लिए सफलता का जो सही अर्थ है वह मेरे जीवन की एक घटना से आया, जिसने मुझे अन्दर तक हिला दिया, शायद उससे पहले तक मेरे लिए इस शब्द के अर्थ अलग थे. मगर सफलता जो एक मन का सुकून है जो आपको, आपके जीवन के लक्ष्य के प्रति सजग रखती है और जिस दिन हमें हमारा लक्ष्य या उद्देश्य मिल जाता है, उस दिन सही मायनों में हम सफलता की नई परिभाषा से परिचित होते हैं.

मैं एक शाखा में शाखा प्रबंधक के रूप में तैनात था. उत्तर भारत में जून और जुलाई के महीने में बहुत गर्मी पड़ती है. इस गर्मी में उस दोपहर के वक्त कोई भी ग्राहक शाखा में मौजूद नहीं था. तभी मैंने देखा कि हमारी शाखा में एक बहुत बुजुर्ग महिला लाठी का सहारा लेते हुए प्रवेश करती है और मेरे हाथ में एक मुड़ी हुई पासबुक रखकर लड़-खड़ाती आवाज में पूछती है, 'बेटा जरा देख कर बताना कि इसमें पेंशन आई है या नहीं?' मैंने कंप्यूटर में उस खाते को देखा वहां पर कोई भी एंट्री नहीं थी और उस बूढ़ी अम्मा को पासबुक वापस करते हुए मैंने कहा, 'अम्मा इसमें तो कोई पेंशन नहीं आई है, पासबुक की एंट्री खाली है' उसके अकाउंट में एक भी प्रविष्टि नहीं थी. मेरी ये बात सुनकर उसकी आँखों में एक पल के लिए जो मजबूरी और निराशा आई थी, वो मैं देख सकता था. वो पासबुक लेकर वापस जाने लगी, मैंने वापस जाते हुए उस अम्मा से ऐसे ही पूछ लिया कि अम्मा किस बात की पेंशन आने वाली थी. वो मेरे पास आयी और बोली 'मैंने दो साल पहले विधवा पेंशन के लिए प्रधान को फॉर्म भरकर दिया था लेकिन आज तक कोई पेंशन नहीं आयी है, बस यूं ही बैंक के चक्कर काटती रहती हूँ. अकेली हूँ बेटा, शहर जा नहीं सकती बस, यूं ही मांग-खाकर गुजारा चलता है, भगवान् को शायद यही मंजूर है' कहकर वो रोने जैसी हो गई, लेकिन वो रोई नहीं.

मैंने उस अम्मा को बिठाया और कहा, 'बैठो अम्मा मैं कुछ करके देखता हूँ.' अम्मा मेरी बात सुनकर वहीं जमीन पर दीवार के सहारे सटकर बैठ गईं. मेरी काफी कोशिश के बाद ही वो वहीं पड़ी बेंच पर बैठी और मेरे जवाब का इंतजार करने लगी.

मैंने पेंशन विभाग में कार्यरत अपने मित्र को फ़ोन करके सारी जानकारी दी और कहा 'भाई ये एक विशेष खाता नंबर है (जो अम्मा ने मुझे दिया था) जरा देख कर बताओ, पेंशन आई या नहीं' उसने अपने कंप्यूटर में देखकर बताया कि 'पेंशन तो इस खाते में लगी है लेकिन इस खाते में IFSC कोड अपडेट नहीं हुआ है, इसीलिए ये पेंशन अभी यहीं डिपार्टमेंट के खाते में ही है.'

मैंने तुरंत उसे अपनी शाखा का IFSC कोड बताया, जिसे उसने अपने विभाग में अपडेट कर दिया और कहा 'मैं अभी अपने बैंक को जिसमें हमारा अकाउंट है उसे निर्देश देता हूँ जिसके बाद यह राशि उस अम्मा के खाते में अभी पहुँच जाएगी.'

इसी बीच मैंने अम्मा से कहा कि आप थोड़ी देर और बैठो. शायद आज आपको पेंशन मिल जाये. उसकी आँखों में कुछ उम्मीद नज़र आने लगी थी, लेकिन उसको विश्वास नहीं हो रहा था. वह बोली 'बेटा तुम बेकार ही कोशिश कर रहे हो. कुछ नहीं होगा गरीब आदमी की तो भगवान भी देर से ही सुनता है.' लगभग दो घंटों में पैसा उसके खाते में आ गया. पेंशन की कई महीनों की राशि जो इकट्ठा हो गयी थी 20000/- रुपए थी. जब पैसा अम्मा के खाते में आया तो यह खुशखबरी मैंने अम्मा को दी और कहा कि उनकी पेंशन खाते में आ गयी है. उसने मुझे भर-भरकर आशीर्वाद दिया और बोली 'पेंशन अभी मिल जायेगी क्या?' उसे यक़ीन नहीं हो रहा था, मैंने कहा 'हाँ वह पेंशन निकाल सकती हैं' उनसे पूछा 'कितना पैसा चाहिए, अम्मा?' तो जवाब आया, 'सारी पेंशन दे दो.' मैंने निकासी फॉर्म पर उनके अंगूठे का निशान लिया और बीस हजार रूपये उनकी तरफ बढ़ाये और उनसे बोला 'लो अम्मा अपने पैसे ले लो.'

अम्मा ने जैसे ही पैसों को देखा, वह डर सी गईं और बोली, 'यह इतना पैसा मेरा नहीं है, मेरी पेंशन तो बहुत कम है, मुझे सिर्फ मेरे पैसे चाहिए.' शायद उसे यकीन नहीं हो रहा था. मुझे अम्मा को समझाने में काफी मेहनत करनी पड़ी. 'अम्मा ये तुम्हारा ही पैसा है, इतने सालों से पेंशन नहीं मिलने से यह सब इकठा होकर इतना हो गया है.' तब अम्मा बहुत खुश हुईं और आवश्यक पैसा लेकर कहने लगी कि यह शेष राशि खाते में डाल दो, जब जरुरत होगी तब ले लूँगी. शाखा से जाते समय अम्मा ने मुझे जो आशीर्वाद दिया, वह आज भी मुझे याद है. अम्मा ने मुझे आशीर्वाद दिया **'भगवान करें कि तू जल्दी इस शाखा का कैशियर बन जाये.'**

मैं विस्मित था. अम्मा यह क्या कह रही हैं? मैं शाखा प्रबंधक हूँ और अम्मा मुझे एक क्लर्क/कैशियर बनने का आशीर्वाद दे रहीं हैं. शायद यह वो वक्त था जब मैं किसी के मन की भावना को सही अर्थों में पढ़ पा रहा था. वो मुझे भगवान् का दर्जा दे रहीं थीं. ग्रामीण शाखाओं में एक कैशियर की स्थिति एक भगवान के बराबर होती है, जो कुबेर के खजाने पर बैठा है और पैसों का लेन-देन करता है. ग्रामीण लोगों की नजरों में वह पद बहुत बड़ा होता है. अम्मा के आशीर्वाद में शायद कहीं ये छुपा हुआ था कि मैं भी जल्दी उसकी नज़र में उस बड़े पद को प्राप्त करूँ. मेरे लिए उनके ये शब्द किसी सफलता से कम नहीं थे. उस दिन मैंने जाना कि किसी मजबूर व्यक्ति की मदद करके मन को जो सुकून मिलता है, वो किसी भी सफलता से कहीं बड़ा होता है. उसके शब्द आज भी मेरे कानो में गूंजते हैं.

**सचिन बंसल**
स्टा.प्र.म., बेंगलूरु

# बचपन... कहानियों के साथ-साथ

बचपन के बहुत से सुनहरे पल और यादें हैं, जो बचपन की याद दिलाते हैं. दादा-दादी के पास कहानियों का भंडार रहा करता है. शायद इसी कारण हमारे दादा जी हमें बहुत सारी दिलचस्प कहानियाँ सुनाया करते थे, वो कहानियाँ को हम लोग सुनते ही नहीं थे बल्कि उन कहानियों को हम जीते थे, और जब कभी भी यह कहानियाँ हमें याद आती हैं तो हमें हमारे बचपन के वह सुनहरे पल याद आ जाया करते हैं.

मेरी दादी का देहांत मेरे बचपन में ही हो गया था. मेरे दादा हमारे साथ ही रहा करते थे.उनके साथ बिताए हुये पल याद आते ही आज भी मेरा रोम-रोम उन स्मृतियों में जी उठता. जहाँ तक मुझे याद है, मेरे घर में वो ही इकलौते बुजुर्ग थे जो हमारे बचपन में हर दिन हमारे सहोदर के रुप में रात को सोने के समय कहानियाँ सुनाया करते थे. उनकी कहानियाँ बचपन में ही हमारे व्यक्तित्व का निर्माण कर रहीं थीं और हमें इस भाग दौड़ की दुनिया में जीने के सलीके सिखा रहीं थीं. चूंकि वह उम्र बहुत मासूम थी, हम कहानियों को समझने के साथ अपने निष्कपट मन एवं आँखों से सवालों का निवेदन करते थे, और वे उतनी ही सहनशीलता से जवाब देकर हमारे संदेह को निवृत्त करने की कोशिश करते थे. उनका कहानियाँ पेश करने का तरीका भी ज्यादा मनमौजी एवं विनोदपूर्ण रहा करता था.

वह बड़ा मजेदार जमाना था, जब घर के नाना-नानी, दादा-दादी या घर के कोई बुजुर्ग हमें ज्यादातर बीरबल की मेधा एवं ज्ञान, पांडवों की धार्मिकता, कौरवों के लालच, श्रीराम के गुणों, विक्रम और बैताल के वाद संवाद, चाणक्य की राजनीति, गल्लीवर की यात्राओं के बारे में कहानियाँ सुनाया करते थे तथा उनका परिचय हमें देकर उन कहानियों के माध्यम से एक काल्पनिक यात्रा पर हमें ले जाते थे. बीती हुई वह पीढ़ी, वह बचपन, वह अनूठे सपने, वो बढ़िया यादें हर मानस को मधुर अनुभूति दिलाते है.

बचपन में बच्चों को कहानियाँ क्यों सुनानी चाहिए, अगर इस बात पर विस्तार पूर्वक चर्चा की जाए तो शायद सभी उलझे प्रश्नों का उत्तर मिल जाए. हमारे दैनंदिन जीवन में कुछ संदर्भ में हम बड़ों की सलाह की उपेक्षा करते हैं. लेकिन बच्चों का ध्यान आकृष्ट कर लेने के लिए एक ही तरीका है, वो है कहानियाँ सुनाना! कहानियाँ किसी भी विषय, वस्तु, स्थल या आदमी के बारे में हों, जब उसमें अंदुरुनी छिपे हुए संदेश को हम बच्चों के दिमाग तक लेकर चलते हैं तो, कहानी का उद्देश्य सफल होता है.

**बचपन में सुनी हुई कहानियां:**

रामायण को कहानी के रूप में सुनाया जाए तो बुराई पर अच्छी नियत एवं गुणों से अच्छाई का विजय कैसे हुआ, सीखने को मिलेगा. साथ ही अगर व्यक्ति सच्चाई के रास्ते पर चलता है तो शुरु में कठिनाइयाँ झेलने पर भी दुखों से लड़ते-लड़ते सफलता कैसे प्राप्त करता है, यह समझ में आता है. इतना ही नहीं, भाइयों के साथ अपना बर्ताव, माता-पिता की आज्ञा का पालन, गुरु एवं बड़ों का सम्मान ये सब बातें जानने को मिलेंगी. महाभारत से जुड़ी कई बातें हमें आधुनिक जीवन में भी काम आ सकती हैं. जिसमें खासकर आत्म विश्वास के साथ सफलता की राह पर जिंदगी में आगे कैसे बढ़ें, सीख सकते हैं. विक्रम बेताल की कहानियाँ देखें तो उज्जैन के प्रख्यात राजा विक्रमादित्य, एक बेताल की विविध कहानियाँ सुनकर, उसके अंत में नैतिक एवं न्याय संबंधी जानकारी मिलती है. मंत्री बीरबल राजा अकबर के सलाहकार थे. अपने विवेक एवं दक्षता के लिए वे मशहूर थे. तेनालीराम भी एक कवि के रुप में जाने जाते थे. राजा कृष्णदेवराय के दरबार में कवि और विदूषक के रुप मे चतुराई एवं बुद्धिमता से अपने राज्य के कई संकट वे दूर करते थे. तक्षशिला के गुरु आचार्य चाणक्य ने अपनी विद्वता एवं क्षमता के बल पर भारतीय इतिहास की धारा को ही बदल दिया. 'चाणक्य नीति' ग्रंथ बच्चों को पढ़ाये जायें तो आचार्य की नीतियों एवं जीवन के अनुभवों से अमूल्य ज्ञान का परिचय मिलेगा. इसी प्रकार विष्णु शर्मा द्वारा लिखित 'पंचतंत्र' की कहानियाँ बच्चों को शिक्षा देने, सम्पूर्ण व्यक्ति बनने में सहयोगी रहीं. इन सब कहानियों ने बच्चों में ही नहीं, बड़ों में भी आदर पाया.

कहानियाँ हमारे जीवन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं. कहानियाँ सुनने से बच्चों की उन्नति एवं विकास में किस तरह वृद्धि होगी, एक नजर डालेंगे:-

- कहानियाँ लोगों को जीवन का अर्थ समझने में मदद करती हैं. विश्व के आविष्कार, जन्म और मृत्यु के बारे में भी जानकारी मिलती है.
- भारत देश में अनेक भाषाओं और संस्कृतियों का अस्तित्व रहने

के कारण अपनी विभिन्न संस्कृतियों एवं रीति रिवाजों का परिचय मिलता है.

- पीढ़ी दर पीढ़ी चली आ रही ऐसी कई पारंपरिक कहानियाँ हैं, जो उनसे जुड़े समुदायों के कुछ नियमों और मूल्यों तथा विषय वस्तु के बारे में जानकारी देती हैं.
- मातृभाषा एवं नया शब्द भंडार मिलेगा. कहानियों को सुनने से किसी भी भाषा के प्रति रुचि बढ़ेगी तथा नई शब्दावली, वाक्यांशों और भाषायी संरचनाओं को जानने का मौका मिलेगा. पुस्तक पढ़ने की इच्छा एवं लिखने की आदत को जगाती है.
- बच्चे साधारण रूप से अच्छे श्रोता नहीं बनते लेकिन कहानियों के सुनने और बोलने की आदत बढ़ाने से बच्चों में सुनने की क्षमता में बढ़ोत्तरी होगी, जिससे वे अच्छे श्रोता बनेंगे. इतना ही नहीं,उचित समय पर प्रशिक्षण देने से वे ज्यादा बोलने के बदले में ज्यादा सुनेंगे एवं समझ सकेंगे. उनमें सहनशीलता की वृद्धि होगी.
- नए आविष्कार एवं भाव उनमें उमड़ेंगे जिससे उनकी काल्पनिक क्षमता एवं सोचने का कौशल बेहतर बनेगा.
- महान हस्तियों के जीवन का सशक्त नैतिक संदेश एवं उनके जीवन के कुछ महत्वपूर्ण सबक सीखने का मौका मिलेगा.
- बचपन से ही सकारात्मक सोच व विचार होगा तथा उनकी ग्रहण शक्ति भरपूर बढ़ेगी.

समाज की महान विभूतियों के व्यक्तित्व के पीछे उनके बचपन में उनके माँ-बाप द्वारा बताई गई कहानियों का गहरा असर बहुत काम करता है. वीर माता जीजाबाई ने शिवाजी को रामायण एवं महाभारत ग्रन्थों को सुनाकर बचपन में ही उनको राष्ट्र के प्रति सम्मान एवं आदर की भावना जगायी तथा उन्हें सर्वोत्तम योद्धा के रूप में प्रस्तुत किया. जो बीज कहानियों के रूप में उनके शैशवकाल में बोया गया था वो पेड़ बनकर उनको समाज निर्माण तथा देश का इतिहास रचाने में अहम भूमिका निभाने तथा राष्ट्र के इतिहास में सर्वोच्च शिखर पर बिठाने हेतु प्रतिबद्ध हुआ.

लेकिन आज की पीढ़ी की स्थिति को यदि देखा जाए तो कुछ और ही माहौल पनप रहा है. आज की पीढ़ी इस दुनिया में जन्म लेते ही तकनीक को लेकर चलती है. प्रौद्योगिकी मानव का साथ तो दे रही है लेकिन उनमें सोचने की क्षमता एवं मानसिक विकास को बरबाद कर रही है, जिसके परिणाम स्वरुप युवा आजकल मानसिक तनाव से पीड़ित हैं. बढ़ती तकनीक ने मानव जीवन को नियंत्रण में रखा है. नतीजन आज का सामाजिक ढाँचा ही पूरी तरह से बदल चुका है. आज के जमाने में संयुक्त परिवार बहुत दुर्लभ है, फलस्वरूप एकल परिवारों का चलन हो गया. हर एक परिवार में माता-पिता दोनों कामकाजी हैं तथा घर में बच्चों की देखरेख की ज़िम्मेदारी घर के सदस्य को या तो किराए पर रखी जाने वाली सेविका को सौंप दी जाती है. तकनीक की रफ्तार अभिशाप बन गयी है. परिणाम स्वरुप कहानियाँ सुनने की आदत धीरे-धीरे समाप्त हो रही है और उसकी जगह कंप्यूटर और मोबाइल ने छीन ली है. लेकिन सालों गुजरने के बाद भी यह सच तो मानना ही पड़ेगा कि जब मुँह से कहानियाँ सुनते हुए जो चिंतन तथा सोच-विचार की परिपक्वता प्राप्त होती है, जो वाद-संवाद होता है, वो सब डिजिटल के माध्यम से संभव नहीं है.

आजकल बड़े बिज़नेस स्कूल एवं मैनेजमेंट स्कूल पढ़ाने के समय कई संदेशों को कहानियों से जोड़ देते हैं तथा उनके माध्यम से प्रस्तुत कर रहे हैं. इतना ही नहीं कई क्षेत्रों में चाहे वो राज्य सरकार या केन्द्रीय सरकार हो अपने कर्मचारियों को प्रशिक्षण देते समय कहानियों का सहारा लेकर चलते हैं. कहानी सुनने के बाद जिस महत्वपूर्ण संदेश की उम्मीद करते हैं, अगर हम उस संदेश को पकड़ सकें तो वो जिंदगी भर याद रहेगा, क्योंकि कहानी से प्राप्त ज्ञान हम कभी भूल नहीं पाते.

आदरणीय प्रधान मंत्री नरेंद्र मोदी जी ने भी उनकी 'मन की बात' कार्यक्रम में अपने मन की बात देश के नागरिकों के साथ इस प्रकार साझा की :-

''कहानियाँ सुनाइए और सुनिए. मैं इस संदर्भ में जब बच्चों से मिलता हूँ तो कुछ कहानी बताने को पूछता हूँ. इस कोरोना महामारी की वजह से लागू हुए लॉक डाउन के समय बहुत घर-परिवार अपने आप जुड़ गए तथा अपने बहुमूल्य समय को बच्चों के साथ सदुपयोग किया. कहानियाँ सुनना हमारी संस्कृति का एक हिस्सा है. कहानियाँ बच्चों को संस्कार सिखाती हैं.''

**एन वी एन आर अन्नपूर्णा**
क्षे.म.प्र.का., विशाखापट्टनम

# आज के बच्चे (बीते हुए) कल के बच्चे

परिवर्तन प्रकृति का नियम है. समय के साथ-साथ सब कुछ बदलता चला जाता है. बच्चे किसे पसंद नहीं होते हैं. बच्चे ना सिर्फ हमारा बल्कि देश का भी भविष्य होते हैं, वही देश की अगली पीढ़ी होते हैं. बच्चे युवा बनते हैं, युवा प्रौढ़ बनते हैं, और युवा विवाह करके फिर से बच्चों को जन्म देते हैं. इस तरह जीवन चक्र चलता रहता है. हम सभी के जीवन में बच्चों का बहुत महत्व है. बच्चों के बिना घर आंगन सूना होता है.

समय के साथ-साथ बच्चों की दिनचर्या व्यवहार जरूरतें, इच्छाएं, खेलने के तरीके आदि में परिवर्तन होता चला गया. वर्तमान समय के बच्चे स्मार्टफोन के आ जाने से बहुत ही स्मार्ट हो गए हैं. बच्चों का मोबाइल के बिना मन ही नहीं लगता है, यह उनके जीवन का अहम हिस्सा बन चुका है. माता-पिता भी बच्चों को यह सोचकर मोबाइल दे देते हैं कि इसी बहाने बच्चा थोड़ी देर शांत रहेगा और वे अपने घर के जरूरी काम निपटा लेंगे.

पहले बच्चे संयुक्त परिवार में रहते थे, जिससे उनकी अलग गतिविधियां होती थी, किंतु आज के समय में एकल परिवारों के बढ़ते चलन के कारण बच्चों की गतिविधियां भी बदल गईं हैं. बच्चों के खेल बदल गए हैं और खेल के प्रारूप भी. पहले साइकिल 3 चरणों में सीखी जाती थी.

पहला चरण -कैंची
दूसरा चरण -डंडा
तीसरा चरण -गद्दी

तब साइकिल चलाना इतना आसान नहीं था, क्योंकि तब घर में साइकिल बस पापा या चाचा चलाया करते थे. तब साइकिल की ऊंचाई 24 इंच हुआ करती थी, जो खड़े होने पर हमारे कंधे के बराबर आती थी ऐसी साइकिल से गद्दी चलाना मुनासिब नहीं होता था और जब बच्चा साइकिल चलाता था तो अपना सीना तानकर टेढ़ा होकर हैंडिल के पीछे से चेहरा बाहर निकाल लेता था और ''क्लीन क्लीन'' करके घंटी इसलिए बजाता था ताकि लोग देख सकें कि बच्चा साइकिल दौड़ा रहा है.

आज की पीढ़ी इस एडवेंचर से महरूम है, उन्हें नहीं पता चलता कि 8- 10 साल की उम्र में 24 इंच की साइकिल चलाना जहाज उड़ाने जैसा होता था.

हमने ना जाने कितने दफा अपने घुटने और मुंह तुड़वाए हैं और गजब की बात यह है कि तब दर्द भी नहीं होता था. गिरने के बाद चारो तरफ देख कर चुपचाप खड़े हो जाते थे, अपना हाफ कच्छा पौंछते हुए.

''रोने की वजह भी ना थी,
ना हंसने का बहाना था.
क्यों बदल गईं यह सारी चीजें,
इससे अच्छा तो वह बचपन का पुराना जमाना था..''

अब तकनीक ने बहुत तरक्की कर ली है. 5 साल के होते ही बच्चे साइकिल चलाने लगते हैं, वह भी बिना गिरे. दो-दो फीट की छोटी-छोटी साइकिलें बाजार में आ गयी हैं और अमीरों के बच्चे तो अब सीधे गाड़ी चलाते हैं, छोटी -छोटी बाइक बाजार में उपलब्ध हैं. मगर आज के बच्चे कभी नहीं समझ पाएंगे कि उस छोटी सी उम्र में बड़ी साइकिल पर संतुलन बनाना जीवन की पहली सीख होती थी, जिम्मेदारियों की पहली कड़ी होती थी, जहां आपको यह जिम्मेदारी दे दी जाती थी कि अब आप गेंहू पिसाने के लायक हो गए हैं. इधर से चक्की तक साइकिल ढुंगराते हुए जाइए और उधर से कैंची चलाते हुए घर वापस आइए.

बीते हुए कल के बच्चे मिट्टी के घरों में बैठकर परियों और राजाओं की कहानियां सुनते थे, जमीन पर बैठकर खाना खाते थे, मिट्टी के कुल्हड़ और प्लेट में चाय पीते थे, जबकि आज के बच्चे आलीशान घरों में अमेजन प्राइम पर या यूट्यूब पर कहानी देखते हैं, डाइनिंग टेबल पर खाना खाते और महंगी से महंगी कोल्ड ड्रिंक पीते हैं.

बीते हुए कल के बच्चे, बचपन में मोहल्ले के मैदानों में अपने दोस्तों के साथ परंपरागत खेल जैसे-गिल्ली डंडा, छुपा -छुपी, खो- खो, कबड्डी, कंचे जैसे खेल खेलते थे, किंतु आज के बच्चे मोबाइल में वीडियो गेम, पब्जी, लूडो आदि गेम घर पर ही बैठ कर खेलते हैं.

हमें अच्छे से याद है, जब शहर में नया-नया समुराई का वीडियो गेम आया था, जिसे पड़ोस वाले अंकल किराए पर बच्चों को चलाने देते थे. बच्चे मां- बाप से जिद कर 25 पैसा लेकर जाते थे और वहां वीडियो गेम खेलते थे. उसके बाद जो अनुभूति होती थी उसका शब्दों में वर्णन करना नामुमकिन है. 25 पैसे की चार संतरे की गोलियां आती थी, उन्हीं से बच्चों का मन बाग बाग हो जाता था. किंतु आज 50 रुपए की डेरी मिल्क से भी बच्चे खुश नहीं होते.

पहले मोहल्ले में गिने-चुने लोगों के घर ही टेलीविजन हुआ करते थे वह भी श्वेत श्याम. मोहल्ले के सभी बच्चे उन घरों में जाकर पसंदीदा धारावाहिक देखा करते थे वहां जाने के लिए माता-पिता से आज्ञा लेनी पड़ती थी और आज्ञा देने से पहले माता-पिता अपनी सारी बातें मनवा लिया करते थे. कोई नई मूवी रिलीज होती तो वी सी आर /वी सी पी किराए पर लेकर आते थे, फिर सभी मिलकर मूवी देखते थे. बीच में कैसेट कहीं उलझ जाए तो उसे पेंसिल से सुलझाते थे.

आदर्श और संस्कार इतने उच्च कोटि के होते थे कि मोहल्ले के बुजुर्गों को

दूर से देख कर नुक्कड़ से भाग कर घर आ जाया करते थे ताकि घर पर किसी को हमारी शरारतों का पता न चले.

शाम होते ही छत पर पानी का छिड़काव किया करते थे, उसके बाद छत पर गद्दों के ऊपर चादर बिछाकर सोते थे. स्टैंड वाला एक पंखा हुआ करता था, जो सबको हवा देता था. कभी-कभी पंखे के आगे सोने के लिए आपस में भाई बहनों से लड़ जाया करते थे. सुबह सूर्योदय होने के पश्चात भी ढीठ बने सोते रहते थे. अब समय बदल गया है, छतों पर कम ही सोया जाता है. अब छत पर चादरें नहीं बिछा करती हैं. डब्बों जैसे कमरों में कूलर, एसी के सामने रात होती है, दिन गुजरते हैं.

पहले रिश्तेदारों जैसे मामा-मामी, बुआ-फूफा के यहाँ जाने पर उत्साह बना रहता था और उत्सुकता भी. देखते ही मामा-मामी बोलते थे, ''अरे बच्चा कितना बड़ा हो गया है ? पहचान में ही नहीं आ रहा है.'' उनके घर पहुंच कर पता चलता था कि नाना जी ने घर में आगे की तरफ दो कमरे और बनवा लिए हैं. 2 भैंस, 3 गाय ज्यादा खरीद लीं हैं.

किंतु आज के इस दौर में मोबाइल के आ जाने से सारी उत्सुकता समाप्त हो गई है. कोई कार्य संपन्न होते ही मामा जी स्टेटस पर फोटो अपलोड कर देते हैं, सारी चीजें तुरंत पता चल जाती हैं. वीडियो कॉलिंग से बातें हो जाती हैं, जिससे पल-पल की तस्वीर देखने को मिल जाती है. पहले स्कूल की गर्मियों की छुट्टियों में बच्चे नाना-नानी के यहाँ जाते थे, तो कई दिनों तक रह कर आते थे. नाना-नानी उनको कहानियां सुनाते थे, किंतु आजकल छुट्टियां भी सीमित हो गई हैं, और फिर उन सीमित छुट्टियों में बच्चों को पालक गण हॉबी क्लास ज्वाइन करवा देते हैं. जिससे आज के बच्चे नाना-नानी, मामा-मामी के यहां कम ही जा पाते हैं.

बच्चों की स्कूलों में पढ़ाई का तौर-तरीका भी पूरी तरह से बदल गया है. पहले शिक्षक का इतना खौफ रहता था कि उनके डर से बच्चा खुद ही पढ़ लिया करता था. शिक्षकों को, बच्चों को सही तालीम देने का पूरा हक था. इसके लिए वह उनको आवश्यकता अनुसार डांट भी सकते थे और जरूरत पड़ी तो मार भी सकते थे. शिक्षक कहीं भी दिख जाएं तो बच्चे उनको नमस्ते करके भरपूर सम्मान दिया करते थे. हमें अच्छे से याद है, कई बार शिक्षक शरारती बच्चों को मुर्गा बनाने की सजा भी देते थे. किंतु आजकल के बच्चों को मुर्गा बनाना तो दूर यदि शिक्षक ने डांट भी दिया तो वह इसकी शिकायत कर देते हैं और कई बार तो मामला कोर्ट तक भी पहुंच जाता है.

आजकल के बच्चों पर पढ़ाई का बोझ भी बढ़ता जा रहा है. स्कूल बैगों का वजन बढ़ता जा रहा है तथा उसी अनुपात में स्कूलों की फीस भी बढ़ती जा रही है. पहले 60-70 प्रतिशत लाने पर पूरे राज्य में बच्चा प्रथम आ जाता था और आज के समय में यदि बच्चे के 100 में से 99 नंबर भी आ जाएं तो माता-पिता उनको ऐसे ताने मारते हैं, जैसे वह फेल हो गया हो.

बीते हुए कल के बच्चे से स्याही वाली दवात से या पेन से कॉपी, किताबें, कपड़े और हाथ नीले, काले, लाल कर लिया करते थे, किंतु आज के इस दौर में बॉल पॉइंट पेन आ जाने से अब वह भी देखने को नहीं मिलता.

पहले के बच्चों को यदि फोटो खिंचवाना हो तो उनको बोला जाता था कि कैमरे के सामने नजर रखो, उसमें से कबूतर निकलेगा किंतु आजकल के बच्चे बोलते हैं, कबूतर वाली बात आप मुझे मत सिखाइए, आप कैमरे का रेजोल्यूशन सेट कीजिए, कैमरे को ऑटो फोकस मोड पर रखिए, तस्वीर एकदम धांसू आनी चाहिए, मुझे स्टेटस पर अपलोड करना है.

आज के बच्चे मोबाइल में बहुत पारंगत हो गए हैं. जो उनके माता-पिता नहीं जानते, वह उनके बच्चे मोबाइल में करके दिखा देते हैं. इसी बात पर एक वाकया याद आता है कि हम एक बार परिवार सहित अपने मित्रों के साथ पैंच घूमने गए थे कि बीच में रास्ता भूल गए, समझ में नहीं आ रहा था कि क्या करें तभी मित्र के 7 साल के बच्चे ने तुरंत गूगल मैप चालू किया, लोकेशन लगाई और जोर से बोला अंकल चलो रास्ता मिल गया, हमें बायें रास्ते से जाना है, फिर 30 किलोमीटर दायें चलने पर हम मंजिल तक पहुंच जाएंगे. यह देखकर हम सभी आश्चर्य चकित हो गए और खुश भी हुए.

कोरोनावायरस विश्वव्यापी महामारी के कारण आजकल बच्चों की अधिकांश पढ़ाई मोबाइल के जरिए ही हो रही है. मोबाइल पर ऐप के माध्यम से, वीडियो कॉलिंग से, व्हाट्सएप आदि माध्यम से शिक्षक बच्चों को पढ़ा रहे हैं. पहले जिस स्कूल में लिखा रहता था कि स्कूल में मोबाइल का उपयोग मना है, आज वही स्कूल मोबाइल के भरोसे चल रहे हैं.

समय परिवर्तनशील है, परिवर्तन ही प्रकृति का नियम है. इसलिए हमें भी परिवर्तन अपनाना चाहिए, किंतु अपनी जड़ों, संस्कारों, आदर्शों को नहीं भूलना चाहिए. हमारा यह दायित्व होना चाहिए कि बच्चे भले ही बदल रहे हैं, किंतु उनमें अच्छे संस्कार, आदर्श डालना हमारी जिम्मेदारी है. बच्चे तो बच्चे होते हैं और बच्चे ही रहेंगे.उन्हें सारी खुशियां देना हमारे हाथों में हैं, उनकी हमें पल- पल देखभाल करनी चाहिए. बचपन बहुत सुहाना होता है, एक बार चले जाने के बाद दोबारा नहीं आता है. बच्चे इस देश का वर्तमान हैं और भविष्य भी. हमें भी अपने गुलशन में अपने अंदर के बच्चे को हमेशा गुलजार रखना चाहिए.

**आज का दिन है बच्चों का,**
**कोमल मन का और कच्ची कलियों का.**

मनीष कुमार बंसल 'असीम'
[illegible]पुर

# यादों में बचपन

## स्वप्न

रात का अंधेरा हो चला था और घड़ी की सुइयां नौ बजाने को बेकरार थी. मैंने अपना कम्प्यूटर बंद किया और बुझे मन से ऑफिस से निकल पार्किंग की ओर चल पड़ा. तबियत खराब होने के कारण कल मुझे छुट्टी लेनी पड़ी थी तो सुबह बॉस की डांट से दिन की शुरुआत हुई. आदेश मिला कि आज काम खत्म करने के बाद ही ऑफिस से निकलना. दिन भर पूरी मेहनत से काम करने के बाद शाम होते-होते मूड भी खराब होता गया. भूख भी जोरों से लगी थी तो कार की स्टियरिंग जल्दी से घुमाया और घर की तरफ चल पड़ा. शहर की चकाचौंध, शोर शराबा, तेज प्रकाश और अव्यवस्थित जीवन मुझे मेरे गाँव की याद दिला रहे थे. सड़क पर जाम लगा था तो घर पहुँचते-पहुँचते सवा दस हो गए. भूख के मारे पेट में चूहे खलबली मचाए हुए थे. किचन में खाली बर्तन देखे तो याद आया कि सुबह खाना बनाने वाली आंटी ने भी आज की छुट्टी मांगी थी. किसी तरह ब्रैड और मैगी खा कर पेट की भूख शांत की और बेड पर आकर लेट गया. थकान ज्यादा होने के कारण कपड़े बदलने की भी हिम्मत नहीं हो रही थी.

घर की बहुत याद आ रही थी. आँखें बंद हुईं तो सामने बस माँ का चेहरा था. सातवीं कक्षा में गणित की परीक्षा में 45% अंक मिले थे तो पिता जी ने छड़ी से मारा था, बहुत रोया, माँ भी गुस्सा हुई. उस समय दिल में बस यही आ रहा था, कि भगवान मुझे जल्दी से बड़ा बना दे. पढ़ाई लिखाई के झंझट से जल्द मुक्ति मिल जाए तो अच्छा रहेगा, और बड़े होने का सबसे बड़ा फायदा कि माता पिता की मार नहीं खानी पड़ेगी. बचपन में अक्सर ऐसा होता था जब खेल के मैदान में कोई उम्र में बड़ा बालक अच्छा खेल रहा हो या किसी बात पर किसी से लड़ाई हुई तो मन अक्सर ही ऐसी कामना करता है कि मैं जल्दी से बड़ा हो जाऊं तो दुनिया के सब ऐशोआराम मेरी मुट्ठी में होंगे. अनायास ही ऐसी कामना मेरी ही तरह लगभग हर बालक ने की होगी. मुझे याद आ रहा था, पिता जी से मार खाने के बावजूद, माँ ने अपने हाथों से खाना खिलाया, और अपनी गोद में सर रख कर सुलाया. परिस्थितियाँ आज भी सातवीं कक्षा जैसी ही थीं, बस बड़े होने की दौड़ में माँ की गोद, पिता का आशीर्वाद और बचपन की मस्ती कहीं छूमंतर हो चुकी थी. मस्ती करते हुए उस बचपन में बड़े होने की चाह, क्या पता था कि ऐसा दिन दिखाएगी. बचपन में माँ मेरी पसंद का खाना बनाया करती थी, फिर भी हम नखरे दिखाया करते थे. क्या पता था कि बड़े होने पर माँ के बने उसी खाने को तरस जाएंगे. ब्रैड, मैगी और ना जाने ऐसे कितने भोजन मुझे बहुत पसंद थे, पर ये पसंदीदा भोजन अब पेट की भूख शांत करने के काम आ रहे हैं. अब बस माँ के हाथों का बना वही खाना याद आता है जिसे हम नाकभो सिकोड़ कर खाया करते थे. पिता जी के पास पुराना स्कूटर था, तो कार में घूमने का शौक था. बचपन में मिट्टी से बनाए कार के खिलौनों से खेलने का जो मजा था वो आज असली कार में भी नहीं है. लगता है बस जिंदगी भगाये जा रही है.

''विभोर, आज स्कूल नहीं जाना है क्या'', माँ की आवाज़ से नींद खुली तो भौचक रह गया. शीशे के सामने जाकर देखा तो विश्वास नहीं हुआ, देखा लगभग 10 साल का विभोर खड़ा मुस्कुरा रहा है. माँ ने फिर आवाज़ लगायी, ''जल्दी नहा के आजा, नाश्ता ठंडा हो रहा है''. मैं जल्दी जल्दी नहा कर स्कूल ड्रेस पहन कर रसोई में चला गया. ''माँ क्या बनाया है''. माँ ने ताजे मक्खन के साथ चूल्हे पर बनी रोटी सामने रख दी. बचपन में लगभग रोज़ यही नाश्ता मिलता था तो माँ से गुस्सा हो जाता था, पर आज माखन के साथ रोटी, दुनिया के सभी पकवानों से ज्यादा स्वादिष्ट लग रही थी. नाश्ता करते करते देर हो गयी तो पिता जी ने स्कूटर से स्कूल छोड़ दिया. स्कूटर की सवारी करते हुए ठंडी शीतल हवा किसी हवाई यात्रा से भी ज्यादा खुशगवार थी. कक्षा में पहुंचा तो सहपाठी हल्ला मचा रहे थे. पांडे सर आए तो ज़ोरों से डांटने लगे और पूरी कक्षा को मैदान में मुर्गा बना दिया. पांडे सर की डांट में भी अपनापन था. पूरी कक्षा के साथ मुर्गा बनना जैसे कोई नये खेल का अनुभव करा रहा था. कक्षा के टूटे फर्नीचर से बने बैट से खेलना दिल खुश कर दे रहा था. ''अक्कड़ बक्कड़ बम्बे वो अस्सी नब्बे पूरे सौ, सौ में लगा धागा चोर निकल कर भागा'' और ''पौस्म पा भाई पौस्म पा'' कानों को नई स्फूर्ति दे रहे थे. तोता उड़, मैना उड़ ... और फिर भैंस उड़ा देने पर दोस्तों से मार खाने में जो आनंद था वो उस बड़प्पन की नीरस सी जिंदगी में कहाँ था. कटी पतंग लूटने के लिए बड़ा सा झाड़ ले कर पतंग के पीछे भागना, खरीदी हुई पतंग उड़ाने से ज्यादा उमंग दे रही थी. मिट्टी के खिलौने, माँ-पिता जी की डांट, दादी की कहानी, भैंस के ऊपर बैठकर खेतों में जाना, पिताजी का खेलने के लिए डांटने के बावजूद समय से पहले ही मैदान में पहुँच जाना, गिल्ली डंडा और क्रिकेट खेलना, माँ का अपने हाथों से खाना खिलाना और फिर अपने आँचल से मुंह पोंछना, सर पर हाथ फेरना और दुनिया भर के आशीर्वाद देना और माँ के आशीर्वाद को सुने बिना ही भाग जाना. बारिश हुई तो नाव बना कर पानी में चलाना और चींटी पकड़ कर उसमें बैठा देना. टिड्डे को पकड़कर उसकी पूंछ में धागा बांधकर उड़ाना. फिर से बचपन में जाकर जैसे दुनिया की सारी खुशियाँ मुझे मिल गयी थीं.

घंटी की आवाज़ सुन कर नींद खुली, दरवाजा खोला तो देखा माँ पिताजी सामने खड़े मुस्कुरा रहे थे. चरण स्पर्श किए तो माँ-पिता जी का हाथ सर पर महसूस कर मन आच्छादित हो गया.

''माँ आने से पहले बता देती तो मैं स्टेशन लेने आ जाता''.

''विभोर तेरी तबीयत ठीक नहीं थी, इसलिए तुझे नहीं बताया. तुझे रसमलाई बहुत पसंद है न तेरे लिए लायी हूँ जल्दी ब्रश करके आ जा''

''माँ मैं अब बड़ा हो गया हूँ, वो सब मुझे बचपन में पसंद था''
''तू कितना भी बड़ा हो जा बेटा, मेरे लिए तू हमेशा मेरा प्यारा बेटा ही रहेगा'' कहकर माँ ने सर पर हाथ रख कर बहुत सा आशीर्वाद दिया. ऐसा लगा

जैसे मेरा सपना सच हो गया हो और मैं सच में 10 साल का विभोर फिर से माँ के आँचल में शैतानियाँ करने को तैयार हूँ. रसमलाई खाते हुए मुझे वो कविता याद आ रही थी.

ये दौलत भी ले लो, ये शोहरत भी ले लो
भले छीन लो मुझसे मेरी जवानी
मगर मुझको लौटो दो बचपन का सावन,
वो कागज की कश्ती वो बारिश का पानी.

अभिषेक राज
क्षे.का., बड़ौदा

# बचपन और उम्र का ताल्लुक

उसे कहते क्या थे, यह तो नहीं याद, परंतु वह जो था एक एहसास, सुखद, अनायास व अकस्मात मेरा बचपन... कहीं खो सा गया है. आज इतने वर्षों बाद भी बारिश की बूंदों के बीच सतरंगी इन्द्रधनुष के समान अचानक से ही बचपन के रंगों की यादें दिल में भर जाती हैं. खोजें कहाँ उसे, था क्या वह, समय की सादगी, सरलता या फिर बचपन की मासूमियत भरी अदा. अब तो बस एक रफ़्तार है, दौड़ है, समझने या महसूस करने का न वक्त है और न इच्छा, हर दिन एक परीक्षा, हर दिन एक होड़ है, गुजर गया है बचपन, या फिर यह वक्त ही सख्त है? जो भी हो सच, आता नहीं कुछ रास :पर था ही क्या वह, सिर्फ एक एहसास, जो अब कहीं खो सा गया है. इस जाते हुये बचपन के बीच जब मैं अपने बड़ों को देखती हूँ, तो मन में बस एक ही बात आती है.......

उम्र के पड़ाव में ये कैसी उलझन है,
वृद्धावस्था में भी गजब बचपन है.

जब मेरे दादाजी अपने बचपन की कहानियां सुनाते थे, तो लगता था कि वक़्त ने घुमा फिरा कर उन्हें वहीं ला दिया है. उनके शरीर को बूढ़ा और मन को बच्चा बना दिया है. वे कहते थे कि ''बचपन और उम्र में गहरा ताल्लुक है, मुझे देखो फिर वही दिन लौट आये हैं. तब भी बिना दातों के थे, आज भी वैसे ही हैं.'' ललचा जाती थी हमारी आँखें बचपन में जिन मिठाइयों को देखकर, वही उत्सुकता मैंने उनमें आज देखी है.

ये जीवन के इन दो पड़ाव में फर्क तो बहुत है..फिर भी बचपन और उम्र में ताल्लुक बहुत है. बचपन में मुंशी प्रेमचन्द्र की एक कहानी पढ़ी थी ''बूढ़ी काकी'', जिसमें एक पंक्ति थी ''बुढ़ापा बहुधा बचपन का पुरागमन होता है''.

उस समय यह बात उतनी समझ में नहीं आई, जितनी अब आ रही है. मेरे दादाजी, अंतिम कुछ वर्षों में बिल्कुल बच्चों जैसे हो गए थे. जैसे बच्चों का ज्यादा ध्यान रखना पड़ता है, वैसे ही उनका ध्यान रखना पड़ता था. वह कभी भी कुछ भी खाने को जिद कर लेते. जो चीज डॉक्टर ने मना की हो वो तो विशेष रूप से उन्हें खाने को चाहिए होती थी. जिस तरह बच्चा घर में ना हो तो रौनक नहीं लगती, उसी तरह बुजुर्ग ना हो तो घर खाली सा लगता है. तीन साल की बीमारी के बाद, जब एक दिन वे सोते ही रह गए, तो पूरा घर ही सूना हो गया. आज वो हमारे बीच नहीं हैं, पर उनकी याद बहुत आती है. जब भी मैं अपने बचपन के बारे में सोचती हूँ, तो दादाजी खूब याद आते हैं.

बचपन में हमें चलने के लिए माँ की उँगलियों के सहारे की जरूरत पड़ती थी. बुढ़ापे में फिर से सहारे की जरूरत पड़ती है. जुबान में फिर वही लड़खड़ाहट होती है. बचपन एक ऐसी उम्र होती है, जब बगैर किसी तनाव के मस्ती से जिंदगी का आनंद लिया जाता है. नन्हें होठों पर फूलों सी खिलती हँसी बचपन की पहचान होती है. सच कहें तो बचपन ही वह वक़्त होता है, जब हम दुनियादारी के झमेलों से दूर अपनी ही मस्ती में मस्त रहते हैं. उसी तरह बढ़ती उम्र के साथ फिर हमें ये दुनियादारी एक झमेले सी लगने लगती है, और हम वापस से उन पुरानी यादों में खोने लगते हैं.

मेरी ये पंक्तियाँ शायद इस ताल्लुक को ज्यादा बेहतर तरीके से समझा सकें:

*मेरे खोये हुये सपनों में, अब भी मेरा बचपन खेलते हुये दिखता है.*
*मेरे कमरे की बालकनी से बाहर गली और मकानों के बीच,*
*अब भी मेरा बचपन खेलता हुआ दिखता है.*
*कल जो मेरा था, आज वही एक मजबूर सा एक भूले हुये एहसास सा जूझता है.*
*सड़कों पर बिछी कई परतों में, वक़्त के साथ-साथ आज वो मिट्टी भी खो गयी.*
*जिस पर बने गड्डों में बारिश में नाव चलाते थे,*
*अब उसकी परतों में सिर्फ याद ही रह गयी.*
*मेरे खोये हुये सपनों में, अब भी मेरा बचपन खेलते हुये दिखता है.*
*गंगा उस पार, रेतीली धरती पर, जो मिट्टी के घर बनाए थे.*
*आज वो अपने फ्लैट से भी ज्यादा अपने लगते हैं.*
*अब सब दूर है मुझसे, ना ही लहरें हैं ना ही अपने हैं.*
*मेरे खोये हुये सपनों में, अब भी मेरा बचपन खेलते हुये दिखता है.*
*मैं, माँ गंगा की गोद में, उस अविरल धारा में, बचपन की सरलता ढूंढ़ती हूँ.*
*प्रदूषित हो चुकी मासूमियत की छवि, गंगा के काले हो रहे पानी की तरह.*
*फिर भी, मैं उस जल में डूबकर निर्मल हो जाना चाहती हूँ*
*आज फिर मैं अपने खोये हुये सपने, अपना बचपन जीना चाहती हूँ.*

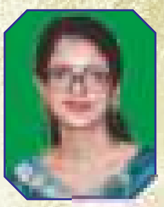

श्वेता श्रीवास्तव

# बचपन की यादें, कुछ खट्टी, कुछ मीठी

'**ब**चपन' शब्द सुनते ही मन प्रफुल्लित हो उठता है, मानो शरीर के अंग-अंग में रक्त प्रवाह बढ़ गया हो, दिल की धड़कनें धक-धक कर हिलोरें मारने लगती हैं, जी हाँ, आप सही सोच रहे हैं, मैं बात करने जा रहा हूँ बचपन के उन हसीन लम्हों की! काश, लौटा दे कोई वो हसीन पल जिनमें न कुछ पाने की आशा ना कुछ खोने का डर, बस अपनी ही धुन.

जब बात बचपन की हो और वो नादानियाँ जो आप, हम सभी करते थे, याद ना आये ऐसा भला हो सकता है? आज मैं बात करने जा रहा हूँ अपने बचपन में बीते उन लम्हों की जो आज की इस भाग दौड़ भरी ज़िंदगी से गायब हो गये हैं, बचपन में सुकून और हंसी हमारे सबसे करीबी दोस्त हुआ करते थे. छोटी-छोटी बातों में रो लेना, ख्वाहिशें, फरमाइशें, जिद सब अपनी होती थीं. बचपन का वो पल जब बड़ी से बड़ी चोट माँ के एक फूँक और कहना कि बस अब ठीक हो जायेगा, सबसे बड़ी दवा का काम करती थी. समय सब के पास होता था, मोबाइल किसी के पास नहीं था पर मोबाइल फोन के भी तेज गति से सब बातें हो जाती थीं. याद आता है वो पल और बचपन की अमीरी जब बारिश के पानी में हमारे भी जहाज चला करते थे.

बचपन की सभी यादें खास होती हैं और उसमें भी खास होती है स्कूल लाइफ से जुड़ी यादें, जो आज भी कहीं न कहीं सभी के दिलों के किसी न किसी कोने में ताजा है.

शुरुआत करते हैं, स्कूल ले जाने वाले स्कूल बैग से जिनमें पुस्तकों के साथ साथ टाट पट्टी भी ले जाना और अपनी-अपनी टाट पट्टी पर बैठकर पढ़ाई करना, स्लेट में बार-बार लिखना, गलत होने पर थूक से या दवाइयों की खाली शीशी में भरे पानी से मिटाना, पुस्तकों के बीच के पेज में मोर के टूटे हुये पंखों को इस उम्मीद से रखना कि इससे विद्या आती हैं. अगर क्लास में टीचर ब्लैक बोर्ड साफ करने को कहे तो ऐसा महसूस होता जैसे कोई बहुत बड़ा काम मिला हो और उसे बड़े ही शान से करना, दोस्तों द्वारा एक पन्ना मांगने पर कॉपी के बीच से दो पन्ने निकालकर देना और अपने आप पर गर्व महसूस करना, टीचर अगर आपको अपना कोई सामान रखकर साथ चलने को कहे तो बाकी लोगों से खुद को महान समझना, क्लास में टेस्ट परीक्षा के बाद टीचर द्वारा आपको पूरे क्लास की उत्तर पुस्तिका इकट्ठा करने का अवसर मिले तो इसे अपनी शान समझना, पता चल जाए कि क्लास का यह पीरियड खाली रहेगा आज, तो ऐसी खुशी जाहिर करना मानो सारा जहान मिल गया हो.

स्कूल के बाद याद आते हैं, बचपन के वो खेल जो गाँव के गलियारों में छूट गये हैं. आज के आधुनिक डिजिटल युग में बच्चों से खो-खो, गिल्ली-डंडा, पिट्ठू-गरम जैसे खेलों के बारे में पूछना नादानी होगी. लेकिन आपके बचपन की यादों में इन खेलों का जिक्र जरूर होगा. तो चलते हैं बचपन के उन मजेदार खेलों की यादों में...

**छुपन-छुपाई :-** ऐसा खेल होता है जिसमें एक खिलाड़ी को अपनी आंखे बंद करते हुये निर्धारित गिनती गिननी होती है और इसी बीच बाकी खिलाड़ियों को सीमित एरिया में छिपना होता है. बाद में आंखे बंद करने वाला खिलाड़ी उनको ढूंढता है. ऐसे ही और मजेदार खेल जैसे कंचा (गोली), चोर सिपाही, गिल्ली डंडा, आँख मिचौली, रस्सा कस्सी, पिट्ठू गरम, गिप्पी गेंद, लंगड़ी टांग, चर्रा, कबड्डी जैसे कितने ही खेल थे, जो आज की आधुनिकता की चकाचौंध में गायब हो गये हैं.

आज बच्चों की उम्र के अनुसार बाजार में छोटे बड़े सभी आकार के साइकिल उपलब्ध हैं और एक वो दौर था जब साइकिल पिताजी की होती थी और हम मौका मिलते ही घर से साइकिल लेकर निकल पड़ते थे, सीखने के लिए! सबसे पहले छोटी उम्र में कैंची फिर कुछ बड़े होने पर डंडा और फिर अंतिम चरण में सीट! तीन चरणों में पूरी होती थी साइकिल की सवारी, जो आज की भाग दौड़ भरी दुनिया में बिरले ही देखने को मिलती है. आज जहां दौड़ने के लिये ट्रेड मील जैसे आधुनिक मशीनों का उपयोग करते हैं वहीं हमारे बचपन के समय साइकिल और स्कूटर के खराब टायर और एक छोटा सा लकड़ी का डंडा फिर आगे टायर और पीछे-पीछे हम सब! और हो जाती थी दौड़ प्रतियोगिता.

यूं तो बचपन में हम सभी चाहते हैं कि हम जल्दी से बड़े हो जायें लेकिन बड़े होकर यह एहसास जरूर होता है कि बचपन से खूबसूरत और कुछ नहीं हो सकता. बचपन यानि कि ज़िंदगी का सबसे खूबसूरत पड़ाव जिसकी यादें हर कोई अपने दिल में संजोकर रखना चाहता है.

**भगवान दास राठौर**
टेमला शाखा, क्षे.का., इंदौर

# यादों में बचपन

आज इस लेख के माध्यम से बचपन की यादें इस प्रकार सामने आ गईं कि जैसे गुल्लक से खज़ाना निकल आया हो. कितने सुहाने दिन थे बचपन के..., न कोई फिक्र होती थी न ही किसी प्रकार की चिंता. बस खाने और खेलने में ही दुनिया सिमटी होती थी. आज ऐसी अनुभूति हो रही है, मानो मैं वापस अपने बचपन में लौट आयी हूं. वो भी क्या दिन थे जब सारा संसार सुंदर दिखता था. जो चीज़ चाहिए होती थी बस एक बार बोलते ही मिल जाती थी और सच में तब की आवश्यकताएं भी इतनी कहाँ होती थीं? बस अच्छा खाने को मिले, दोस्तों के साथ शरारतें और मज़े करने को मिले, इतना ही चाहिए होता था. प्रत्येक व्यक्ति के जीवन में उसके बचपन की यादों का एक पिटारा होता है जिसे खोलते ही दु:खी से दु:खी व्यक्ति के चेहरे पर मुस्कान आ ही जाती है.

हमारे जीवन में बचपन ही ऐसा समय होता है, जिसे प्रत्येक व्यक्ति फिर से जीना चाहता है. बचपन की यादें जिसमें शरारतें, लड़ाई-झगड़े, खेल-खिलौने, गर्मी की छुट्टी में सभी का नानी के घर इकट्ठा होना, आम के बाग में घूमना, तरह-तरह के व्यंजनों का लुफ्त उठाना इत्यादि बहुत सी यादें शामिल हैं. खैर, बचपन की यादें हमारे जीवन का एक महत्वपूर्ण हिस्सा हैं, क्योंकि इन यादों में आमतौर पर बिना किसी संघर्ष के देखभाल-मुक्त और सुखद दिन शामिल हुआ करते हैं. मनुष्य जीवन का सबसे सुनहरा पल बचपन है, जिसे एक बार फिर से लेने की लालसा हर किसी के मन में हमेशा बनी रहती है. परंतु जीवन का बीता हुआ कोई भी पल वापस नहीं आता, वो पल हमारे साथ सिर्फ अपनी यादें ही छोड़ जाता है, जिसे याद करके हम सुकून महसूस करते हैं. यदि आज हम अपना बचपन याद करें तो केवल सुनहरी यादें ही याद आती हैं, उस समय हमें न तो समय की फिक्र रहती थी न ही किसी चीज की चिंता, हँसना, खेलना, खाना पीना, मौज, मस्ती मज़ाक, स्कूल केवल इन्हीं सब के इर्द-गिर्द हमारा बचपन बेहद ही खूबसूरत था. आज भी याद आती हैं शिक्षक की वो बातें जिसमें वो कहा करते थे कि आज जिंदगी जितनी ही खूबसूरत है, दिन-ब-दिन यह उतनी ही कठिन होगी. बचपन में वो बातें समझ में नहीं आती थीं परंतु आज मैं इसका अर्थ अच्छे से समझती हूँ. आज पुनः उसी बचपन में लौट जाने का दिल करता है. तो चलिये आज मैं आपको अपने इस लेख के माध्यम से अपनी बचपन की कुछ खट्टी एवं कुछ मीठी यादों से रुबरु कराती हूँ.

पहली बार स्कूल जाना तो जैसे मुझे आफत ही जान पड़ी. स्कूल जाने के लिए सुबह उठना, यूनिफॉर्म पहनना, स्कूल में सारा दिन बैठकर पढ़ाई करना, मम्मी पापा का स्कूल में दिखाई न देना. सबेरे उठने में तो हालत ही ख़राब हो जाती थी परंतु स्कूल तो जाना ही पड़ता था, नहीं तो मम्मी अच्छे से खबर लेती थीं.

''वो भाई बहनों के लड़ाई - झगड़े, वो पढ़ना और पढ़ाना
हमें याद आता है, यादों से भरा हमारा बचपन सुहाना''

शुरुआती दिनों में तो स्कूल नहीं अच्छा लगा परंतु वक्त के साथ एवं नए दोस्तों के बनने से मुझे स्कूल जाना भी अच्छा लगने लगा. उसके बाद स्कूल में मेरी शरारतें भी बढ़ने लगीं जैसे किसी टीचर का मज़ाक बनाना और उनके क्लास में हंसी रोके रखना या फिर धीरे-धीरे खी-खी करके देर तक हँसते रहना, दोस्तों की टिफ़िन बिना पूछे ही खा लेना इत्यादि. घर में भी भाई-बहनों के साथ कभी वजह तो कभी बिना वजह लड़ना और फिर मम्मी का डांटकर यह कहना कि हर समय लड़ते रहते हो, बड़े होकर मिलने को भी तरसोगे. उनके द्वारा कही हुई वो बातें वाकई आज सच साबित हुई हैं. अपनी-अपनी जिम्मेदारियों के कारण आज हम चारो भाई-बहन होली दिवाली या किसी त्योहार में ही एक साथ हो पाते हैं, और फिर माँ की उन बातों को याद कर अपने बचपन की यादें ताज़ा करते हैं.

मुझे आज भी याद है बचपन की वो यादें जब पिताजी कहा करते थे कि दोनों बहनें एक साथ स्कूल जाया करो परंतु हमारी लड़ाई इतनी ज्यादा होती थी कि हम घर से स्कूल के लिए निकलते तो साथ में ही थे लेकिन थोड़ी दूर जाकर अलग-अलग होकर हम दोनों अपनी-अपनी सहेलियों के साथ स्कूल जाते थे एवं वापसी में घर आने से पहले पिताजी की डांट से बचने के लिए साथ हो जाते थे. क्लास की लास्ट बेंच पर बैठकर रफ़ कॉपी में कभी ड्राइंग करना तो कभी राजा-मंत्री-चोर-सिपाही खेलना बहुत याद आता है.

वो भी क्या दिन थे जब हम चारो भाई बहन मिलकर पिताजी के साथ घर के छत पर लूडो और सॉप-सीढ़ी का खेल खेलते थे और जब कभी मैं हारने लगती तो पापा सिर्फ मुझे जिताने के लिए चोरी से मेरी गोटी को आगे बढ़ा देते थे. छत पर धूप सेंकते हुए हम सभी लूडो के साथ काफी मजे किया करते थे.

थोड़े और बड़े होने पर दोस्ती और शरारतें दोनों ही बढ़े, चाट हो या पानी के बताशे दोस्तों के साथ खाने में बड़ा मज़ा आता था. कभी स्कूल के ग्राउंड में खेल-खेल कर धूल-धूसरित होना भी आनंद देता था और यूनीफार्म गन्दी होने पर मम्मी की फटकार उससे भी ज्यादा मज़ा देती थी. इमली, कैथा और चूरन खाने का मज़ा शायद आजकल के बच्चे जान भी नहीं पाएंगे.

स्कूल से घर आते ही दिमाग में बस एक ही बात होती थी कि आज कौन सा खेल

खेला जाए. हमारे बचपन में घर से बाहर खेले जाने वाले अधिकतर कुछ खेलों में गिल्ली-डंडा, छुप्पन - छुपाई, कबड्डी, पतंगे-उड़ाना, रस्सी कूदना, लंगड़ी-टांग, आँख-मिचौली, रस्सा-कस्सी इत्यादि प्रमुख खेल रहे हैं. इसके साथ ही स्कूल के छुट्टी वाले दिन या रविवार को हम सभी दोस्तों के साथ एक साथ घर में बैठकर भी कुछ खेल खेलते थे, जिसमें राजा मंत्री चोर सिपाही, लूडो एवं साँप-सीढ़ी, गुड़िया-गुड्डे का खेल, चिड़िया उड़ कैरम, म्यूजिकल चेयर, लुकाछिपी, वर्ड पजल गेम, जीरो-काटा, पंजा लड़ाना, अंताक्षरी इत्यादि मुख्य खेल रहे हैं. रात को सोते समय जब तक दादी कहानी नहीं सुनाती थी, मानो नींद ही नहीं आती थी. उस समय दूरदर्शन चैनल पर प्रसारित होने वाले धारावाहिक जैसे शक्तिमान, चित्रहार, रंगोली, शाका लाका बूम बूम, अलिफ लैला, विक्रम वैताल, इत्यादि देखने के लिए हम लोग सारे दोस्त स्कूल से भाग आते थे और अगले दिन शिक्षक हम सबकी डांट लगाते थे.

गिल्ली-डंडा खेल बचपन के सबसे लोकप्रिय खेलों में से एक है. बचपन में हमें इस खेल में काफी उत्साह रहता था. इसे खेलने के लिए थोड़ी सावधानी भी बरतने की आवश्यकता होती है, क्योंकि, इसमें जरा सी चूक आँखों के लिए घातक साबित हो सकती है. इसे खेलने के लिए कम से कम दो खिलाड़ियों की आवश्यकता होती है. छुप्पन - छुपाई खेल को हाइड एंड सीक नाम से भी जाना जाता है. इसमें एक खिलाड़ी को अपनी आंखें बंद करते हुए निर्धारित गिनती गिननी होती है. इसी दौरान बाकी खिलाड़ियों को सीमित क्षेत्र में छिपना होता है. खेल की अगली कड़ी में आंखें बंद करने वाले खिलाड़ी को छिपे हुए सभी खिलाड़ियों को ढूंढ़ना होता है.

आँख मिचौली खेल में एक खिलाड़ी की आंखों पर पट्टी बांधी जाती है. फिर उसे बाकी खिलाड़ियों को पकड़ना होता है. पकड़े जाने पर दूसरे खिलाड़ी को इसी प्रक्रिया से गुजरना होता है. इस खेल को खेलने का एक और दिलचस्प तरीका है. इसके तहत जिस खिलाड़ी की आंखें बंद होती है. उसके सिर पर बाकी खिलाड़ी एक-एक करके थपकी मारते हैं.

पिट्ठू-गरम खेल को खेलने के लिए एक गेंद और कुछ पत्थरों की आवश्यकता होती है. इन पत्थरों को एक के ऊपर एक सजाया जाता है. फिर गेंद की मदद से पहली टीम का खिलाड़ी, इन्हें निर्धारित दूरी से गिराने की कोशिश करता था. जैसे ही वह इन पत्थरों को गिराने में सफल होता, दूसरी टीम के खिलाड़ी उसे गेंद की मदद से बदल देते हैं. गेंद से पत्थर गिराने वाले खिलाड़ी की टीम के किसी साथी को छूने से पहले उसे गिरे हुए उन पत्थरों को सजाकर पिट्ठू गरम बोलना पड़ता है. यदि वह ऐसा नहीं कर पाता तो उसे टीम से बाहर कर दिया

जाता है. यह सिलसिला टीम के आखिरी खिलाड़ी तक चलता रहता है. एक बात और इस खेल को कितने भी खिलाड़ी खेल सकते हैं. बस दोनों टीमों में खिलाड़ी की संख्या बराबर रखनी होती है.

रस्सी कूद खेल को खेलने के कई तरीके हैं. पहले तरीके में इसे अकेले एक रस्सी की मदद से खेल सकते हैं. दूसरे तरीके में तीन खिलाड़ियों की आवश्यकता होती है. पहले दो खिलाड़ी इसके दोनों सिरों को पकड़ते हैं एवं तीसरा खिलाड़ी लगातार रस्सी के बीच में कूदता है. यदि वह इसमें असफल होता है, तो उसे आउट माना जाता है. इसमें जो खिलाड़ी ज्यादा बार जंप करता उसे विजेता खिलाड़ी माना जाता है. लंगड़ी-टांग खेल में चॉक या लाल पत्थर की मदद से विशेष आकृति के छोटे-छोटे घेरे बनाए जाते हैं. फिर इन पत्थरों को इन घेरों में लाइन को स्पर्श किए बिना पैरों की सहायता से डालना होता था. अंत में एक पैर पर खड़े रहकर इसे एक हाथ से बिना लाइन को छुए उठाना पड़ता है.

खैर, बचपन की यादें हमारे जीवन का एक महत्वपूर्ण हिस्सा हैं क्योंकि इन यादों में आमतौर पर बिना किसी संघर्ष के देखभाल-मुक्त एवं चिंतारहित दिन शामिल होते हैं. बचपन हमारे जीवन के सबसे रमणीय अवधियों में से एक है और हम जीवन के इस चरण के दौरान कई सराहनीय यादें भी बनाते हैं. बचपन की अच्छी यादें एक अच्छे भविष्य और दिमाग को आकार देने में मदद करती हैं और हमें एक खुशहाल और आनंदित जीवन जीने का मौका देती हैं. बचपन की यादें हमारे जीवन में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं, इस तरह की यादें आपके भीतर के बच्चे को जीवित रखती हैं. शायद इसलिए कहा भी गया है कि बचपन के दिन अनमोल होते हैं, वो भोलापन और मासूमियत तो अब नहीं है हममें क्योंकि ज़िन्दगी की बहुत सारी ज़िम्मेदारियों के बीच कहीं खो गया है. काश! हम अपने बीते हुए कल अपने बचपन में दुबारा लौट कर जा सकते. कितना मज़ा आता हम वो सब कुछ फिर से जी पाते.

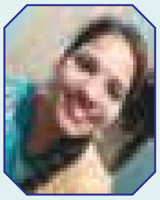

प्रेमा पाल
के.का., मुंबई

# भारतीय समाज :- आश्रमों का आयु अनुसार विभाजन

आज की परिस्थितियों में व्यक्ति के लिए 100 वर्ष की आयु प्राप्त करना असामान्य माना जाता है. अतीत में व्यक्तियों की औसत आयु 100 वर्ष होना तत्कालीन शुद्ध पर्यावरण व खान-पान से असंभव प्रतीत नहीं होता है. यही कारण है कि आश्रम हेतु व्यक्ति के जीवन को विविध स्तरों में विभाजित करने के लिए 100 वर्ष की मानक आयु निर्धारित की गई थी. ऋग्वेद में भी 'जीवेत शरदः शतम्' की कल्पना या भावना व्यक्त की गई है इसे दृष्टिगत रखकर ही 100 वर्ष की आयु को 25-25 वर्ष के चार कालखण्ड में विभाजित करें प्रत्येक आश्रम के लिए 25 वर्ष का काल निर्धारित किया गया यहाँ यह स्मरण रखना चाहिए कि चारों आश्रमों का क्रम क्रमशः ब्रह्मचर्य आश्रम, गृहस्थ आश्रम, वानप्रस्थ आश्रम एवं अंत में संन्यास आश्रम रखा गया.

इस प्रकार प्रारंभिक 25 वर्ष की आयु ब्रह्मचर्य आश्रम के लिए अनुकूल मानी गई. 25-50 वर्ष तक गृहस्थ आश्रम के लिए 50-75 वर्ष तक वानप्रस्थ आश्रम के लिए एवं तदनन्तर मोक्ष की प्राप्ति तक संन्यास आश्रम के लिए निर्धारित की गई. इस संदर्भ में उल्लेखनीय यह है कि यह विभाजन शुद्धतः आयु से संबद्ध न होकर वस्तुतः शारीरिक व बौद्धिक क्षमताओं से संबद्ध रहा है. उदाहरणस्वरूप जन्म ग्रहण करते ही न तो बालक को ब्रह्मचर्य आश्रम में प्रवेश कराया जाता था और न ही ठीक 50 वर्ष पूर्ण होने पर वानप्रस्थ आश्रम में. इसी प्रकार संन्यास आश्रम में व्यक्ति 100 वर्ष पूर्ण करने तक जीवित रहेगा ही यह भी आवश्यक नहीं था. यही कारण है कि आयु के साथ-साथ शारीरिक व बौद्धिक दशाओं को भी आश्रम-व्यवस्था में प्रवेश के लिए मापदंड माना गया.

ये अवस्थाएँ उन कर्तव्यों का स्तरीकरण करती हैं जिन्हें मनुष्य को अपने जीवनकाल में अभ्यास करना होता है. ये चार विभाग प्राचीन मनु की लिपियों में स्पष्ट हैं. ऐसी कार्यप्रणाली के साथ तत्कालीन समाज ने सामाजिक संस्थाओं को एक साथ रखने का भी लक्ष्य रखा. कम उम्र से ही आदमी को नैतिकता, आत्म-संयम, बुद्धिमत्ता, व्यावहारिकता, प्रेम, करुणा और अनुशासन के मार्ग दिखाए गए थे. उन्हें लालच, क्रूरता, सुस्ती, घमंड और कई अन्य दोषों से दूर रहने के लिए निर्देशित किया गया था. यह व्यवस्था बड़े पैमाने पर समाज के लिए भी फायदेमंद थी.

जीवन के चार आश्रमों के अनुसार एक आदमी को 4 चरणों में अपने जीवन का नेतृत्व करने की उम्मीद थी:

1. **ब्रह्मचर्य आश्रम**

ब्रह्मचर्य से यहाँ तात्पर्य लैंगिक नियंत्रण नहीं है. ब्रह्म को यहाँ सांकेतिक रूप में ग्रहण किया गया है ब्रह्म का अर्थ ज्ञान, सादगी व शुद्धि से है. इस प्रकार ब्रह्मचर्य आश्रम वह आश्रम है जिसमें व्यक्ति सरल, शुद्ध जीवन का निर्वाह करता है तथा ऐसे जीवन का निर्वाह करते हुए वह शारीरिक और बौद्धिक क्षमताओं का विकास एवं ज्ञान की प्राप्ति करता है.

ऊपर उल्लेख किया गया है कि शिशु के जन्म के साथ ही ब्रह्मचर्य आश्रम की सदस्यता प्राप्त नहीं हो जाती है बाल्यकाल की प्रारंभिक अवस्था माता-पिता के संरक्षण में व्यतीत होना आवश्यक होता है यह न केवल बालक के विकास की दृष्टि से आवश्यक होता है, बल्कि इस दृष्टि से भी कि इस अवस्था में वह ज्ञान को औपचारिक रूप में अर्जित करने योग्य नहीं होता है. इस योग्य मानसिक रूप से वह विकसित हो, इसी को ध्यान में रखकर यह प्रावधान किया गया कि बालक के उपनयन संस्कार के पश्चात उसे ब्रह्मचर्य आश्रम में प्रवेश दिया जाए. गुरु अपने आश्रम में किसी भी शिष्य के साथ उसके वर्ण अथवा उसके पिता की सामाजिक, आर्थिक या राजनैतिक स्थिति के आधार पर भेदभाव नहीं करता था. वह आचरण, अनुशासन, दायित्व और ज्ञान प्रदान करने के लिए सबको

समान दृष्टि से देखता था. ब्रह्मचर्य आश्रम कठोर नियंत्रण का आश्रम होता था इस आश्रम के माध्यम से बालकों में शारीरिक, चारित्रिक, नैतिक, बौद्धिक और आध्यात्मिक गुणों का विकास किया जाता था. इस हेतु बालक को कठिन और व्यवस्थित दिनचर्या का निर्वाह करना पड़ता था. उसे प्रातःकाल गुरु के उठने से पूर्व उठकर आश्रम की स्वच्छता, गुरु के प्रातः कालीन कार्यों के लिए समुचित व्यवस्था, आश्रम के पशुओं को चराने के लिए ले जाना और हवन के लिए जंगल से समिधा एकत्रित करके लाने का कार्य करना पड़ता था.

इसके बाद गुरु के द्वारा अध्यापन किया जाता था. मध्यान्ह में उसे निकटवर्ती ग्रहों से शिक्षा प्राप्त करने जाना पड़ता था. तदन्तर भोजन और विश्राम कर संध्या को पुनः अध्ययन, व्यायाम, यज्ञ. भोजन और गुरु की सेवा करनी पड़ती थी. इन दायित्वों का निर्वाह सब वर्णों के शिष्यों को समान रूप से करना अनिवार्य था. इस आश्रम में ब्रह्मचारी को अत्यन्त संयमित और नियमित जीवन बिताना पड़ता था. किसी भी प्रकार के सजाव, सुगंध, पुष्प, मद्यपान, मांसाहार, जूतों व छाते का उपयोग आदि ब्रह्मचारी के लिए पूरी तरह निषिद्ध था.

स्त्रियों के प्रति झुकाव भी उसके लिए वर्जित था. इस प्रकार कठोर नियंत्रण में रहने से ब्रह्मचारी में काम, क्रोध, मोह, स्वार्थ और अहं (घमंड) का विकास नहीं हो पाता था. ये दशाएँ विद्या अर्जन के अनुकूल होने के साथ-साथ व्यक्तिवादिता के स्थान पर सामाजिकता के विकास में सहयोगी रही हैं.ऋषि तथा गुरु को समाज में परम ज्ञानी माना जाता था यह वह व्यक्ति होता था जिसने स्वयं ब्रह्मचर्य आश्रम में रहकर अधिकतम ज्ञान अर्जित किया था और गृहस्थ आश्रम में रहकर जिसने विविध प्रकार के व्यावहारिक अनुभव प्राप्त किए थे. अतः ज्ञान प्रदान करने के लिए उसे सर्वथा उपयुक्त माना जाता था. यही कारण है

कि वह अपने पास उपलब्ध समस्त ज्ञान सफलतापूर्वक अपने शिष्य को प्रदान करता था.

इसके साथ-साथ वह अलग-अलग वर्णों के बालकों को अपने-अपने वर्ण के कर्तव्यों का निर्वाह करने के योग्य बनाने की दृष्टि से तदनुकूल प्रशिक्षण भी देता था. जब वह यह अनुभव कर लेता था कि शिष्य ने उसके पास उपलब्ध समस्त ज्ञान प्राप्त कर लिया है तब वह उसे ब्रह्मचर्य आश्रम त्यागने के लिए अनुकूल मान लेता था. शिक्षा पूर्ण कर लेने के प्रतीत के रूप में इस हेतु एक संस्कार -सनातन संस्कार संपादित किया जाता था. स्नातक का अभिप्राय उपलब्ध ज्ञान से स्नान करना होता है. इस प्रकार सांकेतिक रूप में इस संस्कार का निर्वाह कर गुरु यह घोषणा करता था कि उसके शिष्य ने उसके पास उपलब्ध ज्ञान को अर्जित कर लिया है. शिष्य भी गुरु को यथोचित गुरुदक्षिणा प्रदान कर आश्रम का त्याग करता था. आज भी स्नातक शब्द का प्रयोग इसी अर्थ में किया जाता है.

**गृहस्थ आश्रम: –**

इस समय मनुष्य को अपने सामाजिक और पारिवारिक जीवन पर ध्यान देने की आवश्यकता है. यह चरण 25 से शुरू होता है और 50-60 साल तक रहता है. गृहस्थ व्यक्ति के जीवन का एक महत्वपूर्ण पड़ाव है जहाँ मनुष्य को अपने वह विवाहित है और अपने घर का प्रबंधन करती है और साथ ही साथ बाहर की दुनिया की जरूरतों को भी

देखती है. उसे एक बेटे, भाई, पति, पिता और समुदाय के सदस्य के कर्तव्यों का निर्वहन करना होगा.

**वानप्रस्थ आश्रम: –**

यह आंशिक त्याग का कदम है. यह अवस्था 50 वर्ष की आयु में मनुष्य के जीवन में प्रवेश करती है और 75-80 वर्ष की आयु तक रहती है. उसके बच्चे बड़े हो जाते हैं और वह धीरे-धीरे भौतिक संबंधों से दूर हो जाता है. यह सेवानिवृत्ति के लिए उसकी उम्र है और एक ऐसे रास्ते पर चलना शुरू करता है जो उसे दिव्य की ओर ले जाएगा.

**संन्यास आश्रम:**

उनके जीवन का अंतिम चरण तब आता है, जब वह अपने सांसारिक संबंधों को पूरी तरह से बंद कर देते हैं. यह चरण 75-80 से शुरू होता है और मर जाने तक रहता है. वह भावनात्मक जुड़ावों से पूरी तरह मुक्त है. वह एक तपस्वी बन जाता है.

एक सच्चा भक्त वह है जो अपने कर्तव्यों को जानता है और उन्हें पूरा करता है. समाज को दोनों तरह के लोगों की जरूरत है-वह जो भगवान को आगे बढ़ाने के लिए सभी को छोड़ देता है और वह जो एक सामाजिक संस्था के भीतर रहता है और कर्म और धर्म के बीच संतुलन बनाता है.

महर्षि दयानन्द ने गृहस्थाश्रम पर कहा कि गृहाश्रम सब से छोटा वा बड़ा है? इसका उत्तर देते हुए वह लिखते हैं कि अपने-अपने कर्तव्यकर्मों में सब बड़े हैं. परन्तु यथा नदीनदाः सर्वे सागरे यान्ति संस्थितिम्. तथैवाश्रमिणः सर्वे गृहस्थे यान्ति संस्थितिम्।।1।।

यथा वायुं समाश्रित्य वर्त्तन्ते सर्वजन्तवः। तथा गृहस्थमाश्रित्य वर्त्तन्ते सर्व आश्रमाः।।2।।

यस्मात्त्रयोऽप्याश्रमिणो दानेनान्नेन चान्वहम्। गृहस्थेनैव धारयन्ते तस्माज्ज्येष्ठाश्रमो गृही।।3।।

स संधारय्य: प्रयत्नेन स्वर्गमक्षयमिच्छता। सुखं चेहेच्छता नित्यं योऽधार्यो दुर्बलेन्द्रियैः।।4।।

*धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष।*ब्रह्मचर्य, गृहस्थ, वानप्रस्थ और संन्यास.

*धर्म से मोक्ष और अर्थ से काम साध्य माना गया है. ब्रह्मचर्य और गृहस्थ जीवन में धर्म, अर्थ और काम का महत्व है. वानप्रस्थ और संन्यास में धर्म प्रचार तथा मोक्ष का महत्व माना गया है.

ब्रह्मचर्य और गृहस्थ आश्रम में रहकर धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष की शिक्षा लेते हुए व्यक्ति को 50 वर्ष की उम्र के बाद वानप्रस्थ आश्रम में रहकर धर्म और ध्यान का कार्य करते हुए मोक्ष की अभिलाषा रखना चाहिए अर्थात उसे मुमुक्ष हो जाना चाहिए. ऐसा वेदज्ञ कहते हैं.

**आज के परिपेक्ष्य में आश्रम की भूमिका**

आश्रम व्यवस्था का पालन अगर आज के युग में भी करें तो अच्छे समाज का निर्माण हो सकता है , आधुनिकता की दौड़ में हम अपना कर्तव्य भूल गए हैं.

**ब्रह्मचर्य यानि बाल्य/विद्यार्थी अवस्था** – यह समय अपने करियर को बनाने के लिए आत्मनिर्भर होने के लिए महत्वपूर्ण है जिससे भावी जीवन की अच्छी नींव रख सकते हैं. परन्तु अधिकतर युवा अंधी दौड़ में भटक जाते हैं और गृहस्थ आश्रम में मतिभ्रम हो जाते हैं.

**गृहस्थ यानि पारिवारिक जिम्मेदारी** – युवा अथवा जीवन निर्माण की प्राम्भ में की गयी भूल पारिवारिक व्यवस्था को मुश्किल में डाल सकती है. इस अवस्था में धर्म और काम का निर्वाह करना होता है. पारिवारिक और सामाजिक कर्तव्यों को संतुलित करना होता है.

**वानप्रस्थ आश्रम यानि दायित्व का हस्तान्तरण** – सेवानिवृत्ति और पारिवारिक दायित्व पूर्ण करने के बाद धर्म और ध्यान का कार्य करते हुए मोक्ष की अभिलाषा रखना चाहिए. इस अवस्था में समाज सेवा भी कर सकते हैं.

**संन्यास आश्रम यानि सांसारिक मोह का त्याग** – इस अवस्था में पारिवारिक दायित्व पुत्र/पुत्री को देकर अपने सांसारिक संबंधों के मोह को त्याग देते हैं. काया भी अशक्त हो जाती है और व्यक्ति धर्म मानसिक शांति और मोक्ष की खोज में रम जाता है , वो चाहे घर में हो या किसी तीर्थ या आश्रम आदि में.

बी पी शर्मा 'भानु'
बी.एच., भोपाल.

# बचपन के सपने

बचपन सिर्फ एक शब्द नहीं है बल्कि कई कोरे पन्नों को रंग बिरंगी यादों के साथ एक बस्ते में सजाये रखने का नाम है. बचपन बहुत ही भोला होता है और सपने का मतलब वो नहीं होता है, जिसे हम आँखें बंद करके देखते हैं और जिसे हम अपने जीवन में किसी भी तरह से हासिल करना चाहते हैं बल्कि पूर्ण विश्वास से अपने जीवन के लक्ष्य को हासिल करने के लिए एक संघर्ष होता है और इसी का नाम है– बचपन के सपने. इसी सपनों के माध्यम से मानव अपना जीवन सफल और सुखी बनाता है और हमें जिंदगी जीने का उद्देश्य देता है.

हिंदुस्तान के पूर्व राष्ट्रपति स्व. डॉ. ऐ पी जे अब्दुल कलाम बच्चों से सदैव यही कहते थे कि  बड़ा स्वप्न देखो और बड़ा आदमी बनो. यदि जीवन में कुछ करना है तो सपने जरूर देखना चाहिए.

बचपन में बच्चों से हम अक्सर पूछते हैं कि वे क्या करना चाहते हैं, क्या बनना चाहते हैं और उनके सपने क्या हैं. इन सपनों को पूरा करने के लिए उन्हें क्या क्या करना चाहिए. बच्चे डॉक्टर, इंजीनियर, कलेक्टर, वैज्ञानिक,व्यापारी, उद्योगपति, आधुनिक कृषक इत्यादि बनने के स्वप्न देखते हैं. इस तरह हर बच्चा बचपन से ही कुछ ना कुछ स्वप्न जरूर देखता है. किसी के सपने एक होते हैं तो किसी के अनेक, कोई छोटे सपने देखते हैं तो कोई बड़े सपने. इस तरह बचपन से ही हम बहुत से चीजों से मोहित होकर हजारों सपने बुनने लगते हैं. सपने हमारे उम्र के साथ साथ बढ़ते चले जाते हैं. सपना हर बच्चों के भावी जिंदगी को सफल बनाने और उसके प्रयासों से संबंधित होता है.

सपनों को साकार करने के लिए कुछ बातों का जानना आवश्यक हो जाता है

i. योजना बनाना

ii. सपनों को पाने की प्रबल इच्छा होना

iii. नियमित रूप से अपने प्रगति का आकलन करना और उस पर मजबूती से आगे बढ़ना

iv. सपने को साकार करने के दौरान सफर का आनंद लेना

v. सफलता की कल्पना करना

vi. अपने आत्मविस्वास को बनाए रखना

vii. असफल होने पर घबराना नहीं बल्कि उससे सबक लेना

viii. रास्ते पर आने वाली कठिनाइयों पर ध्यान ना देना

ix. सपना पूरा ना होने पर पुनः मूल्यांकन करना

बचपन के सपने को पूरा करने के लिए कुछ चीजों की आवश्यकता होती है, जैसे :

i. **अनुशासन :** अनुशासन सफलता की सीढ़ी होती है, जिसके द्वारा कोई भी बच्चा अपना सपना पूरा कर सकता है. सपने को पूरा करने के लिए हमें स्वयं अपने अंदर अनुशासन उत्पन्न करना होता है. अनुशासन से सफलता आसान हो जाती है.

ii. **धैर्य :** धैर्य सपनों को पूरा करने में काफी महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है. यदि बचपन से ही लोग धैर्य रखते हैं तो जीवन में अपने सपने को आसानी से हासिल कर सकते हैं. धैर्य के बिना जीवन में अपने सपने को हासिल नहीं किया जा सकता है.

iii. **वचनबद्धता :** वचनबद्धता भी सपनों को पूरा करने में काफी महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है. हम जो भी प्रण करते हैं उसे हर हाल में पूरा करना चाहिए और शांत नहीं बैठना चाहिए.

iv. **त्याग :** सपनों को पूरा करने के लिए बहुत सारी चीजों का त्याग करना पड़ता है. बचपन में हम जब कोई सपना देखते हैं तो उसे पूरा करने के लिए हमें अपने आप को बहुत नियंत्रित करना पड़ता है, या यूं कहें बहुत सारी चीजों का त्याग करना पड़ता हैं जैसे- अपेक्षाकृत कम खेल कूद करना (यदि खेल हमारा सपना नहीं है तो), सगे संबंधियों से कम मिलना जुलना, अनावश्यक दोस्तों से गप्पें लड़ाना इत्यादि अन्यथा सपना छूटा चला जाता है और हम पिछड़ जाते हैं. सच्चे सपने हर समय हमारे मन में घूमते रहते हैं जिसे हम हासिल करना चाहते हैं.

सपना हर कोई देखता है और वह उसे साकार भी करना चाहता है. बचपन के सपने भी कमाल के होते हैं. जैसे ही बच्चे विद्यालय जाना प्रारम्भ करते हैं, उसी समय से अजीब अजीब सपने अपने मन मे बुनना प्रारम्भ कर देते हैं. कुछ बच्चे अपने सपनों को पूरा करने में बचपन से ही लग जाते हैं, जिसके लक्षण हमें बचपन से ही दिखाई देने लगते हैं. रास्ते में कितनी भी कठिनाईयां क्यूँ ना हो, वे अपने सपने या लक्ष्य तक जब तक नहीं पहुँच जाते हैं तब तक वे शांत नहीं बैठते हैं.

सपने को पूरा करने के लिए सबसे पहले एक योजना बनाई जाती है और यह योजना इस बात पर निर्भर करती है कि सपना कितना मजबूत या कठिन है. एक बार योजना बनाकर उस पर अमल करने पर यदि सफलता हासिल होती है तब तो ठीक है अन्यथा इस पर पुनर्विचार करके उसे परिवर्तित किया जाता है. योजना के साथ साथ आकांछा भी तीव्र होनी चाहिए. प्रबल इच्छा के कारण कोई भी व्यक्ति अपने सपने को पूरा कर सकता है.

स्व. डॉ. ऐ पी जे अब्दुल कलाम ने कहा था सपने वो नहीं होते हैं जो आप सोने के बाद देखते हैं ; सपने वो होते हैं जो आपको सोने नहीं देते हैं. इंतजार करने वालों को केवल उतना ही मिलता है जितना कोशिश करने वाले छोड़ देते हैं.

अतः अपने सपने को पूरा करने के लिए हमें सही दिशा में अथक परिश्रम करने की आवश्यकता होती है साथ ही साथ प्रगति का निरीक्षण भी आवश्यक होता है. सपनों को पाने में जो परिश्रम और समय लगाया जा रहा है यह सही है या नहीं इस बात का भी ध्यान रखना जरूरी है.

जिस राह पर हम चल रहे होते हैं वह कठिनाइयों से भरा हो सकता है. यदि ऐसा है तो हमें बचपन से ही बच्चे को इन कठिनाइयों से निकालने का उपाय बताना चाहिए और इस सफर पर आनंदपूर्वक किस प्रकार से चलना चाहिए , यह ज्ञात हो जाना चाहिए. हमें इस बात का भी ध्यान रखना है कि जब हमें सफलता हासिल हो जाती है तो हमें इतनी खुशी मिलती है कि उन कठिनाईयों को भूल जाते हैं जो हमें रास्ते में मिली थी. साथ ही साथ सफलता की कल्पना करके प्रसन्नता भी मिलती है.

इसके साथ साथ आत्मविश्वास का होना भी बहुत जरूरी है. जिस बच्चे में आत्मविश्वास जितना दृढ़ होता है वह उतनी ही जल्दी सफलता हासिल कर लेता है. हमें बचपन से ही यह एहसास होना चाहिए कि हाँ ! मैं यह कर सकता हूँ, यह आत्मविश्वास हमें कभी भी नकारात्मकता की ओर नहीं ले जाएगा. हमें यह भी नहीं कहना चाहिए कि हम यह नहीं कर सकते हैं. सकारात्मकता बच्चे के मन में सकारात्मक ऊर्जा भर देता है और यह बच्चे के मन को मजबूती देता है और बच्चे सफलता हासिल करते हैं.

यदि किसी कारणवश सपने को पूरा करने में असफलता हासिल होती है तो उन कारणों का पता लगाना चाहिए कि हमसे कहाँ चूक हो गयी ना कि निराश होकर उसे छोड़ देना चाहिए और फिर से नयी योजना और नयी ऊर्जा के साथ आगे बढ़ना चाहिए, सफलता अवश्य हमारे कदम चूमेगी.

विश्व के कुछ महान व्यक्तियों ने कहा है,

**Harriet Tubman :** हर एक महान सपने की शुरुआत एक स्वप्नद्रष्टा से होती है. हमेश याद रखना चाहिए आपके अंदर वो ताकत,धैर्य और जज्बा है की आप सितारों को छू सकें और इस दुनियाँ को बदल दें.

**Joy Page :** सपने देखिये और खुद को अपनी कल्पना में वैसा दिखने की अनुमति दीजिये, जैसा आप दिखना चाहते हैं.

**Victor Hugo :** हर एक व्यक्ति को अपनी जिंदगी ऐसी जीनी चाहिए कि भविष्य में कहीं ना कहीं उसके सपने और हकीकत मिल जाए.

**रणजीत कुमार**
स्टा.प्र.कें., भुवनेश्वर

# राजभाषा समाचार

श्री बी. श्रीनिवास राव, क्षेत्र महाप्रबंधक, बेंगलूरु व उपअंचल प्रमुख, बेंगलूरु द्वारा दि. 23.07.2020 को अंचल के समस्त क्षेत्र प्रमुखों व राजभाषा प्रभारियों के साथ समामेलन के पश्चात राजभाषा कार्यान्वयन की वर्तमान स्थिति पर ई-परिचर्चा की गई.

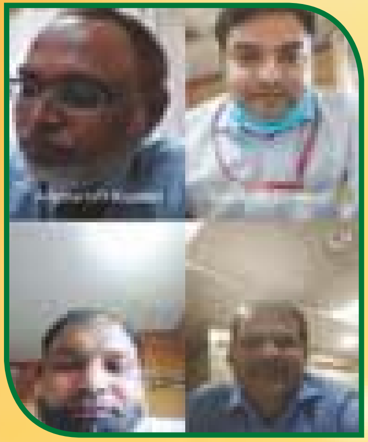

बैंक के मुख्य राजभाषा अधिकारी श्री अम्बरीष कुमार सिंह द्वारा दि. 24.07.2020 को बेंगलूरु अंचल का प्रथम राजभाषा विषयक ई-निरीक्षण किया गया, तत्पश्चात अंचल के समस्त राजभाषा अधिकारियों के साथ राजभाषा कार्यान्वयन को गति देने हेतु परिचर्चा की.

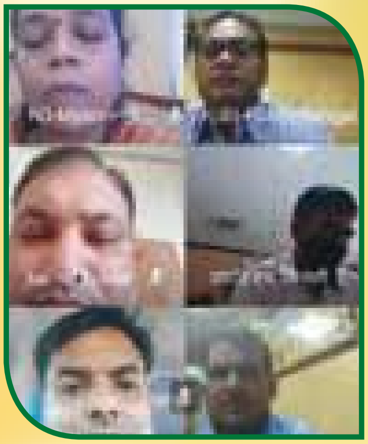

श्री बी. श्रीनिवास राव, क्षेत्र महाप्रबंधक, बेंगलूरु द्वारा दि. 28.08.2020 को अंचल के सभी नये जुड़े राजभाषा अधिकारियों के साथ राजभाषा कार्यान्वयन में आ रही समस्याओं पर ई-चर्चा की गई.

दि. 10-07-2020 को बैंक नराकास जबलपुर की छःमाही बैठक में यूनियन बैंक ऑफ इंडिया, क्षे.का., जबलपुर की गृह पत्रिका यूनियन आस्था के मार्च 20 अंक का विमोचन किया गया.

क्षे.का. दिल्ली (सेंट्रल) की गृह पत्रिका 'यूनियन महक' के पहले अंक का विमोचन करते हुए क्षेत्र प्रमुख, श्री संजीव कुमार; उप क्षेत्र प्रमुख, श्रीमती सोनालिका व अन्य कार्यपालकगण.

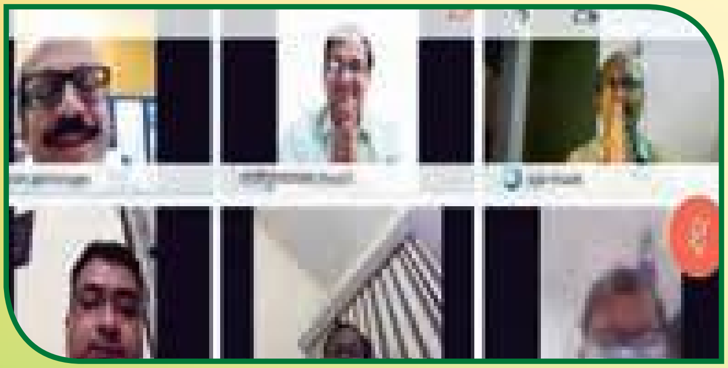

दि. 13.07.2020 को नराकास, गाजीपुर की 12वीं अर्द्ध-वार्षिक बैठक का आयोजन किया गया, बैठक की अध्यक्षता श्री रंजीत, क्षेत्र प्रमुख गाजीपुर द्वारा की गई. बैठक में मुख्य अतिथि के रूप में राजभाषा विभाग, गृह मंत्रालय, भारत सरकार के क्षेत्रीय कार्यान्वयन कार्यालय (उत्तर-2), गाजियाबाद के उप निदेशक श्री अजय मलिक एवं बैंक ऑफ़ इंडिया, प्रधान कार्यालय, मुंबई के उप महाप्रबंधक (राजभाषा), श्री शैलेश कुमार मालवीय उपस्थित रहे.

तिरुच्चिरापल्ली शाखा तथा मुद्रा तिजोरी के स्टाफ सदस्यों के लिए 23.09.2020 को आयोजित यूनिकोड पर डेस्क प्रशिक्षण

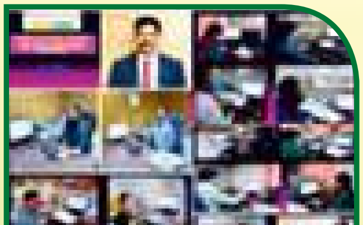

दि. 14.08.2020 को क्षे.का., हैदराबाद-सैफाबाद में आयोजित डेस्क प्रशिक्षण

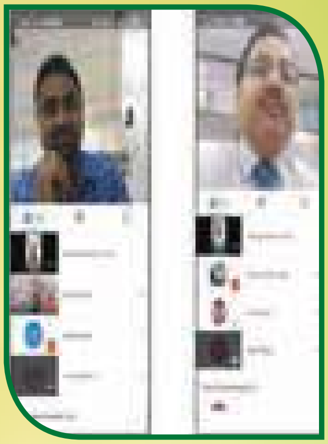

क्षे.का. गाजीपुर में एक दिवसीय हिन्दी ई-कार्यशाला का आयोजन दि. 04.09.2020 को गूगल मीट के माध्यम से किया गया. इस कार्यशाला में कुल 20 प्रतिभागियों को प्रशिक्षित किया गया. कार्यशाला का उद्घाटन क्षेत्र प्रमुख, श्री रंजीत सिंह द्वारा किया गया. कार्यशाला में श्री अखिलेश कुमार सिंह, राजभाषा प्रभारी, क्षेमप्रका, वाराणसी द्वारा अतिथि संकाय एवं श्री किशोर कुमार, राजभाषा प्रभारी द्वारा संकाय सदस्य की भूमिका निभाई गई.

दि. 29.09.2020 को क्षे.का. उडुपी एवं यूएलपी के स्टाफ सदस्यों के लिए डेस्क प्रशिक्षण का आयोजन किया गया. क्षेत्र प्रमुख, डॉ एच टी वासप्पा डेस्क प्रशिक्षण में सहभागिता देते हुए.

हिन्दी दिवस के अवसर पर दि.15.09.2020 को क्षे. का. दुर्गापुर की महिला विशेषांक पत्रिका का विमोचन सभी महिला स्टाफ सदस्यों के कर कमलों से किया गया।

दिनांक 24/06/2020 को सुश्री निधि सोनी, वरिष्ठ प्रबन्धक (राजभाषा) द्वारा नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति इंदौर द्वारा आयोजित संगोष्ठी में सहभागिता सुनिश्चित की गयी. इस अवसर पर सहायक निदेशक (गृह मंत्रालय) श्री हरीश चौहान, नराकास अध्यक्ष एवं उप महाप्रबन्धक, भारतीय स्टेट बैंक, श्री सुमित रॉय एवं नराकास सचिव, श्री आशीष भवनानी ने सहभागिता सुनिश्चित की.

दि. 21.08.2020 को बैंक नराकास, बड़ौदा की 65वीं छः माही बैठक की अध्यक्षता श्री के आर कनौजिया, महाप्रबंधक, बैंक ऑफ बड़ौदा ने की एवं डॉ सुष्मिता भट्टाचार्य, उपनिदेशक (कार्यान्वयन) ने बैठक में राजभाषा विभाग, गृह मंत्रालय की ओर से प्रतिनिधित्व किया. इस ऑनलाइन बैठक में क्षेत्र प्रमुख, श्री सत्यजीत महांती एवं राजभाषा प्रभारी, सुश्री राधा मिश्र ने भाग लिया.

क्षे. का., आगरा द्वारा 'ग्राहक सेवा' पर वर्ष 2020-21 के लिए प्रकाशित संदर्भ सामग्री का विमोचन, महाप्रबंधक, लखनऊ के श्री राजीव मिश्रा के कर कमलों द्वारा दि. 25.09.2020 को किया गया. इस अवसर पर क्षेत्र प्रमुख, आगरा श्री विकास विनीत एवं उप क्षेत्र प्रमुख, श्री पी.एन. चौधरी भी उपस्थित रहे.

क्षे.म.प्र.का., बेंगलूरु व क्षे.का., बेंगलूरु (दक्षिण) द्वारा संयुक्त रूप से आयोजित हिन्दी माह-2020 समापन समारोह के दौरान दि. 25.09.2020 को क्षेत्र को आबंटित संदर्भ साहित्य के रूप में 'ऋण अनुश्रवण' कॉमिक पुस्तक के कन्नड़ा-हिन्दी संस्करण का विमोचन क्षेत्र महाप्रबंधक, बेंगलूरु श्री बी.श्रीनिवास राव द्वारा किया गया.

दि. 03.10.2020 को क्षे. का. नासिक के सम्मेलन कक्ष में नराकास जाँच समिति का आयोजन किया गया था. जिसमें नराकास सदस्य सचिव डॉ. अनिकेत बोरकर (हिंदुस्तान ऐरोनोटिक्स लिमिटेड) एवं अन्य कार्यालय से पधारे समिति के सदस्यों ने सहभागिता दी.

# खुबानी की खूबियां

खुबानी अपनी खूबियों के लिए विश्वभर में मशहूर है. फूड लवर इसे बेहद पसंद करते हैं. खासतौर से ताजा और फ्रेश फ्रूट्स खाने वाले लोगों का यह पसंदीदा फल है. इसकी एक खास वजह यह भी है कि खुबानी का आकार जितना खूबसूरत है, उसका स्वाद उससे भी ज्यादा रसीला. खुबानी, दरअसल एक रसदार और भरपूर सुगंध से भरा फल है, जिसका उपयोग कई प्रकार के व्यंजनों में किया जाता है. आड़ू की प्रजाति का यह अद्भुत फल दिखने में छोटा होता है लेकिन इसके फायदे बड़े-बड़े होते हैं. तो आईये, खुबानी के बारे में जानते हैं !

1. खुबानी में भरपूर फाइबर होता है जो पाचन क्रिया को सुचारू रूप से चलाने में सहायक होता है. यह कब्ज जैसी पाचन संबंधी समस्या में शरीर से मल को निकालने में मदद करता है. खुबानी में क्षार सामग्री होती है जो पेट में जाते ही ज्यादा एसिडीटी को सामान्य बना देता है. एसिडीटी कम होने से डाइजेशन अच्छे से होने लगता है.
2. वजन कम करने के लिए इसके जूस की जगह साबूत फल का सेवन किया जाता है. दरअसल, इसमें मौजूद फाइबर सेटाइटी हार्मोन को रिलीज करता है, जिससे पेट को तृप्ति का एहसास होता और बार-बार खाने की इच्छा नहीं होती, वजन बढ़ने की आशंका कम हो जाती है.
3. खुबानी में पाया जानेवाला फेनोलिक नामक फाइटोकेमिकल हृदय संबंधित समस्या को दूर करने में मददगार होता है. खुबानी बेकार कोलेस्ट्रॉल को घटाता और अच्छे कोलेस्ट्रॉल को बढ़ाता है.
4. आयरन से समृद्ध होने के कारण और भरपूर मात्रा में पाये जानेवाले फोलेट की वजह से एनीमिया को दूर करने के लिए खुबानी को लाभकारी माना जाता है.
5. खुबानी में प्रचुर मात्रा में विटामिन 'के' पाया जाता है, जिसका सेवन करने से शरीर में प्लेटलेट की संख्या बढ़ जाती है. चोट लगने पर खून का बहाव ज्यादा नहीं होता है.
6. खुबानी की गिनती लो-ग्लाइसेमिक इंडेक्स वाले फलों में होती है, जिसके सेवन से रक्त में शुगर की अधिकता नहीं होती है.
7. खुबानी का एंटी-इंफ्लेमेटरी गुण सूजन तथा उसके बीज के अंदर का खाद्य हिस्सा पेट की सूजन को कम करता है.
8. खुबानी में पोटेशियम, मैग्नीशियम और फाइबर जैसे पोषक तत्व होते हैं जो रक्तचाप नियंत्रण में अहम भूमिका निभाते हैं.
9. खुबानी में हेपाटोप्रोटेक्टिव गुण होता है, जो लीवर को डैमेज होने से बचाता है.
10. खुबानी में लाइकोपीन कैरोटीनॉयड कंपाउंड होता है, जो अपने शक्तिशाली एंटीऑक्सीडेंट प्रभाव के कारण अस्थमा की समस्या को कुछ हद तक नियंत्रित करने में मददगार होता है.
11. खुबानी में पोटेशियम और मैग्नीशियम दोनों पोषक तत्वों की अच्छी मात्रा पाई जाती है . अतः बेहतर स्वास्थ्य के साथ हड्डियों की मजबूती के लिए खुबानी का सेवन किया जाता है. खुबानी और सूखी खुबानी कैल्शियम और फास्फोरस युक्त होती है, जो हड्डियों के लिए जरूरी है.
12. खुबानी में एंटी-एजिंग गुण होता है, जो त्वचा को समय से पहले बूढ़ा होने से रोकने में मददगार होता है. साथ ही इसमें मौजूद एंटीऑक्सीडेंट स्किन इंफ्लेमेशन यानी सूजन को कम करता है .
13. ताजा खुबानी के बीज के अंदर के खाद्य हिस्सा यानी कर्नल कैंसर से बचाव कर सकते हैं. इसे प्राकृतिक एंटी-कैंसर एजेंट माना जाता है.

**खुबानी से नुकसान –** काफी लोगों को खुबानी का सेवन करने पर एलर्जी की समस्या हो सकती है. खुबानी के सेवन से बच्चों को विषाक्तता हो सकती है. सूखी खुबानी को अच्छे से चबाकर ही खाएं, वरना यह गैस्ट्रोइंटेस्टाइनल समस्या पैदा कर सकती है. खुबानी के बीज के अंदर गिरी का सेवन हृदय की समस्या का कारण बन सकता है. ड्राई खुबानी में जहरीले पदार्थ सल्फाइड की ज्यादा मात्रा पाई जाती है जिसका स्वास्थ्य पर गंभीर और बुरा असर पड़ता है. अतः ड्राई खुबानी का ज्यादा सेवन करने से बचना चाहिए. दमा और डायबिटीज से पीड़ित लोगों को ड्राई खुबानी का सेवन करने से मना किया गया है. खुबानी का अधिक मात्रा में सेवन निम्न रक्तचाप से संबंधित व्यक्तियों पर नकारात्मक प्रभाव डाल सकता है.

अंत में यही कहना है कि खुबानी कई औषधीय गुणों से समृद्ध एक स्वादिष्ट फल है, जिसे जीवनशैली का हिस्सा बनाकर स्वस्थ रहा जा सकता है.

सुप्रिया नाडकर्णी
केन्द्रीय कार्यालय, मुंबई

# आपकी पाती

यूनियन बैंक ऑफ इंडिया की तिमाही हिंदी पत्रिका 'यूनियन सृजन' के संपादक मंडल के सफल सार्थक प्रयासों की परिणति के रूप में पत्रिका के अप्रैल-जून 2020 अवधि के ई-अंक को प्राप्त कर और पढ़कर बेहद खुशी हुई. इस ई-अंक के साथ पत्रिका निश्चित रूप से भारत सरकार की राजभाषा नीति के तहत इंटरनेट पर हिंदी की स्तरीय पाठ्य सामग्री की उपलब्धता को बढ़ाने का कार्य कर रही है. समग्र संपादक मंडल को इस अंक के सफल प्रकाशन हेतु हार्दिक बधाई और भविष्य के लिए शुभकामनाएं.

**– शैलेंद्र कुमार पाण्डेय**

हिंदी अधिकारी, दीनदयाल पोर्ट ट्रस्ट एवं
सदस्य सचिव, नराकास कांडला-गांधीधाम
(गुजरात)

यूनियन बैंक ऑफ इंडिया की गृह पत्रिका 'यूनियन सृजन' के जनवरी – मार्च 20 अंक की प्राप्ति हुई, आभार. बैंकों में हिंदी के प्रचार – प्रसार में, बैंककर्मियों में हिंदी के प्रति रुचि पैदा करने में और हिंदी लेखन को प्रोत्साहित करने में बैंकों द्वारा समय – समय पर प्रकाशित गृह पत्रिकाओं की महत्वपूर्ण भूमिका होती है. यूनियन सृजन का यह अंक अपनी इस भूमिका को प्रभावी ढंग से निभा रहा है. इस अंक की सुंदर साज – सज्जा पाठक को आकर्षित करती है. इस अंक के विश्व हिंदी दिवस, पर्यावरण संरक्षण, नारी सशक्तिकरण और अन्य विषयों पर लिखे गए आलेख पाठक को सामयिक ज्ञान देने के साथ – साथ लेखकों के लेखन कौशल का परिचय देते हैं. 'मुश्किलें झेलें, दुनिया जीतें' आलेख पाठकों को सकारात्मक ऊर्जा से भर देता है तो यात्रा संस्मरण वाले आलेख पाठक को देश भ्रमण कराते हैं. बैंक के कार्यकलापों की सचित्र जानकारी देने वाले इस बहुरंगी और बहुआयामी ज्ञानवर्धक अनूठे अंक के प्रकाशन के लिए पत्रिका का संपादक मंडल और आलेखकार / रचनाकार बधाई के पात्र हैं.

**– डॉ. जयकरण हीरेकर**

प्रबंधक (राजभाषा), भारतीय स्टेट बैंक,
प्रशासनिक कार्यालय, विजयवाड़ा,
आंध्रप्रदेश

यूनियन सृजन अंक अप्रैल-जून 2020 प्राप्त हुआ. भारतीय संस्कृति के प्रमुख सांस्कृतिक त्योहार 'होली' की धार्मिक छटा को बिखेरता मुखपृष्ठ संग्रहणीय है. सुश्री शर्मिला कटारिया का आलेख 'होली का त्योहार'; श्री राजेश कुमार का आलेख 'प्रेम और रंगों का त्योहार' तथा श्री सुमित शर्मा का आलेख 'केवलादेव राष्ट्रीय उद्यान'अत्यंत प्रशंसनीय है. सुश्री दीपाली श्रीवास्तव ने अपने आलेख 'होली की किंवदंतियां व लोककथाएँ' में सशक्त रचनात्मक कौशल का परिचय दिया है. आशा है कि 'यूनियन सृजन' के आगामी अंक में उनसे किसी अन्य भारतीय त्योहार से संबंधित लोककथाओं को पढ़ने को मिलेगा. राजभाषा से संबंधित काफी कम पत्रिकाओं में लोक कथाओं को पढ़ने का सुअवसर मिलता है. यूनियन सृजन में कथ्य और फोटोग्राफ का समन्वय किसी भी पत्रिका के संपादक के लिए अनुकरणीय है. यह सर्वथा सत्य है कि 'यूनियन सृजन' ने प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष रूप से अनेक पत्रिकाओं के संपादकों का मार्ग प्रशस्त किया है. निश्चित रूप से पत्रिका का आगामी अंक नए विषयों एवं नए चिंतन के साथ प्रकाशित होगा. शुभकामनाओं सहित,

**– डॉ. राजनारायण अवस्थी**

वरिष्ठ अधिकारी (राजभाषा) एवं प्रभारी, राजभाषा अनुभाग
इलेक्ट्रॉनिक्स कॉर्पोरेशन ऑफ इंडिया लिमिटेड
(ईसीआईएल)

'यूनियन सृजन' का दूसरा अंक सहर्ष प्राप्त हुआ. 'यूनियन सृजन' के इस 'होली विशेषांक' में होली से संबंधित पहलुओं को परिलक्षित कर हर पहलू से संबंधित आलेखों से ओत-प्रोत यह अंक तैयार किया गया है. संपूर्ण पत्रिका हिंदी में प्रकाशित किया जाना राजभाषा नीति का पूर्ण अनुपालन दर्शाता है.

पत्रिका का आवरण पृष्ठ इसके नामकरण को सार्थकता प्रदान करता है. विभिन्न आलेख-होली की संस्कृति, हिंदी साहित्य में होली आदि उत्कृष्ट लेख हैं.

पत्रिका में समस्त लेखों का चयन स्वयं में श्रम साध्य कार्य है, फिर भी इस रोचक, सूचनाप्रद लेखों के लिए मैं संपादक मंडल को हार्दिक शुभकामनाएं देता हूँ.

इस कोविड नामक महामारी के दौरान इस अत्यंत उपयोगी व परिमार्जित पत्रिका के प्रकाशन के लिए संपादक मंडल सहित यूनियन बैंक को हार्दिक बधाई देता हूँ और आशा करता हूँ कि यह पत्रिका अंक दर अंक इसी तरह से उपयोगी लेख व अन्य सामग्री प्रकाशित करती रहे.

**– सर्वेश कुमार रस्तोगी**

उप महाप्रबंधक, बैंक ऑफ बड़ौदा
अंचल कार्यालय, बेंगलूरु

RNI No. MAH HIN/2016/68433

नि:शुल्क वितरण हेतु

छायाचित्र – धीरज रजक
के. का. मुंबई